लड़की को मजबूर करके शादी कर देने का शरअ़ी आदेश

''अर्थात निकाह के सिलसिले में औरतों की रज़ामन्दी के अधिकार, ज़बरदस्ती निकाह कर देने के सिलसिले में आदेश, औरत की पसन्द के बिना निकाह के बाद पैदा होने वाली समस्याएं, और अभिभावकों की राय का महत्व जैसे मामलों पर इस्लामिक फिक़्ह अकेडमी (इंडिया) के बारहवें सेहमनार में प्रस्तुत महत्वपूर्ण लेखों और पारित प्रस्तावों और फ़ैसलों का संग्रह''

प्रकाशक

ईफ़ा पब्लिकेशन्ज़ नई दिल्ली

© सर्वाधिकार प्रकाशक के पक्ष में सुरक्षित

पुस्तक का नाम : लड़की के मजबूर करके शादी कर देने का शरअ़ी आदेश

पृष्ठों की संख्या : 270

प्रकाशन वर्ष : फ़रवरी 2011

मूल्य : 110

प्रकाशक

ईफ़ा पब्लिकेशन्ज़

161-एफ़, बेस्मेन्ट जोगा बाई, पोस्ट बाकस न0: 9708

जामिया नगर, नई दिल्ली-25

फ़ोन न0: 011-26981327

E-mail: ifapublications@gmail.com

मज़्लिसे इदारत

1– मौलाना मुफ़्ती ज़पफ़ीरुद्दीन मिफ़्ताही

2– मौलाना मुहम्मद बुरहानुद्दीन संभली

3– मौलाना बदरुल हसन क़ासमी

4– मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

5– मौलाना अतीक़ अहमद बस्तवी

6– मुफ़्ती मुहम्मद उबैदुल्लाह असअदी

بسم الله الرحمن الرحيم

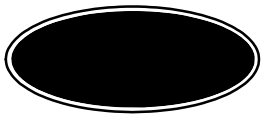

लड़की को मजबूर करके शादी कर देने का शरअ़ी आदेश

प्रस्तावना:	मौलाना खालिद सैफुल्लाह रहमानी	10
प्रश्नावली:		13
फ़ैसले:		17
समस्या की प्रस्तुति:	मौलाना मुहम्मद उबैदुल्लाह अस्अदी	19

महत्वपूर्ण लेख:

1–	मौलाना मु0 बुरहानुद्दीन संभली	36
2–	मौलाना ज़ुबैर अहमद क़ासमी	39
3–	मुफ़्ती नसीम अहमद क़ासमी	44
4–	मौलाना क़ाज़ी अब्दुल जलील क़ासमी	52
5–	मुफ़्ती अनवर अली आज़मी	59
6–	मौलाना अख़्तर इमाम आदिल	62
7–	मुफ़्ती महबूब अली वजीही	74
8–	डॉ0 मरवान मु0 महरूस	76
9–	मुफ़्ती मुहम्मद सदर आलम क़ासमी	102
10–	मौलाना ख़ुर्शीद अनवर आज़मी	104
11–	मौलाना मु0 ज़फ़र आलम नदवी	113

12– मौलाना अबू-सुफ़ियान मिफ़्ताही 116
13– मौलाना ज़फ़रुल-इस्लाम आज़मी 119
14– मौलाना सैयद असरारुलहक़ सबीली 122
15– डॉ. अब्दुल्लाह जोलम 135
16– डॉ. अब्दुल अज़ीम इस्लाही 138
17– मुफ़्ती अहमद नादिर क़ासमी 141
18– मौलाना अब्दुल अहद तारापुरी 161
19– मुफ़्ती मु0 अब्दुर्रहीम क़ासमी 163
20– मौलाना मु0 अबू-बक्र क़ासमी 165
21– मौलाना मु0 इक़बाल क़ासमी 170
22– मुफ़्ती अब्दुर्रहीम बारहमूला कशमीर 183
23– मौलाना अबुलआस वहीदी 196
24– मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान बिजनौरी 201
25– मौलाना मुहम्मद अंज़ार आलम क़ासमी 204
26– मौलाना ऐजाज़ अहमद क़ासमी 216
27– मौलाना ख़ुर्शीद अहमद आज़मी 219
28– मौलाना बहाउद्दीन नदवी 221
29– शैख़ अब्दुल क़ादिर अब्दुल्लाह अलक़ादरी 225
30– मौलाना नियाज़ अहमद अब्दुल हमीद तैयबपुरी 228
31– मौलाना मुहम्मद आज़मी 231
32– मौलाना सुलतान अहमद इस्लाही 235
33– क़ाज़ी मुहम्मद कामिल क़ासमी 237

34– डॉ. सैयद क़ुदरतुल्लाह बाक़वी 251
35– मुफ़्ती शेर अली गुजराती 253
36– मौलाना मु0 याक़ूब क़ासमी 255
37– मौलाना शम्स पीरज़ादा 259

☆☆☆

प्रस्तावना

शरीअत (इस्लामी क़ानून) की बुनियाद न्याय और इन्साफ़ है। ''बेशक अल्लाह न्याय और एहसान का हुक्म देता है'' (सूरः नह्ल:90)। उसने सभी वर्गों के इन्सानों को इन्साफ़ दिया है और दुनिया के विभिन्न धर्मों और जीवन व्यवस्थाओं में जो अन्याय व नाइन्साफ़ियाँ रखी गई थीं, उनको दूर किया है। जिस तरह बाप का स्नेह व प्यार और माँ की ममता अपने बच्चों में से उस की तरफ़ अधिक झुकी रहती है जो किसी पहलू से कमज़ोर हो, उसी तरह इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) यूँ तो पूरी दुनिया के लिए रहमत थे, लेकिन उस समय दो तबक़े के लोग जो सबसे अधिक पीड़ित थे: औरतें और ग़ुलाम, उन पर आपकी दया की दृष्टि अधिक थी। आप (सल्ल०) ने ज़िन्दगी के आख़िरी समय तक उनके बारे में अच्छे व्यवहार की हिदायत की।

इस्लाम से पहले औरत के बारे में यह माना जाता था कि वह भी एक पूँजी या चीज़ है। जो चीज़ स्वयं पूँजी हो उसमें मालिक बनने की सलाहियत (योग्यता) नहीं होती, यहां तक कि वह अपने आप की भी मालिक नहीं होती। इसीलिए एक तरफ़ औरत को विरासत से वंचित किया गया और दूसरी तरफ़ शादी से पहले उसे बाप की, और शादी के बाद पति की मिल्कियत समझा गया। न तो उसे अपने माल में कोई अधिकार था और न ही वह अपने बारे में आज़ाद थी। उसके वली (अभिभावक) उसकी सहमति के बिना उसका निकाह कर देते थे। 'मह्र' जो औरत का अधिकार है उस पर

भी स्वंय अपना अधिकार जमा लिया करते थे।

इस्लाम ने औरत को सम्मान और आदर का स्थान दिया और बताया कि वह अपने बारे में स्वयं फ़ैसला करने का अधिकार रखती है। उसके वली (अभिभावक) उसपर कोई रिश्ता थोप नहीं सकते और अपनी इच्छा को उसपर बल पूर्वक थोपने का अधिकार नहीं रखते। हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की हदीसों में इस हक़ीक़त को खोलकर बयान किया गया है। दूसरी तरफ़ लड़कियों को इस बात की तलक़ीन भी की गई कि अपने वली (अभिभावक) की राय मानना उनके लिए आवश्यक नहीं, लेकिन उसको अहमियत दें और उनकी राय पर ध्यान देने की कोशिश करें। क्योंकि उनकी राय अनुभव और भलाई पर आधारित होती है।

पश्चिमी देशों में रहने वाले मुसलमानों की तरफ़ से यह समस्या सामने आई कि वहां इस सिलसिले में एक तरह का असन्तुलन पाया जाता है। एक तरफ़ वली (अभिभावक) की तरफ़ से लड़कियों पर रिश्ते के लिए दबाव डाला जाता है, जिसका नतीजा यह है कि बाद में दाम्पत्य सम्बन्धों में दराड़ पैदा होती है और तलाक़ व खुलअ् तक नौबत आ जाती है। दूसरी तरफ़ पश्चिमी तहज़ीब के असर से लड़कों और लड़कियों में अभिभावकों की राय को महत्व न देने का रुझान बढ़ता जा रहा है और कभी-कभी नौजवान लड़के और लड़कियों के भावुक फ़ैसले आगे चलकर स्वयं उनके लिए परेशानी का कारण बन जाते हैं।

इसी पृष्ठभूमि में इस्लामिक फिक़्ह अकेडमी के तेरहवें सेमिनार (13-16 अप्रैल 2001 ई०) जामिया सैयद अहमद शहीद, कटौली में 'जबरी निकाह' का विषय भी शामिल था। सेमिनार में जो अहम लेख उलमा की

तरफ़ से आये और सर्वसम्मति से जो फ़ैसला हुआ उनका संकलन इस समय आपके सामने पेश है। जो ख़ानदानी ज़िन्दगी के एक अहम पहलू को समझने में मदद करेगा और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता (Individual Freedom) के सिलसिले में इस्लाम की रौशन तालीमात (शिक्षाओं) की तस्वीर भी लोगों के सामने आ सकेगी। इस अवसर पर मुझे संघ परिवार के वरिष्ठ नेता और पूर्व प्रधानमंत्री जनाब अटल बिहारी वाजपेयी की बात याद आती है जिसे उर्दू के अलावा अंग्रेज़ी अख़बारों ने महत्वपूर्ण जगहों पर छापा था कि- ''मुझे इस्लाम की यह बात बहुत अच्छी लगती है कि लड़की से इजाज़त (आज्ञा) लिये बिना उसका निकाह नहीं किया जा सकता।'' अफ़सोस कि न हमारे देश के भाईयों ने ठंडे दिल से इस्लामी शिक्षाओं को समझने की कोशिश की और न हम मुसलमानों ने उन तक इस अमानत को पहुँचाने की ही गम्भीर कोशिश की है। अन्यथा इस्लामी शिक्षाएँ प्राकृतिक नियमों के अनुकूल हैं। विवेक और परिक्षण (मुशाहिदा) के मुताबिक़ और इन्सानी ज़िन्दगी की ज़रूरत को पूरा करने की योग्यता की दृष्टि से, न सिर्फ़ मुस्लिम समुदाय, बल्कि पूरी इन्सानियत की भलाई की कुंजी है। इससे न केवल आख़िरत (परलोक) की कामयाबी जुड़ी है, बल्कि यह दुनिया में शान्ति और संतोष स्थापित करने का माध्यम भी है।

दुआ है कि अल्लाह तआला इस्लामी फ़िक़्ह अकेडमी (इंडिया) के संस्थापक हज़रत मौलाना क़ाज़ी मुजाहिदुल-इस्लाम क़ासमी (रह०) को अच्छा बदला दे, अकेडमी को स्थायित्व प्रदान करे, और अकेडमी की यह प्रस्तुति जनता और उसके मालिक अल्लाह के लिए क़ाबिले क़ुबूल हो। अल्लाह ही मदद करने वाला है।

ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

(महासचिव इस्लामिक फ़िक़्ह अकेडमी, इंडिया)

ब्रिटिश मुसलमानों का एक सवाल

आपकी सेवा में ब्रिटेन और कुछ पश्चिमी देशों के मुस्लिम समाज की कुछ कठिनाइयों और समस्याओं का इस्लामी हल पूछने के लिए ये सवाल भेजे जा रहे हैं। उम्मीद है कि आप हालात की नज़ाकत और पेचीदगी को सामने रखते हुए क़ुरआन व सुन्नत, शरीअत के उद्देश्यों और इस्लामी शरीअत की समझ-बूझ रखने वाले फ़िक़्ह के माहिर लोगों की राय की रौशनी में ऐसा हल बताएँगे जो क़ाबिले अमल होगा।

आपको यह बात मालूम होगी कि ब्रिटेन और दूसरे पश्चिमी देशों और अमेरिका में एशिया और अफ़्रीक़ा से गए हुए मुसलमानों की बहुत बड़ी संख्या आबाद है। और यह आबादी तेज़ी के साथ बढ़ रही है। बहुत-से ख़ानदान ऐसे भी हैं जो दो-तीन पीढ़ियों से इन देशों में आबाद हैं, जिन मुसलमान बच्चों का जन्म, पालन-पोषण, तालीम व तरबियत इन्हीं पश्चिमी देशों में हुई, उन्हें उन देशों से ज्यादा लगाव और दिलचस्पी नहीं होती जहाँ से उनका ख़ानदान प्रवास करके पश्चिमी देशों में आबाद हुआ है। पश्चिमी देशों में पलने और बढ़ने वाले मुसलमान बच्चे और बच्चियों की जीवन शैली बड़ी हद तक पश्चिमी साँचे में ढल चुकी होती है। इन देशों के मुसलमान लड़के और लड़कियों में यह रुझान तेज़ी से बढ़ता जा रहा है कि उनका रिश्ता उन्हीं देशों में पैदा होने वाले, तालीम व तरबियत पाने वाले मुसलमान लड़के और लड़कियों से कराया जाये।

दूसरी तरफ़ कभी-कभी माँ-बाप की इच्छा और कोशिश यह होती है कि उनके बच्चों के रिश्ते अपने ख़ानदान में किये जाएँ, अर्थात हिन्दुस्तान या पाकिस्तान से ब्रिटेन प्रवास करने वाले माँ-बाप यह चाहते हैं कि अपनी बहू या दामाद हिन्द व पाक में आबाद अपने ख़ानदान से हासिल करें।

माँ-बाप और उनके बच्चों के बीच यह खींच-तान कभी कभी नापसन्दीदा रूप ले लेती है। ख़ास तौर पर लड़कियों के मामले में। ब्रिटेन में स्थापित शरअ़ी पंचायतों और शरअ़ी कौंसिलों के सामने ऐसे बहुत-से मामले आते रहते हैं कि समझदार और बालिग़ लड़की के माँ-बाप या भाई आदि लड़की को अपना पुश्तैनी वतन दिखाने या सैर व सपाटे के बहाने हिन्दुस्तान या पाकिस्तान ले जाते हैं और लड़की का निकाह अपने किसी रिश्तेदार या क़रीबी से करने की कोशिश करते हैं। लड़की किसी तरह उस निकाह पर राज़ी नहीं होती और साफ़ कह देती है कि हम इस नौजवान के साथ किसी तरह ज़िन्दगी नहीं गुज़ार सकते। इसके बावजूद अभिभावक उसे निकाह करने पर मजबूर करते हैं, तरह-तरह दबाव डालते हैं, यह धमकी देते हैं कि अगर तुमने इस आदमी से निकाह नहीं किया तो तुम्हारा पासपोर्ट जला देंगे, और तुम्हें ब्रिटेन की नागरिकता से महरूम करके यहीं सड़ा देंगे। मजबूर और बेबस लड़की इस तरह की धमकियों और ज़ोर-ज़बरदस्ती से मजबूर होकर निकाह पर सहमत हो जाती हैं, हालाँकि वह दिल से इस पर किसी तरह आमादा नहीं थी। इस दबाव के निकाह का एक बड़ा मक़सद उस नौजवान को ब्रिटेन की नागरिकता दिलाना और वहाँ बसाना होता है जिसके साथ निकाह करने पर लड़की को मजबूर किया गया।

इस तरह की लड़कियाँ ब्रिटेन वापस जाने के बाद उन नौजवानों को

शौहर (पति) मानने से और उनके साथ पारिवारिक जीवन बिताने से इनकार कर देती हैं। उनमें जो दीनदार होती हैं, अल्लाह का डर रखती हैं, वे शरअ़ी हुक्म मालूम करने और निकाह फ़स्ख़ (तोड़ने) कराने के लिए शरअ़ी कौंसिलों की तरफ़ रुख़ करती हैं।

इस तरह की घटनाएँ इतनी तेज़ी से होने लगी हैं कि ब्रिटिश सरकार ने इस पर रिपोर्ट तैयार करवाई और उन घटनाओं का सख़्त नोटिस लिया। मीडिया में ऐसी घटनाओं के आने से मुसलमानों और इस्लाम की तस्वीर भी ख़राब हुई। नारी स्वतन्त्रता और मानवाधिकार संगठनों को यह कहने का अवसर मिला कि इस्लाम में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता (Personal Freedom) और औरतों के अधिकार इस हद तक दबाये गये हैं कि समझदार और बालिग़, शिक्षित, लड़की को दबाव डाल कर किसी अनचाहे व्यक्ति के निकाह में रहने पर मजबूर किया जाता है।

यह बिन्दू (Point) भी ध्यान में रहना चाहिए कि शरीअत ने वली (अभिभावक) को बच्चों और बच्चियों के मामले में दख़ल का जो भी अधिकार दिया है, उसका आधार उनका स्नेह, उनकी भलाई और उनके हितों की रक्षा है। अत: अभिभावक होने के कारण उन्हें दखल देने का अधिकार होना चाहिए।

हिन्दुस्तान में भी अब इस तरह की घटनाएँ लगातार होने लगी हैं जिनमें ज़बरदस्ती निकाह कर दिया जाता है।

इस पृष्ठभूमि (Back ground) में आप निम्नलिखित सवालों के जवाब कुछ विस्तार से लिख भेजें:

1. समझदार और बालिग़ लड़की के निकाह में शरीअत ने उसकी

सहमति को बहुत अहमियत दी है, जैसा की नबी (सल्ल०) की हदीसों से स्पष्ट है। क्या यह बात रज़ामन्दी में शामिल होगी जबकि लड़की को डरा-धमका कर या मार-पीट कर या पासपोर्ट जला देने की धमकी देकर उससे निकाह के लिए हां करा ली गयी हो, जबकि दिल से वह इस निकाह पर राज़ी नहीं है?

2. मुकरह (ज़बरदस्ती) का निकाह शरीअत के अनुसार स्थापित हो जाता है या नहीं? क्या इस सिलसिले मे इकराह मलजी (जिसको धमकी में जान-माल और अंग-भंग का ख़तरा हो?) और इकराह ग़ैर-मलजी (जिसको धमकी में जान-माल और अंग-भंग करने की धमकी न दी जाए) के बीच कोई अन्तर है?

3. क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के सामने अगर इस तरह का मामला आता है और क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को दोनों पक्षों के बयान के बाद इस बात का विश्वास हो जाता है कि दबाव से मजबूर होकर लड़की ने सहमति व्यक्त की थी और लड़की किसी तरह उस पति के साथ रहने पर सहमत न हो तो क्या शरअ़ी कौंसिल या क़ाज़ी उस निकाह को निरस्त कर सकते हैं?

4. ऊपर जिस तरह के निकाह का उल्लेख (ज़िक्र) किया गया, उसके बाद कभी तो ऐसा होता है कि दोनों के बीच दाम्पत्य सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं और कभी इसकी नौबत नहीं आती। दोनों परिस्थितियों का आदेश एक- जैसा है या अलग-अलग दोनों लिखकर भेजें।

☆☆☆

फ़ैसले

ब्रिटेन और कुछ दूसरे पश्चिमी देशों की सामाजिक परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में अभिभावाकों की तरफ़ से लड़कियों को निकाह के लिए मजबूर किये जाने की घटनाओं पर इस्लामिक फिक्ह अकेडमी (इंडिया) के तेरहवें सेमिनार, जो जामिया सैयद अहमद शहीद कटौली, मलीहाबाद में आयोजित किया गया, उसमें विचार किया गया और निम्नलिखित फ़ैसले किये गये:

1. लड़का या लड़की जब बालिग़ (वयस्क) हो जायें तो शरीअत ने उन्हें अपने आपके बारे में स्वयं फ़ैसला करने और निकाह के सिलसिले में रिश्ते के चुनाव का अधिकार दिया है। यह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता (Personal Freedom) इस्लाम की विशेषताओं में से एक है। बल्कि आज पश्चिमी देशों व पूरब की बहुत-सी क़ौमों ने औरतों को जो अधिकार दिये हैं, वे इन्हीं इस्लामी शिक्षाओं से प्रभावित होने का परिणाम हैं।

2. अभिभावकों की तरफ़ से बालिग़ लड़की या लड़के को उनकी इच्छा और उनकी सहमति के बिना किसी रिश्ते पर मजबूर करना बिल्कुल वैध (जायज़) नहीं। इसलिए अभिभावक का अपनी पसन्द पर ज़ोर देने, और उस पर मजबूर करने के लिए तरह-तरह की धमकियाँ देना, इस्लाम के दिये हुए अधिकारों से वंचित (महरूम) करने की नापसन्दीदा कोशिश है जो किसी तरह ठीक नहीं है।

3. लड़कों और लड़कियों को भी चाहिए कि अपने अभिभावकों के

द्वारा चुने गये रिश्ते को प्राथमिकता (तरजीह) दें, क्योंकि उनका स्नेह, प्यार और भलाई की चाह और अनुभव के कारण आम तौर से यही आशा की जाती है कि उन्होंने उनके लिए रिश्ते का चुनाव करते समय उनकी भलाई का पूरा-पूरा ध्यान रखा होगा।

4. निकाह के स्थापित होने या न होने का सम्बन्ध निकाह के समय सहमति व्यक्त करने से है। अत: अगर बालिग़ (वयस्क) लड़की या लड़के ने निकाह के समय सहमति व्यक्त कर दी तो निकाह स्थापित हो जायेगा।

5. अगर क़ाज़ी शरअ़ी और इन्साफ़ के लिए काम करने वाली संस्थाओं के ज़िम्मेदारों के सामने यह बात जाँच के बाद सिद्ध हो जाए कि अभिभावकों (औलिया) ने बालिग़ (वयस्क) लड़की के निकाह के सिलसिले में दबाव से काम ली है, और उसको मजबूर करके निकाह के समय हाँ करा लिया है; और लड़की रिश्ता हो जाने के बाद इस रिश्ते को जारी रखने के लिए किसी तरह तैयार नहीं है; और निकाह तोड़ने की मांग करती है; और (पति) शौहर न तो स्वयं उसे अलग करता है; और न ही तलाक़ और खुलअ् के लिए आमादा है तो क़ाज़ी शरअ़ी को अन्याय मिटाने के उद्देश्य से निकाह तोड़ देने का अधिकार प्राप्त हो जाएगा।

☆☆☆

समस्या प्रस्तुति ज़बरदस्ती की शादी

मौलाना उबैदुल्लाह असअदी
सेमिनार सचिव, इस्लामिक फिक्ह अकेडमी (इंडिया)
एवं हदीस के उस्ताद, जामिया अरबिया हथौरा, बाँदा (यू पी)

इस्लामिक फ़िक़्ह अकेडमी (भारत) ने अपने तेरहवें फ़िक़्ही सेमिनार का एक विषय जबरी शादी रखा है। इससे सम्बन्धित समस्या प्रस्तुति, और संक्षेप व विश्लेषण और आंकलन प्रस्तुत करने का दायित्व इस लेखक को दिया गया है।

मौलिक रूप से इस समस्या का सम्बन्ध ''विलायत व किफ़ाअत (अभिभावकत्व व बराबरी)'' के विषय से है और इन दोनों मामलों के सिलसिले में अकेडमी की तरफ से सेमिनार हो चुका है और प्रस्ताव भी आ चुके हैं। इसके बाद ब्रिटेन आदि के हालात की पृष्ठभूमि में वहाँ रहने बसने वाले चिन्तित उलमा की माँग पर इस विषय को अपनाया गया है। पहले तो आप इससे सम्बन्धित प्राप्त लेखों का निचोड़ पढ़ें और इसके बाद इस लेखक का आंकलन व विश्लेषण आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

इस विषय पर प्रेषित प्रश्नावली के उत्तर में अकेडमी को कुल 33 लेख इस समस्या या प्रस्तुति के प्रस्ताव व लिखे जाने तक प्राप्त हुए जिनमें अधिक तर तो संक्षिप्त हैं और कुछ विस्तार में हैं। उत्तर देने वालों में अकेडमी के स्थायी सहयोगी और अन्य महत्वपूर्ण उलमा निम्न हैं: मुफ़्ती

अज़ीज़ुर्रहमान बिजनौरी, मौ0 बुरहानुद्दीन संभली, मौ0 ज़फर आलम नदवी, मौ0 असरारुल हक़ सबीली, मौ0 अबू सुफियान मिफ़्ताही, मौ0 कुदरतुल्लाह बाकवी, मौ0 इक़बाल अहमद क़ासमी, मौ0 अबुल आस वहीदी, मौ0 अब्दुल अज़ीम इस्लाही।

उत्तरों का तरीक़ा यह है कि कुछ लोगों ने संक्षिप्त उत्तर को पर्याप्त समझा है और प्रत्येक धारा का उत्तर नहीं दिया है और न उनके लेख से इस का तर्क देना संभव है, और कुछ लोगों ने प्रत्येक धारा का स्पष्ट और विस्तार पूर्वक उत्तर दिया है, निचोड़ (सार) में यह कोशिश की गयी है कि कोई राय छूटने न पाये और न किसी विचार को तर्क द्वारा प्राप्त करने में ग़लती हो, परन्तु पूरी तरह त्रुटि रहित होने का दावा नहीं किया जा सकता।

पहला प्रश्नः

निकाह से पहले बल पूर्वक लड़की से ''हाँ'' कराना, क्या अनुमति में गिना जायेगा?

मौ0 ज़फ़र आलम नदवी, मौ0 इक़बाल क़ासमी और मौ0 नईम अख़्तर साहब का कहना है कि इसको अनुमति समझा जायेगा और अधिकतर लोगों का विचार है कि नहीं।

दूसरा प्रश्नः

निकाह के समय बल पूर्वक ''हाँ'' कराना क्या निकाह की स्वीकृति है और निकाह हो जायेगा?

मौ0 बुरहानुद्दीन संभली, मौ0 असरारुल हक सबीली, मौ0 ज़फ़र आलम नदवी, मौ0 मुहम्मद ज़फ़र, मौ0 नईम अख़्तर, मौ0 इक़बाल क़ासमी, मौ0 मुस्तफ़ा क़ासमी, मौ0 नियाज़ अहमद का विचार है कि निकाह हो जायेगा,

जबकि मौ0 अज़ीज़ुर्रहमान बिजनौरी, मौ0 अबुल आस वहीदी, मौ0 अबू सुफ़ियान मिफ़्ताही, मौ0 कुदरतुल्लाह बाकवी और मौ0 मुहम्मद आज़मी का विचार है कि नहीं होगा।

कुछ लोगों ने यह अन्तर किया है कि यदि बल पूर्वक हस्ताक्षर कराए गए हैं और मौखिक रूप से हां नहीं कही तो नहीं होगा, अन्यथा हो जायेगा।

तीसरा प्रश्नः

ब्रिटेन और भारतीय उपमहाद्वीप का सामाजिक अन्तर क्या किफ़ाअत (बराबरी) के अन्तर्गत आता है?

इसके अन्तर्गत विस्तार पूर्वक उत्तर देने वाले इस बात पर सहमत हैं कि किफ़ाअत के सम्बन्ध में इस पर भरोसा नहीं किया जायेगा और लड़की को कोई अधिकार नहीं, हाँ मौ0 ज़फ़र आलम नदवी ने कहा है कि खुलअ़ कर ले।

चौथा प्रश्नः

उपर्युक्त स्थिति में अलगाव के लिए शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने और न होने में अन्तर?

इस के अन्तर्गत विभिन्न मत हैं:

1- प्रत्येक स्थिति में अधिकार है (मौ0 असरारुल हक़ सबीली, मौ0 इक़बाल अहमद क़ासमी, हाँ, इक़बाल साहब कहते हैं कि यदि शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने में भी बल प्रयोग हुआ हो तो शारीरिक सम्बन्ध के बाद भी अधिकार प्राप्त है)।

2- प्रत्येक स्थिति में अधिकार नहीं (मौ0 नईम अख़्तर)।

3- शारीरिक सम्बन्ध के बाद अधिकार नहीं (मौ0 अब्दुल अज़ीम

इस्लाही, मौ0 मुहम्मद ज़फ़र, मौ0 मुस्तफ़ा क़ासमी, मौ0 अब्दुल क़ादिर अब्दुल्लाह।

4- यदि बल प्रयोग हुआ हो तो अधिकार प्राप्त है अथवा नहीं।

(शौकत सबा)

पाँचवा प्रश्नः

ज़ोर ज़बरदस्ती सिद्ध होने पर शरीअत कौंसिल आदि को अलगाव कराने का अधिकार है या नहीं?

इसके अन्तर्गत मौ0 बुरहानुद्दीन संभली, मौ0 इक़बाल क़ासमी और मौ0 नईम अख़तर का विचार है कि कोई अधिकार नहीं और अन्य वे लोग जिन्होंने इस पहलू को विस्तार पूर्वक स्पष्ट किया है सभी सहमत हैं कि शरीअत कौंसिल को यह अधिकार है। इन लोगों में मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान बिजनौरी, मौ0 अबू सुफ़ियान मिफ़्ताही, मौ0 असरारुल हक़ सबीली, मौ0 ज़फ़र आलम नदवी और अबुल आस वहीदी आदि हैं।

मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान साहब बिजनौरी इस तरह के निकाह के लागू होने के समर्थक नहीं हैं और वे फरमाते हैं कि क़ाज़ी शरीअत या शरअी पंचायत को बिना झिझक निकाह निरस्त कर देना चाहिए, यह सावधानी के लिए है अन्यथा जब निकाह का अस्तित्व ही स्वीकार नहीं तो निरस्त करने की भी आवश्यकता नहीं।

यह लेख लिखने वाले उलमा के मतों का निचोड़ था। अब इस लेखक का विश्लेषण प्रस्तुत है।

पहली बात तो यह कि जबरी शादी का एक रूप यह है कि पिता, दादा आदि बच्ची या बच्चे की शादी मात्र अपनी पसन्द से करें और उनके

प्रौढ़ होने के बावजूद या तो उनसे प्रश्न न पूछें या प्रश्न पूछें तो उनके इन्कार पर ध्यान दिये बिना स्वयं ही प्रस्ताव व स्वीकृति कर लें। प्रश्नावली में इस स्थिति का उल्लेख नहीं है और इसका आदेश यह है कि यदि निकाह और ईजाब व कुबूल की सूचना मिलने पर लड़की या लड़का चुप रहे, कुछ न बोले तो निकाह लागू हो जायेगा अन्यथा निरस्त होगा।

दूसरी स्थिति यह है कि लड़की के इन्कार करने पर उससे ईजाब व कुबूल के समय ज़ोर ज़बरदस्ती हां और कुबूल है कहलवाया जाये। इसी सिलसिले में प्रश्न किया गया है तो यदि ज़बरदस्ती लिखवा लिया गया, हस्ताक्षर या अंगूठा, तो यह अमान्य है। और यदि हां कराया गया तो हनफ़ी उलमा के मतानुसार निकाह हो जाता है और इस निकाह के उचित व वैध होने का कारण कुछ वह तौसीआत (विस्तृत व्यवस्थाएं) हैं जो शरीअत ने निकाह की स्थापना और तलाक़ के लिए रखी हैं, जिनका आधार तिर्मिज़ी आदि की प्रसिद्ध हदीस है "**ثلاث جدهن جد وهزلهن جد**" ''तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनमें गंभीरता भी गंभीरता है और मज़ाक़ भी गंभीरता है'' (जामेअ तिर्मिज़ी, किताबुत्तलाक़- इमाम तिर्मिज़ी ने इस हदीस को हसन ग़रीब कहा है और सभी उलमा का मत इसके अनुकूल बताया गया है)। इस हदीस के अनुसार मज़ाक़ के रूप में कहे जाने वाले ईजाब व कुबूल के शब्द भी निकाह के सही होने के लिए पर्याप्त हैं और जब मज़ाक़ से निकाह हो जाता है तो ज़बरदस्ती की स्थिति में सही होना अधिक सही है क्योंकि मज़ाक़ में तो दोनों पक्षों का निकाह का कोई इरादा ही नहीं होता और आपस में बातचीत बस एक मनोरंजन और दिल्लगी है और ज़बरदस्ती की स्थिति में एक पक्ष तो आमादा व संजीदा ही है, रहा दूसरा पक्ष जिस पर दबाव डाला गया तो वह भी अपने

लाभ हानि को सोचकर ही फ़ैसला कर रहा है और हां कर रहा है अर्थात लड़की, अत: लड़की की तरफ़ से भी निकाह का इरादा पाया गया, यद्यपि यह इरादा न चाहते हुए अत्यन्त ना पसन्दीदगी और नागवारी के साथ है परन्तु लड़की इसलिए हां कह रही है कि उसके सामने इन्कार की हानियाँ कम से कम इस समय कुबूल की हानियों से बढ़ कर हैं तो हाँ करके वह स्वयं को सामयिक रूप में ही सही कुछ हानियों से बचा रही है।

अत: यह निकाह तो हो गया जबकि निकाह बाप दादा ने कराया है और स्पष्टत: उन्होंने लड़की के पक्ष में किसी बुराई का इरादा नहीं किया है और न किसी व्यक्तिगत लाभ को प्राप्त करने का, कि कहा जाये अपने स्वार्थ के लिए लड़की को भेंट चढ़ा दिया।

और यह निकाह हनफ़ी उलमा के अतिरिक्त शेष तीनों मतों के इमामों के अनुसार भी लागू व उचित होगा जब कि निकाह बाप दादा ने किया हो क्योंकि तीनों इमामों के अनुसार बाप को बालिग़ कुंवारी पर भी ज़बरदस्ती अभिभावकत्व प्राप्त है और इमाम शाफ़ई और अहमद बिन हम्बल के विचार में दादा को भी।

अब रही यह समस्या कि इसके बाद लड़की रिश्ता निभाने की भी पाबन्द या मजबूर है या यह कि उसे रिश्ते को समाप्त करने की मांग व प्रयास का अधिकार प्राप्त है। तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब निकाह सही हुआ और देखने में लगता है कि उसमें लड़की की भलाई को ही ध्यान में रखा गया तो लड़की से यही कहा जायेगा कि वह रिश्ते को बरक़रार रखे और धर्य एंव त्याग से काम ले, मां बाप की खुशी और उनके पसन्द किये हुए भविष्य को अपने लिए बेहतर समझे, जिन हानियों से बचने के लिए उसने

मजबूर होकर निकाह को स्वीकार किया है, रिश्ते को समाप्त करने की स्थिति में इस तरह की हानियों का सामना करना पड़ेगा और फिर उसे अपनी पसन्द की खुशियां पूरी तरह प्राप्त न हो सकेंगी।

लेकिन यदि वह स्वयं को इस पर किसी तरह आमादा न कर सके तो उसे रिश्ता समाप्त करने की मांग करने का अधिकार प्राप्त होगा।

यह अधिकार उसे इसलिए प्राप्त है कि लड़की ने यद्यपि हां कह दी है परन्तु स्वयं को अत्यन्त मजबूर पाकर और इस हाल में कि उसका दिल इस रिश्ते पर किसी तरह आमादा नहीं था इसलिए हां करने बल्कि स्वयं को पति के हवाले करने के बावजूद कभी भी वह पति को अपने दिल में वह स्थान नहीं दे पाती और अपने दिल में वह भावनायें उन्पन्न करने में असमर्थ रहती है जो वैवाहिक जीवन के वास्तविक सुखों के लिए आवश्यक हैं बल्कि पति के लिए शत्रुता भावनायें उसमें लगातार बरक़रार रहती है। स्प्ष्ट है कि इस महान और कोमल रिश्ते में यह मन मुटाव सफल भविष्य और अच्छे परिणामों का आधार नहीं बन सकती बल्कि पति पत्नी के लिए हर तरह से समस्याओं को जन्म देने वाली होगी और स्थिति वह होगी जिसे क़ुरआन व फिक़्ह में ''शिकाक़'' कहा गया है, चाहे स्थिति यह हो कि ऐसी परिस्थिति पैदा हो चुकी हो या दोनों शनैः शनैः उसकी तरफ बढ़ रहे हों।

इसलिए लड़की को अधिकार प्राप्त है कि वह शरीअत की सीमाओं में इस रिश्ते को समाप्त करे और अपनी आज़ादी की मांग करे और ऐसी स्थिति में उसकी मांग को उन हदीसों की रोशनी में उचित नहीं ठहराया जा सकता जिनमें बिना किसी उचित कारण के तलाक़ व खुलअ़ अर्थात अलगाव की मांग की निन्दा और धमकी आई है क्योंकि धमकी अनाधिकृत मांग पर है

और यहां मांग हर हालत में उचित है।

और इसकी दलील क़ुरआन की वे आयतें हैं जिनमें दम्पति के बीच आपसी कटु मतभेद और एक दूसरे के दायित्वों के निर्वाह में तीव्रता और झगड़ा उत्पन्न करने वाली कोताही के पाये जाने या इसके मौखिक सन्देह पर रिश्ता तोड़ देने की बात कही गई है:

"فإن خفتم أن لا يقيما حدود الله فلا جناح عليها فيما افتدت به"

(سورۂ بقرہ/۲۲۹)

"وإن خفتم شقاق بينهما فابعثوا حكما من أهله وحكما من أهلها"

(سورۂ نساء/۳۵)

''तो यदि तुमको डर हो कि वे अल्लाह की सीमाओं पर क़ायम न रहेंगे तो स्त्री जो कुछ देकर छुटकारा प्राप्त करना चाहे उसमें उन दोनों के लिए कोई गुनाह नही'' (सूरः बक़रः-229)

''और यदि तुम्हें पति-पत्नी के बीच बिगाड़ का डर हो तो एक फ़ैसला करने वाला पुरुष के लोगों में से और एक फ़ैसला करने वाला स्त्री के लोगों में से नियुक्त करो'' (सूरः निसा-36)

इन आयतों के सम्बोंधितों में शासक, अभिभावक और पति व रिश्ते दार सभी सम्मिलित हैं कि बिगाड़ की हालत और उसकी प्रबल संभावना में क्या करें, प्रसिद्ध ताबई क़ुरआन के टीकाकार हज़रत ताऊस पहली आयत के अन्तर्गत फ़रमाते हैं:

इस आयत का तात्पर्य अल्लाह की सीमाओं को क़ायम न करने से है, एक दूसरे के साथ अधिकारों और कत्तब्यों का अच्छी तरह निर्वाह न करना। (बुखारी की टीका फ़तहुल बारी 394/9)

और सबसे महत्वपूर्ण और स्पष्ट दलील दोनों हदीस की सही किताबों की रिवायत है कि हज़रत साबित बिन क़ैस की पत्नी आप (सल्ल0) की सेवा में उपस्थित हुई और कहा: ऐ अल्लाह के रसूल! मुझको साबित बिन क़ैस से उनकी दीनदारी और चरित्र के मामले में कोई शिकायत नहीं है लेकिन मैं इसको पसन्द नहीं करती कि इस्लाम में रहते हुए मैं किसी की पत्नी रहूँ और उसके साथ दिल से प्यार न करूँ। उसके दायित्वों को पूरी तरह पूरा न करूँ और इस तरह मैं कृतध्नता और कुफ़्र के कामों की गुनाहगार बनूँ या बिल्कुल कुफ़्र तक पहुँच जाऊं।

पति से उनकी घृणा का क्या कारण था? इस सिलसिले में यद्यपि कुछ रिवायतों में इसका उल्लेख मौजूद है कि वह बहुत मारते थे यहाँ तक कि इससे शारीरिक क्षति भी हुई थी परन्तु शोध कर्ताओं ने इससे अधिक महत्व इस बात को दिया है कि पति अत्यन्त कुरुप थे क्योंकी महिला ने दीनदारी और चरित्र में कमी का पूरी तरह इन्कार किया। वह पति से इतनी घृणा करती थी कि साथ रहने सहने के बावजूद अपने आपको पति से पूरी तरह जोड़ न सकीं और वह पहले दिन से नफ़रत का शिकार थीं, यहाँ तक कि इब्ने माजा की रिवायत में आया है कि उन्होंने कहा: यदि अल्लाह का डर न होता तो जिस समय वह मेरे पास पहली बार आये, मैं उनके मुंह पर थूक देती।

आप (सल्ल0) ने उनकी बात सुनकर मालूम रिवायतों के अनुसार और कुछ नहीं पूछा और न नापसन्द होने का कारण पूछा, ऐसा अनुमान है कि कुछ न कुछ मालूम था, नबी (सल्ल.) ने मात्र यह कहा कि क्या तुम मेहर वापस करने को तैयार हो, जब उन्होंने हाँ कहा तो आप (सल्ल.) ने अलगाव

करा दिया (रिवायत के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए उमदतुल क़ारी और फ़तहुल बारी देखें। (किताबुत्तलाक़ भाग खुलअ़)

एक रिवायत अबू दाऊद आदि की प्रसिद्ध है कि एक सहाबी ने अपनी बेटी का निकाह अपने भतीजे से किया, मगर भतीजे के हालात कुछ ऐसे थे जिसकी वजह से वह बेटी को पसन्द न थे, पवित्र नबी की सेवा में उपस्थित होकर शिकायत की तो आप (सल्ल.) ने उनको अलग होने का अधिकार दिया, जिसपर उन्होंने कहा कि मैं अलग होना नहीं चाहती मगर सच्चाई को स्पष्ट करना चाहती थी।

एक घटना और है जिसको हदीस के विद्धानों, इमाम बुखारी आदि ने इस संदर्भ में उल्लेख किया है कि हुज़ूर (सल्ल.) के ज्ञान में जब यह बात आई कि हज़रत अली (रज़ि0) दूसरा निकाह करना चाहते हैं तो आपने उन्हें मना किया और यहां तक फ़रमाया कि यदि दूसरा निकाह करना ही है तो फ़ातिमा को तलाक़ दे दें। इसका क्या कारण था?

हदीस के व्याख्याकारों और बुखारी के व्याख्याकारों ने इस सिलसिले में यह दलील पसन्द की है कि हज़रत फ़ातिमा सौतन के कारण दूसरा निकाह पसन्द नहीं कर सकती थी और इसके फलस्वरूप उसके कारण आपस में कटु मतभेद और बिगाड़ का सन्देह था। (बुख़ारी-फ़तहुल बारी के साथ-किताबुत्तलाक़ 8०8/9)

अब शोधकर्ता उलमा और तत्वदर्शी उलमा के शोध व स्पष्टीकरण देखें:

हाफ़िज़ इब्ने हजर ने साबित बिन क़ैस वाली घटना के बारे में ''फ़वाइद'' में लिखा है: खुलअ व फ़िदिया उस समय भी वैध है जब कि औरत पति के पास रहने पर सहमत न हो यद्यपि पति उसे नापसन्द न करे

और पति को उससे कोई शिकायत न हो (फ़तहुल बारी 401/9) और हज़रत फ़ातिमा वाली हदीस के बारे में लिखा है कि उल्लिखित आयत से "**وإن خفتم شقاق بينهما**" तात्पर्य ''और यदि तुम्हें उन दोनों के बीच बिगाड़ का डर हो'' है और इस हदीस से पता चलता है बुराई के दरवाज़े को बन्द करने के लिए भी ऐसा करना उचित है, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने बिगाड़ के पैदा होने से पहले मात्र इसके सन्देह की स्थिति में दो फ़ैसला करने वाले नियुक्त करने का आदेश दिया है, जब कि डर का अर्थ यह भी हो सकता है कि बिगाड़ तो अभी मौजूद नहीं लेकिन लगातार तनाव और मन मुटाव और विद्वेष पैदा करने वाले बिगाड़ और मतभेद के लक्षण मौजूद हैं। (फ़तहुल बारी 404/9)

मौलाना अब्दुस्समद रहमानी प्रथम नायब अमीरे शरीअत बिहार व उड़ीसा ने विषय से सम्बन्धित अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ''किताबुल फ़स्ख वत्तफ़रीक़'' में इस सिलसिले की एक बुनियाद ''दम्पत्ति सम्बन्धों में बिगाड़ को भी ठहराया है और बिगाड़ के विभिन्न कारण बयान किये हैं, कुछ संक्षिप्त और कुछ विस्तार से इसके सिलसिले में इमारत-शरीआ़: के उलमा की परम्परा रही है कि जब वह परिस्थिति और दलीलों से महसूस करते हैं कि रिश्ते को ज़बरदस्ती बचाने में फ़साद बढ़ने के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा तो इसी वास्तविकता के अनुसार वह दम्मति के बीच अलगाव का रास्ता अपनाते हैं (यद्यपि अलगाव खुलअ व तलाक़ के रूप में हो)

इसके अतिरिक्त मौलाना अबुल मुहासिन सज्जाद (रह.) ने अपने कई फ़तवों में पत्नी की तरफ से कुछ महत्वपूर्ण शिकायतों के आधार पर लिखा है कि यदि पत्नी धैर्य से काम न ले सके तो तलाक़ व खुलअ़ के माध्यम से अलग हो जाये। और वह शिकायतें उन प्रचलित रूपों के अन्तर्गत नहीं आती

जिसका बयान इस सन्दर्भ में सामान्यत: किताबों में मिलता है और जिनको निरस्त और अलगाव के अन्तर्गत बयान किया जाता है। (फ़तावा इमारते शरिया: 177, 195, 191 और 185/1) जैसे: एक फ़तवा में लिखते हैं: यदि दम्पति में सामंजस्य असंभव है तो ऐसी स्थिति में दोनों की सलाह से खुलअ़ हो सकता है, बल्कि एक विस्तृत फ़तवा में सामंजस्य न होने पर खुलअ़ का बयान करते हुए हज़रत साबित बिन क़ैस की बीवी वाली हदीस से तर्क दिया गया है और खुलअ वाली आयत से भी। यह फ़तवा एक दूसरे विद्वान का लिखा हुआ है मगर मौलाना पृष्टि करते हुए लिखते हैं:

औरत के स्वभाव में अनुकूलता न होने या अन्य मजबूरियों के कारण पति से खुलअ की मांग करने का अधिकार है। (फ़तावा इमारत-ए-शरीया 175,176/1)

मौलाना सज्जाद साहब ने खुलअ आदि का आदेश जिन परिस्थितियों में बयान किया है, उनमें पति-पत्नी की आयु में उचित अनुपात न होना और इसके कारण मर्द का अयोग्य होना भी आया है, जैसे कि मौलाना अब्दुस्समद रहमानी (रह0) ने किताब ''अल फ़स्ख़'' में नामर्द होने के आधार पर अलगाव के लिए भी प्रयोग किया है जब कि मर्द को इस तरह की बीमारी शादी के काफी समय बाद लगे।

रही यह समस्या कि लड़की अपने अधिकार को किस तरह प्राप्त करे और शरीअत कौंसिल आदि इस सिलसिले में क्या कर सकते हैं तो पिछली पंक्तियों में कुछ न कुछ रूपों का बयान आ गया है और वही उन अवसरों पर सामान्यत: बयान हुआ है जिनका हवाला दिया गया है और वह यह है कि लड़की पति से अलगाव के लिए तलाक़ या खुलअ प्राप्त करने की कोशिश करे, चाहे वह स्वयं पति से बात करके उसे आमादा करे, या सगे सम्बन्धियों

या शरअ़ी कौंसिल व शरअ़ी पंचायत आदि के लोग पति को तैयार करे और समझायें कि दोनों की भलाई इसी में है कि इस रिश्ते को अच्छी तरह तोड़ दिया जाये।

शरीअत कौंसिल आदि संस्थाओं का काम मात्र यह नहीं है कि वह अपनी तरफ़ से अलगाव का आदेश देकर निकाह निरस्त कराने का काम करें बल्कि आपसी झगड़ों को हल करने के हर संभव प्रयास के बाद पति की तरफ़ से खुलअ़ और तलाक़ का मामला तय कराना और मजबूरी की स्थिति में निकाह निरस्त करने का फ़ैसला करना, यह सब इन संस्थाओं का काम है। ऐसी कुछ स्थितियों में मौलाना सज्जाद साहब ने क़ाज़ी की तरफ़ से निरस्त करने या अलगाव कराने से इन्कार किया है।

हाँ, शरीअत कौंसिल की तरफ़ से निरस्त करने का काम इस आधार पर हो सकता है कि इस तरह के निकाह और मसले को ''किफ़ाअत (बराबरी)'' की समस्या के अन्तर्गत लाया जाये और इस पहलू से उसको देखा जाये।

और सच्चाई यह है कि यह पहलू भी यहां विचार करने योग्य है क्योंकि किफ़ाअत का भावार्थ और उद्देश्य बहुत विस्तृत है, यही कारण है कि विस्तार और संक्षिप्त भागों में मतभेद के बावजूद तमाम उलमा व इमामों ने निकाह में इसकी रिआयत को अपनाया है और इसको महत्व दिया है।

(अल-फिक्हुल इस्लामी व अदिल्लतुहू 230/7 232, हाशिया रद्दुल मोहतार, दुर्रे मुख़्तार 208/8)

इस अवसर पर किफ़ाअत के सम्बन्ध में वार्ता को विस्तार नहीं दिया जा सकता, हाँ किफ़ाअत का स्पष्टीकरण और किफ़ाअत के मामलों के सिलसिले में कुछ बातें प्रस्तुत करना आवश्यक प्रतीत होता है ताकि उसकी

रोशनी में इस समस्या पर विचार किया जा सके।

किफ़ाअत क्या है? इस सिलसिले में अकेडमी के ग्यारहवें सेमिनार के प्रस्तावों का एक भाग प्रस्तुत है:

''इस्लाम निकाह को स्थायी और क़ायम देखना चाहता है और ऐसी हिदायतें देता है जिन पर अमल करने से निकाह अपने उद्देश्य को पूरा करे और पति-पत्नी जीवन भर खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकें। किफ़ाअत की हक़ीक़त दम्पति में समानता व अनुकूलता है, पति पत्नी के बीच सोच विचार, रहन सहन, जीवन शैली, दीनदारी आदि में समानता व समीपता होने की स्थिति में अधिक आशा होती है कि दोनों का दाम्पत्य जीवन सुखी और स्थायी रहे, बेजोड़ निकाह साधारणत: नाकाम रहते हैं और इस नाकामी के बुरे प्रभाव उन दोनों व्यक्तियों से आगे बढ़कर दोनों के घरों तक पहुंचते हैं, इसलिए निकाह के आदेशों में शरीअत ने किफ़ाअत की रिआयत की है''।

यह तो अकेडमी के प्रस्ताव का एक भाग है, मौलाना यूसुफ साहब लुधियानवी (रह0) ने एक अवसर पर फ़रमाया: लड़का हर हक़ीक़त से लड़की के बराबर हो, तात्पर्य यह है कि दीन, ईमानदारी, माल, नस्ल, व्यवसाय और शिक्षा में लड़का लड़की से कम न हो।

किफ़ाअत किन मामलों में है? इस सिलसिले में फ़क़ीहों (क़ानून के माहिरों) ने सामान्यत: कुछ निर्धारित मामलों का उल्लेख किया है, हनफ़ी उलमा ने भी और दूसरे उलमा ने भी। लेकिन प्राचीन व आधुनिक फ़क़ीहो और शोध कर्त्ता इसके साथ यह भी कहते हैं कि किफ़ाअत में बयान किये जाने वाले मामलों का आधार रीति-रिवाज पर है। फ़तहुल क़दीर के लेखक और अल्लामा शामी आदि ने इसको स्पष्ट किया है और इसी आधार पर किफ़ाअत की बहस

और विस्तार में शिक्षा विवेक आदि को गिना है और उल्लेख किया है अन्यथा फिक्ह की किताबों में साधरणत: बयान किये गये मामलों में ये बातें सम्मिलित नहीं हैं और इसी के अन्तर्गत उम्र में अनुपात को भी प्रभावी माना गया है और कुछ तत्वदर्शी उलमा के स्पष्टीकरण के अनुसार प्राचीन फ़कीहों ने भी इसका उल्लेख किया है। (अहसनुल फ़तावा 123/5 शरह मुहज़्ज़ब के हवाले से)

आज ज्ञान व शिक्षा का समाज में जो महत्व है वह किसी से छिपा नहीं है इसी लिए आज के आधुनिक फ़क़ीह इसका भी उल्लेख किया करते हैं (आपके मसाइल 61/5 अल फ़िक़हुल इस्लामी व अदिल्लतुहू-7) अर्थात अशिक्षित होना या अज्ञानता व शिक्षा में कमतर होना उनके विचार में किफ़ाअत में प्रभावी है।

जैसे कुछ महत्वपूर्ण बीमारियों को कुछ मुज्तहिद इमामों बल्कि कुछ हनफ़ी और बाद के शोध कर्ताओ ने इस सूची में रखा है (देखे- अल-हुलियुतुन्नाजिजह! और किताबुल फ़स्ख़ वत्तफरीक़, और अलफिक़्हुल इस्लामी व अदिल्लतुहू 380/7) यहां तक कि नामर्दी की समस्या को भी कुछ लोगों ने किफ़ाअत के मामलों में गिना है। (रद्दुल मोहतार 209/8 तबअ़ ज़करिया)

इस्लामी दुनिया के सबसे बड़े फ़क़ीह वहब: ज़ुहैली ने किफ़ाअत से सम्बन्धित वार्ता में उन्हीं मामलों को पर्याप्त समझा है जिनका उल्लेख प्रचलित है और दूसरे मामलों का इन्कार किया है मगर इसी के साथ वे फरमाते हैं:

लेकिन इन विशेषताओं में अनुपात पर ध्यान देना बेहतर है, विशेषरूप से उम्र और शिक्षा को देखना क्योंकि दम्पति के बीच इन दोनों बातों में समानता का पाया जाना दोनों के बीच अधिक समानता पैदा कर सकेगा और इनको ध्यान में न रखने से बड़ा बिगाड़ और बिखराव होगा।

(अलफिक़्हुल इस्लामी व अदिल्लतुहू 387, 382/7)

हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह.) एक फ़तवा में फ़रमाते हैं: किफ़ाअत का भरोसा अपमान को मिटाने के लिए है और अपमान रीति के अनुसार होता है और रीति के अनुसार एक खानदान दूसरे के बराबर समझा जाता है, पुराने ज़माने के लोगों में बराबरी न होगी। इसलिए युग बदलने से यह आदेश बदल गया। (इमदादुल फ़तावा 371/2)

एक फ़तवा में कुछ बातें नक़ल करने के बाद फ़रमाते हैं कि हदीस व फ़िक़्ह की इन रिवायतों से सिद्ध हुआ कि अम्र का कथन सही है (जो ग़ैर अरब खानदानों में भी किफ़ाअत को ध्यान में रखने का समर्थक है) और यह कि इसका आधार रिवाज पर है, जिसका हदीस में भी भरोसा किया गया है और यह भी मालूम हुआ कि फक़ीहों ने जो ग़ैर अरब में नस्ल का भरोसा न होने की बात लिखी है यह भी इस बात पर निर्भर है कि रिवाज में इस ग़ैर बराबरी का भरोसा न हो अन्यथा उनमें भी नस्ल और क़ौम का भरोसा होगा।

कुछ आगे चलकर फ़रमाते हैं: और नस्ल का सम्बन्ध पूर्वजों से है और ''हसब'' (सामाजिक स्तर) शब्दकोष के अनुसार सामान्य है, लेकिन रीति के अनुसार कुलीनता के साथ विशेष है, चाहे सोसारिक हो या दीनी और किफ़ाअत में उसका भी भरोसे योग्य है जिस तरह नस्ल का है, इसलिए फ़क़ीहों का दयानतन् (दीन के अनुसार) व मालन् (सम्पत्ति के अनुसार) व हिर फ़तन् (व्यवयाय के अनुसार) कहना इस की स्पष्ट दलील है और इसका आधार भी रीति पर ही है। (इमदादुल फ़तावा 368, 369/2)

मुफ़्ती रशीद अहमद लुधियानवी साहब अहसनुल फ़तावा में एक विस्तृत फ़तवा के अन्त में लिखते हैं:

उपर्युक्त वाक्य के अतिरिक्त शामी और दूसरी किताबों में बहुत से

लेख हैं जिनसे सिद्ध होता है कि बुज़ुर्गों ने किफ़ाअत को इमामों से रिवायत पर आधारित नहीं समझा बल्कि अपने युग की परिस्थितियों और रीति के अनुसार इनमें सोच विचार की गुंजाइश है। (अहसनुल फ़तावा 134/5)

इसके बाद मुफ्ती रशीद अहमद साहब ने इस आदेश का उल्लेख किया है। मुफ्ती साहब के बयान और कुछ दूसरे लोगों के लेखों से स्पष्ट होता है कि दम्पति के बीच जब किसी आधार पर अनुपात की बड़ी कमी अनुकूलता की कमी पायी जाये तो इसको भी किफ़ाअत के मामलों के अन्तर्गत गिनकर दारुल क़ज़ा में जाया जाये और दारुल क़ज़ा आदि के लोग अलगाव की आवश्यकता महसूस करके लड़के को खुलअ़ या तलाक़ पर आमादा न कर सकें और आवश्यकता महसूस करें तो वह निकाह को निरस्त करके अलगाव करा सकते हैं जैसा कि किफ़ाअत के मामलों का सामान्य आदेश है।

निचोड़ यह है कि किफ़ाअत का उद्देश्य दम्पति के स्वभाव में समानता की रिआयत है और इससे इन्कार नहीं किया जा सकता की इन्सान के स्वभाव को बनाने में बहुत सी चीज़ें प्रभाव डालती हैं, दीन, कर्म व चरित्र, सम्पन्नता व निर्धनता, व्यवसाय शिक्षा व अज्ञानता, रहन-सहन यहां तक कि शहर और देहात का भी अन्तर होता है और फ़क़ीहों के स्पष्टीकरण के बावजूद कि शहर व देहात के अन्तर का कोई भरोसा नहीं हैं, इसका समर्थन करना कठिन है क्योंकि शहर व देहात के रहन-सहन के अन्तर के कारण स्वभाव में अन्तर नहीं होता। एक प्रसिद्ध हदीस है: "**من سكن البادية جفا**" जो देहात में रहा।

☆☆☆

इच्छा के विरुद्ध शादी

मौलाना मु0 बुरहानुद्दीन संभली
दारुलउलूम नदवतुलउलमा, लखनऊ

पिता और उसके न होने की सूरत में दादा के अभिभावकत्व से नाबालिग़ लड़की-लड़के का निकाह स्थापित और अनिवार्य होता है कि बालिग़ होने के बाद अधिकार भी नहीं रहता है कि चाहे इसने यह निकाह ग़ैर-बराबरी या साधारण मेहर से कम पर ही करा दिया हो (अगर वह माजिन नहीं है)।

अगर लड़का या लड़की बालिग़ हों और निकाह की इजाज़त दे दी हो; चाहे ज़बरदस्ती करने पर ही दी हो, तो निकाह स्थापित और अनिवार्य हो जाता है और बाद में अधिकार नहीं रहता, चाहे वे दोनों ब्रिटेन के रहने वाले हों या उसमें से एक वहाँ रहता हो और दूसरा वहीं या कहीं भी रहता हो।

पिता और दादा के स्नेह का मतलब और तक़ाज़ा यही है। इसीलिए शरीअत ने उसे यह विशेषाधिकार दिया है कि वह अपनी औलाद के भविष्य के लिए जो बेहतर हो वह क़दम उठाये। चाहे लड़कों, लड़कियों को अपने अनुभव की कमी या भावुकता और जिन्सी बे-राह रवी की वजह से यह रिश्ता पसन्द न आए।

जिन लोगों की यूरोप और अमेरिका के हालात पर नज़र है वहाँ की यौन स्वतन्त्रता और आज़ादाना बे रोक टोक मर्द औरत के मेल मिलाप की

जानकारी हैं उनके लिए यह समझना कि मां बाप अपनी औलाद, विशेष रूप से लड़कियों के यूरोप व अमेरिका में रिश्ता करने के बजाए एशिया-उदाहरण के लिए हिन्द व पाक आदि में रिश्ता करना क्यों पसन्द करते और वरीयता देते हैं। इस पसन्द में वास्तव में, औलाद विशेषरूप से लड़कियों की भलाई, इनके दीन व चरित्र की रक्षा ही लक्ष्य होता है। हालाँकि ब्रिटेन आदि (यूरोप व अमेरिका) में पलने वाले लड़के लड़कियाँ दीन व चरित्र से अनजान बल्कि बेपरवाह होने की वजह से इन रिश्तों को पसन्द न करें तो अचरज की बात नहीं। मगर उनकी पसन्द का भरोसा करना स्वयं उन्ही के चरित्र व दीन को तबाह करने जैसा होगा। ऐसी सूरत में पिता पर आरोप लगाना और भटके हुए लड़कों-लड़कियों की हिमायत करना शरीअत ही के नहीं पैत्रिक स्नेह के भी विरुद्ध है। यह ऐसा ही होगा कि जैसे कोई नासमझ बच्चा बीमारी या कमज़ोरी की हालत में मिठाई खाए या किसी और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक या जान लेवा चीज़ के प्रयोग की ज़िद करने लगे और मां बाप या डाक्टर स्नेह या हमदर्दी की बुनियाद पर उसे रोकते हों तो क्या कोई समझ रखने वाले मां बाप का विरोध, और ज़िद्दी नासमझ बच्चे का समर्थन करेगा? यूरोप आदि में पली लड़कियों का हिन्दुस्तानी लड़कों के बराबर न होना हास्यास्पद बात मालूम होती है कि मात्र इस अन्तर की बुनियाद पर अगर किफ़ाअत बदल जाए तो फिर देहाती व शहरी के अन्तर की वजह से भी बदल जानी चाहिए। इसलिए यह मात्र बहाना लगता है, यह शरअ़ी मजबूरी नहीं मालूम होती।

अगर मान लीजिए इसे बराबरी का फ़र्क़ तसलीम कर भी लिया जाए तो भी बालिग़ लड़की की अनुमति से और पिता की रज़ामन्दी से होने वाला निकाह स्थापित और अनिवार्य होता है, अर्थात मात्र इस बुनियाद पर निरस्त

करने का हक़ नहीं होता।

क्योंकि निकाह इन समझौतों में से है कि जो हदीस के अनुसार 'मज़ाक़' और 'गम्भीरता' दोंनों सूरतों में स्थापित और अनिवार्य होता है।सही हदीस की मशहूर किताबों, अबू-दाऊद और तिर्मीज़ी में है:

"ثلاث جدهن جد وهزلهن جد: النكاح والطلاق والرجعة"۔

तीन बातें ऐसी हैं जिनमें उनकी गम्भीरता भी गम्भीरता है और मज़ाक़ भी गम्भीरता है वह हैं: निकाह, तलाक़ और रजअत।

इसी बुनियाद पर भरोसेमन्द फ़क़ीहों के मतानुसार दबाव डालकर किया हुआ निकाह (अगर इजाज़त जबरन दी हो) भी हो जाता है। मिसाल के तौर पर हिन्दुस्तान की बल्कि एशिया के सबसे बड़े केन्द्र दारुल-इफ़्ता दारुल उलूम, देवबन्द के मुफ़्ती-ए-आज़म मौलान मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान उस्मानी का यह फ़तवा है : ''ज़बरदस्ती की इजाज़त से निकाह स्थापित हो जाता है''(1), इसके अतिरिक्त फ़िक़्ह व फ़तावा की अहम मरजअ (Refrence book) किताब रद्दुलमुहतार में भी इस आदेश का उल्लेख है।(2)

इसलिए किसी शरअ़ी कौंसिल या क़ाज़ी को शरीअत के अनुसार हक़ नहीं कि केवल इस बुनियाद पर किसी जोड़े का निकाह निरस्त कर दे कि लड़की या लड़के ने निकाह की इजाज़त दबाव में दी थी।

☆☆☆

1. मजमूआ फ़तावा, दारुल उलूम देवबनद, प्रकाशक मकतबा इमदादिया देवबन्द 2, 3/84,86,100

2. 1/271 मकतबा नोमानिया, देवबन्द

शादी की समस्या

मौलाना ज़ुबैर अहमद क़ासमी
जामिया अशरफुल उलूम कन्हवां सीतामढ़ी

मेरी निगाह में इन देशों के मुस्लिम समाज की इस विशेष पेचीदा परिस्थिति का सही और शरअ़ी समाधान यही है कि ऐसे अभिभावकों पर क़ानून बना करके दण्डात्मक सज़ायें लागू की जायें ताकि कम से कम भविष्य में ऐसी परिस्थिति सामने न आ सके जो शरीअत के आदेशों का रूप बिगाड़ने का कारण बनती है और इस्लाम की जग हंसाई होती है।

1. निकाह के लिये मजबूर करना हो या निकाह के लिये वकील बनाने पर मजबूर करना हो, ये दोनों दबाव हनफी फिक़्ह के अनुसार अप्रभावी हैं और दोनों हालतों में निकाह सही हो जाता है।

"الإكراه على التوكيل بالنكاح يصح وينعقد" (١)-

"وحقيقة الرضاء غير مشروطة في النكاح لصحته مع الإكراه" (٢)-

2. जब निकाह के लागू होने और सही होने की शर्त वास्तव में रज़ामन्दी पर नहीं है तो रज़ामन्दी के पाये जाने के बाद चाहे ये रज़ामन्दी, मौखिक हो या लिखित हर हालत में निकाह की अनुमति अर्थात निकाह के लिये वकील बनाना सही और लागू हो जायेगा।

1. शामी 5:82 2. शामी 2:271

3. ब्रिटेन आदि पश्चिमी देशों में रहने वाली लड़की सामाजिक स्तर पर चाहे कितनी ही ऊंची हो परन्तु चूंकि उसने उस निचले स्तर के समाज के एक व्यक्ति के साथ निकाह की अनुमति देकर निकाह का वकील बनाने का मामला कर लिया है तो उसे सामाजिक ग़ैर बराबरी के आधार पर अलग होने के दावे का अधिकार कदापि नहीं मिलेगा।

हां इस सिलसिले में तीन इमामों का मसलक चूंकि निकाह के लिये मजबूर करना या निकाह के लिये वकील बनाने पर मजबूर करना प्रभावी हो जाने का है और फलस्वरूप उन लोगों के मसलक के अनुसार ज़बरदस्ती की हालत में न निकाह स्थापित होता है और न निकाह के लिये वकील बनाना सही होता है, तो फिर जो लोग शाफ़ई, मालिकी या हम्बली हैं उनके लिये समस्या आसान है, लेकिन हनफ़ी के लिये समस्या हर हालत में कठिन और पेचीदा ही कहा जायेगा।

अब यदि समस्या के इज्तिहादी होंने के आधार पर हनफ़ी क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के हनफ़ी सदस्य सर्व सम्मति से निकाह के स्थापित न होने का फ़ैसला कर दें तो शायद गुंजाइश हो सकती है, क्योंकि हनफ़ी फिक़्ह का भी यह प्रचलित सिद्धान्त है।

4. यदि निकाह के लिये ज़बरदस्ती या निकाह के लिये वकील बनाये जाने के लिये ज़बरदस्ती हो, तो उसके बाद पति व पत्नी के शारीरिक समबन्ध स्थापित होने और न होने की दो भिन्न हालतें हैं। मेहर के बारे में आदेश निश्चय ही भिन्न होंगे जो निम्नलिखित है।

(क) ज़बरदस्ती निकाह करने में एक है निकाह पर राज़ी होने या न होने की समस्या, दूसरी है निकाह के समय मेहर निर्धारित करने पर और

उसकी मात्रा पर राज़ी होने या न होने की समस्या। और चूंकि राज़ी न होने के बावजूद मजबूरी का निकाह लागू होना तय है, इसलिये निकाह की स्थापना तो हर हालत में हो ही जायेगी, परन्तु मेहर चूंकि शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने का बदला होता है, इस तरह ये माली अधिकार और माल के बदले में निकाह समझा जाता है इसलिये दोनों पक्षों का मेहर की निर्धारित मात्रा पर वास्तव में राज़ी होना अनिवार्य है और दबाव डालकर वास्तविक रज़ामन्दी समाप्त हो जाया करती है इसलिये मेहर को निर्धारित करना मानों, स्थापित नहीं रहता है।

(ख) फ़िक़्ह का प्रचलित मसला है कि औरत के शरीर का मालिक होना उस समय मान्य होता है जब औरत का शरीर मर्द के स्वामित्व में आ जाये और उसका शरअ़ी और वास्तविक बदला समान मेहर ही होता है, सिवाय इसके कि दोनों पक्ष सामान्य मेहर से कम या अधिक मात्रा पर अपनी वास्तविक रज़ामन्दी प्रकट कर दें, जो निश्चय ही ज़बरदस्ती के निकाह में नहीं पायी जाती है।

(ग) अब यदि मर्द पर निकाह में ज़बरदस्ती की गई हो तो यह बात स्पष्ट है कि वह निकाह के साथ मेहर की उस मात्रा पर भी राज़ी न होगा उसमें निर्धारित किया गया है, यद्यापि उसके राज़ी न होने के बावजूद निकाह स्थापित हो जायेगा परन्तु मेहर की मात्रा सामान महर से अधिक है तो अनिवार्य नहीं होगा।

(घ) इसके बाद यदि यह हो कि शारीरिक सम्बन्ध से पहले ही औरत अपने मेहर की मांग करने लगे तो मर्द पर अनिवार्य होगा कि वह या तो सामान मेहर के बराबर उसे देकर अपने साथ सोने के अधिकार को बाक़ी

रखे या उसे अलग कर दे, यदि मर्द ने दूसरी स्थिति अपनाई और तलाक़ देकर अलग कर दिया तो कुछ लेना देना नहीं होगा, मामला साफ़ हो चुका या यह कि औरत समान मेहर से कम की मात्रा पर खुशी से तैयार हो।

(च) लेकिन यदि निकाह पर मर्द के बजाये औरत को ही मजबूर किया गया होगा तो उस औरत के पक्ष में भी ज़बरदस्ती के कारण उसके मेहर की मात्रा समाप्त कही जायेगी और निर्धारित मेहर उसके साथ सोने का बदला नहीं बन सकेगा बल्कि समान महर को साथ सोने का बदला कहा जायेगा।

अब यदि शारीरिक सम्बन्ध से पहले वह अपने मेहर की मांग करेगी तो मेहर या तो समान महर देकर उसको अपने निकाह में रखे और उससे लाभ उठाने का रास्ता रखे या फिर उसे अलग कर दे, यदि अलग कर देगा तो उसके ऊपर कोई मेहर नहीं होगा। यहां भी यदि स्वयं औरत समान मेहर को कम लेने पर राज़ी हो जाये तो यह भी हो सकता है।

(छ) यदि औरत की तरफ़ से मेहर की मांग शारीरिक सम्बन्ध के बाद हो रही हो तो इसकी दो स्थितियां होंगी।

यदि शारीरिक सम्बन्ध (संभोग) के समय औरत राज़ी हो तो यह मानो, दोनों पक्षों की तरफ़ से निर्धारित मेहर पर रज़ामन्दी होगी, मर्द तो राज़ी था ही उस पर निकाह में ज़बरदस्ती नहीं की गई थी और संभोग के समय औरत का राज़ी रहना, निर्धारित मेहर पर राज़ी होने की दलील कही जायेगी, इसलिये औरत इस स्थिति में निर्धारित मेहर ही पायेगी।

लेकिन यदि औरत की रज़ामन्दी के बिना ज़बरदस्ती उससे संभोग किया गया होगा तो मर्द को समान मेहर ही देना होगा।

5. इस सिलसिले में या तो दूसरे तीन इमामों के मसलक के अनुसार निकाह के स्थापित न होने का फ़ैसला किया जाये, मानो, इन तीनों इमामों के मसलक पर अमल किया जाये या फिर मसले के इज्तिहादी होने के आधार पर हानि को मिटाने और मतभेद को दूर करने की नीयत से निकाह के स्थापित न होने को वरीयता देकर मतभेद को समाप्त किया जाये।

☆☆☆

ज़ोर ज़बरदस्ती की शादी का शरअ़ी आदेश

मुफ़्ती नसीम अहमद क़ासमी

निकाह एक पवित्र रिश्ता और इबादत है जिसके माध्यम से मर्द-औरत के बीच प्यार, उल्फ़त सुकून व शान्ति के भावनाएं (जज़्बात) विकसित होती हैं। दोनों वैध और हलाल तरीक़े से अपनी यौन (जिन्सी) आवश्यकताओं को पूरा करके इन्सान की नस्ल को आगे बढ़ाने और उसकी हिफ़ाज़त का माध्यम बनते हैं। दोनों के मिलाप से पवित्र समाज वजूद में आता है। पत्नी अपने पति के लिए सुकून का माध्यम, उसके दुख-सुख में शामिल और उनकी ज़िन्दगी के सफ़र में साथी होती है।

क़ुरआन करीम में अल्लाह तआला ने फ़रमाया है:

"ومن ايٰته أن خلق لكم من أنفسكم أزواجا لتسكنوا إليها وجعل بينكم موده ورحمة" (۱)۔

''और यह उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हारे लिए तुममें से ही जोड़ा पैदा किया ताकि तुम उसके पास सुकून हासिल करो। और उसने तुम्हारे बीच प्यार मुहब्बत और हमदर्दी पैदा कर दिया।''

और नबी (सल्ल०) ने भली बीवी के बारे में इरशाद फ़रमाया:

"الدنيا كلها متاع وخير متاع الدنيا المرأة الصالحة" (۲)۔

1. सूरा रूम: 21
2. मुस्लिम, मिशकात 267

''पूरी दुनिया लाभ उठाने की चीज़ है। और दुनिया की सबसे बेहतर चीज़ जिससे इन्सान लाभ उठाता है, वह भली बीवी है।''

नबी (सल्ल०) का फ़रमान है। ''मोमिन अल्लाह के तक़्वा (अल्लाह के डर) के बाद भली बीवी से अधिक किसी चीज़ से फ़ायदा नहीं उठाता है। अगर वह उसे आदेश (हुक्म) देता है तो वह आज्ञापालन करती है। अगर वह उसकी तरफ़ देखता है तो उसे खुश कर देती है। अगर उस पर क़सम खाता है तो सच कर दिखाती है। और अगर वह घर पर नहीं होता है तो वह अपने आप और उसके माल के बारे में भलाई चाहती है।'' (1)

निकाह के माध्यम से इन्सान अपने आधे दीन को पूरा कर लेता है और अपने आपको हराम में पड़ने से बचा लेता है। नबी(सल्ल०) का फ़रमान है:

"إذا تزوج العبد فقد استكمل نصف الدين فليتق الله في النصف الباقي" (٢)-

''जब इन्सान निकाह कर लेता है, आधे दीन को पूरा कर लेता है तो उसे बाक़ी आधे के बारे में अल्लाह से डरते रहना चाहिए''।

इस्लाम ने निकाह के सिलसिले में न तो बालिग़ लड़कियों को आज़ाद रखा है कि वे जहाँ चाहे अभिभावकों (Guardians) की इच्छा और सहमति के बिना निकाह कर लें, और न ही अभिभावक को इसकी आज्ञा दी है कि वह बालिग़ लड़कियों की अनुमति के बिना जहाँ चाहें उनका निकाह कर दें, बल्कि समझदारी और इन्साफ़ की बात यह है कि निकाह का रिश्ता अभिभावक और लड़की के आपसी भरोसे और रज़ामन्दी से तय हो। आम तौर से लड़कियों को अनुभव नहीं होता और भावनाओं से वशीभूत होकर ग़लत

1. मिशकात/268
2. मिशकात/268

लड़कों से रिश्ता कर लेती हैं और अपनी नादानी और मूर्खता की वजह से ग़लत माहौल में जाने पर आमादा हो जाती हैं। इसलिए अभिभावकों से कहा गया है कि उनकी अनुमति और इच्छा से मुनासिब जगह रिश्ता तय करें ताकि रिश्ते में मज़बूती (स्थायित्व) हो और उसके भले नतीजे सामने आयें।

इसलिए नबी करीम (सल्ल०) ने निकाह के मामले में अभिभावक का महत्व बताते हुए फ़रमाया:

"أيما امرأة نكحت نفسها بغير إذن وليها فنكاحها باطل، فنكاحها باطل فنكاحها باطل فإن دخل بها فلها المهر بما استحل من فرجها، فإن اشتجروا فالسلطان ولي من لا ولي له" (1)-

''जिस औरत ने अपना निकाह अपने अभिभावक की अनुमति के बिना कर लिया तो उसका निकाह अवैध (invalid) है, उसका निकाह अवैध है, उसका निकाह अवैध है। फिर अगर उसने उसके साथ दुख़ूल (यौन सम्बन्ध स्थापित) कर लिया तो उसके लिए मेह्र होगा। यह इस आधार पर कि उसने उसके सतीत्व को हलाल किया है। फिर अगर अभिभावकों के सिलसिले में मतभेद हो तो सुलतान (शासक) उसका अभिभावक होगा, जिसका अभिभावक कोई नहीं है।''

इस हदीस में अवैध वास्तविक रूप से अवैध नहीं हैं। बल्कि इसका अर्थ यह है कि उस स्थिति में अभिभावक को इस पर आपत्ति करने का अधिकार होगा।

नबी करीम (सल्ल०) ने बालिग़ लड़की की अनुमति को निकाह में आवश्यक ठहराते हुए फरमाया:

1. मिशकात/270

"لاتنكح الأيم حتى تستأمر ولا تنكح البكر حتى تستأذن قالوا: يا رسول الله وكيف إذنها؟ قال: أن تسكت" (١)۔

''तलाक़शुदा या विधवा का निकाह उससे मशविरे के बिना नहीं किया जायेगा और कुंवारी का निकाह उसकी अनुमति के बिना नहीं किया जायेगा। आप (सल्ल०) के सहाबा ने पूछा : ऐ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) उसकी इजाज़त कैसे होगी? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि वह चुप रह जाए।''(1)

और हज़रत इब्ने अब्बास की रिवायत में है:

"الأيم أحق بنفسها من وليها والبكر تستأذن في نفسها وإذنها صماتها" (٢)۔

''तलाक़शुदा या विधवा (बालिग़) अपने आपकी अपने अभिभावक के मुक़ाबले में अधिक हक़दार है और कुँवारी से उसके निकाह के बारे में अनुमति ली जायेगी। उसकी अनुमति उसका चुप रहना है''।

नबी करीम (सल्ल०) ने बालिग़ लड़की के निकाह को जो उसकी अनुमति के बिना किया गया हो, निरस्त कर दिया। उदाहरणत: बुखारी की रिवायत (हदीस) में है:

''ख़न्सा बिन्त खज़ाम का निकाह उनके पिता ने उनकी सहमति के बिना कर दिया हालाँकि वह कुवाँरी नहीं थीं। उन्होंने इसको पसन्द नहीं किया। फिर इस मामले को लेकर नबी (सल्ल०) की सेवा में हाज़िर हुई। आप (सल्ल०) ने उनके निकाह को निरस्त कर दिया।'' (3)

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 की हदीस में है:

1. मिशकात/270
2. मिशकात/270
3. मिशकात/270

''أن جارية بكرا أتت رسول الله ﷺ فذكرت أن أباها زوجها وهي كارهة فخيرها النبي ﷺ'' (رواه ابوداؤد) (1)-

''एक कुवाँरी औरत नबी करीम (सल्ल०) की सेवा में आई और बताया कि उसके पिता ने उसका निकाह कर दिया, हालाँकि वह उसे पसन्द नहीं कर रही थी। तो नबी (सल्ल०) ने उसे अधिकार दिया (कि निकाह को चाहे बाक़ी रखे, चाहे तोड़ दे)।''

इसी तरह औरतों को भी अभिभावकों की आज्ञा और रज़ामन्दी के बिना निकाह करने से मना किया है। आपने फ़रमाया:

''औरत, औरत का निकाह न करे और न औरत अपना निकाह स्वयं कर ले इसलिए कि वह व्यभिचारिणी है जो अपना निकाह स्वयं कर लेती है।'' (2)

स्पष्ट रहे कि इस्लामी शरीअत ने अभिभावक को लड़कियों के मामलों में दख़ल का जो अधिकार दिया है, उसकी बुनियाद उनके साथ मुहब्बत और स्नेह और उनके हितों का ध्यान रखना और सुरक्षा है। इसलिए अभिभावक होने के आधार पर उन्हें ऐसे ही दख़ल का अधिकार होगा, जिनमें लड़कियों के हितों की सुरक्षा हो।

1. बालिग़ लड़की को धमका कर मनोवैज्ञानिक दबाव के द्वारा निकाह के लिए तैयार करना:

यह मामला ज़ोर-ज़बरदस्ती का है। दबाव डालकर तलाक़ और निकाह के स्थापित होने और न होने के बारे में शरीअत के माहिरों और फ़ुक़्हा में मतभेद है। चारों इमामों में से इमाम अबू हनीफ़ा स्थापित होने के पक्ष में हैं।

1. मिशकात/270
2. मिशकात/270

इमाम शअ्बी, नख़ई और सौरी का भी यही कहना है। ये लोग इस मामले में दबाव को प्रभावी नहीं मानते हैं, जबकि बाक़ी तीनों इमाम.....इमाम शाफ़ई, इमाम मालिक और इमाम अहमद बिन हम्बल दबाव डालकर किये गये निकाह के स्थापित होने के पक्ष में नहीं हैं और ज़ोर-ज़बरदस्ती को निकाह व तलाक़ के मामले में प्रभावी मानते हैं।

हज़रत अबू-हनीफ़ा के अलावा तीनों इमामों ने नबी क़रीम (सल्ल०) के क़ीमती फरमान:

"لا طلاق في إغلاق" (۱)-

''ज़ोर-ज़बरदस्ती का तलाक़ भरोसा योग्य नहीं है'' से दलील दी है।

हांलाँकि हनफ़ी लोगों ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) के फ़रमान:

"ثلاث جدهن جدوهزلهن جد: الطلاق والنكاح، والرجعة" (۲)-

''तीन चीज़ें ऐसी है जिनमें गम्भीरता भी गम्भीरता है। हँसी-मज़ाक़ भी गम्भीरता है: तलाक़, निकाह और रजअत (अर्थात औरत की तरफ़ लौट आना)'' से अपनी दलील को मज़बूत किया है। हँसी-मज़ाक़ की स्थिति में शरीअत ने निकाह और तलाक़ को भरोसा योग्य माना है जबकि ऐसी हालत में समझदार बालिग़ इन्सान, घोषणा वाले शब्दों का प्रयोग करता है। मात्र उसके आदेश पर राज़ी नहीं होता है तो शरीअत ने उसका भरोसा किया और लागू किया। दबाव की स्थिति में जिसपर दबाव डाला जाता है वह अपने इरादे से निकाह व तलाक़ के शब्दों का प्रयोग करता है जो कारण (सबब) में पूर्ण हैं लेकिन वह उसके आदेश पर राज़ी नहीं है, इस लिए ज़ोर-ज़बरदस्ती को अप्रभावी माना जायेगा। उसके निकाह व तलाक़ को सही क़रार दिया जाएगा।(3)

1. मिशकात/270 2. मिशकात/270 3. मिरक़ातुल मफ़ातीह

अल्लामा कासानी ने 'बदाइउस्सनाइअ' में ज़ोर ज़बर दस्ती की तलाक़ और निकाह के स्थापित होने पर बहस करते हुए लिखा है:

"शरअ़ी घोषणा की दो क़िस्में है: लिखित और मौखिक। फिर लिखित की दो क़िस्में हैं: एक क़िस्म वह है जिसके टूटने की संभावना नहीं होती है। वह ये हैं....तलाक़, आज़ादी, रजअत, क़सम (शपथ) नज़र (मिन्नत), ज़िहार (बीवी को माँ की पीठ क़रार देना) फैय (लड़ाई में मिला माल), ... सहयोग दान और क़िसास (बदले की सज़ा) में क्षमा-ये सब घोषणाएँ। हमारा मानना है कि ज़ोर-ज़बरदस्ती के साथ वैध हैं। (1)

2-निकाह में ज़ोर-ज़बरदस्ती प्रभावी नहीं:

यह भी दबाव की स्थिति है कि लड़की अपनी वास्तविक सहमति के बिना भी अगर वह किसी दबाव या ज़ोर-ज़बरदस्ती के कारण 'हाँ' कह देती है और मौखिक रूप से निकाह को स्वीकार कर लेती है तो उसका कहना और घोषणा का भरोसा होगा। और निकाह ठीक और वैध हो जायेगा। निकाह के सही होने पर दबाव का कोई असर नहीं पड़ेगा। लेकिन अगर लड़की ने मौखिक रूप से घोषणा या 'हाँ' कहने के बजाय किसी लिखित निकाह-नामा पर हस्ताक्षर कर दिए। उदाहरणार्थ: मैंने क़ुबूल कर लिया या मुझे मंज़ूर है, तो उसको मान्यता नहीं मिलेगी। (2)

3-सामाजिक अन्तर को ध्यान में रखना:

शरीअत के माहिरीन ने जिन चीज़ों में किफ़ाअत (निकाह में बराबरी)

1. बदाइउस्सनाइअ़ 6/194 शरहुन्निक़ाया 2/529, अल बहरुर्राइक़ 8/127, बदाइउस्सनाइअ़ 7/184, दुररुल हुक्काम फ़ी शरहि ग़ररुल अहकाम, दुर्रे मुख़्तार अला हामिशुद्दुर 5/86

2. रद्दुल मुहतार अला हामिशुद्दुर 3/21

का भरोसा किया है उनमें सबसे अहम चीज़ तक़्वा (परहेज़गारी) है। अत: अगर दीनदार और तक़्वा वाली लड़की का रिश्ता उसके घर वाले किसी फ़ासिक़ (बेअमल) लड़के से करना चाहें तो वह लड़का उस लड़की के लिए बराबर स्तर का नहीं क़रार पायेगा। लेकिन सवाल से यह स्पष्ट नहीं हो रहा है कि ब्रिटेन और हिन्दुस्तान के माहौल से क्या तात्पर्य है। किस चीज़ को आधार बनाकर सामाजिक अन्तर की बात कही जा रही है। स्पष्ट रहे कि माहौल की स्वतन्त्रता, नँगापन, अश्लीलता और इस तरह की दूसरी चीज़ों में किफ़ाअत का भरोसा नहीं किया जाएगा और न इन्हें सामाजिक अन्तर का आधार कहा जा सकता है।

4. दबाव में किये गये निकाह को निरस्त करने का अधिकार क़ाज़ी शरीअ़त को है:

ज़ोर-ज़बरदस्ती साबित हो जाने के बाद काज़ी शरीअत या काज़ी शरीअत न होने पर शरअ़ी कौंसिल को निकाह निरस्त करने का अधिकार होगा।

☆☆☆

ज़बरदस्ती की शादी

मौलाना क़ाज़ी अब्दुल जलील क़ासमी
इमारत-ए-शरईय: पटना

1. निकाह एक ऐसा बन्धन है जो जीवन भर के लिये किया जाता है, इसी लिये मुताअ (सामयिक निकाह) सर्व सम्मति से अवैध है और यही कारण है कि महरम औरतों की सूची प्रस्तुत करने के बाद शेष सभी औरतों से निकाह को वैध रखा गया है, लेकिन इस सिलसिले में अतिरिक्त हिदायतें दी गई कि ऐसे दो लोगों में यह रिश्ता किया जाये जिनसे जीवन भर इसे स्थायी रखने की आशा हो। कुछ निर्देश अनिवार्य हैं जबकि कुछ निर्देश बेहतर और उचित हैं जैसे उम्र शिक्षा, रहन-सहन आदि।

2. लड़कियों के अभिभावकों को अच्छी तरह यह बात बताई जाये कि यह सम्बन्ध जिन उद्देश्यों के लिए जोड़ा जाता है उनमें सफ़लता के लिये अनिवार्य है कि यह सम्बन्ध आपसी रज़ामन्दी से पूरी तरह सोच समझ कर किया जाये।

3. हनफ़ी उलमा ने अवैध इकराह (ज़बरदस्ती) की दो क़िस्में की है: (1) इकराह मलजई (2) इकराह ग़ैर मलजई।

इकरा मुल्जी: यह है कि जान से मारने या कोई अंग भंग करने या सारा माल नष्ट करने की धमकी हो।

इकराह ग़ैर मुल्जी: यह है कि जान से मारने या किसी अंग के भंग करने की धमकी न हो जैसे कम समय की क़ैद या ऐसी पिटाई की धमकी हो जिससे जान जाने या किसी अंग भंग का डर न हो।

"تقسيم الإكراه إلى ملجئ وغير ملجئ يتفرد به الحنفية، فالإكراه الملجئ عندهم هو الذى يكون بالتهديد بإتلاف النفس أو عضو منها أو بإتلاف جميع المال أو بقتل من يهم الإنسان أمره ..... والإكراه غير الملجئ هو الذى يكون بمالايفوت النفس أو بعض الأعضاء كالحبس لمدة قصيرة، والضرب الذى لايخشى منه القتل أو تلف بعض الأعضاء" (1)-

हनफ़ी उलमा के अतिरिक्त दूसरे फक़ीहों के यहां इकराह की ये दो क़िस्में नहीं हैं, लेकिन उन्होंने इकराह के होने या न हाने से बहस की है। इससे पता चलता है कि उनके विचार में इकराह केवल वही है जिसको हनफ़ी उलमा इकराह मलजई कहते हैं। जिस इकराह को इनफ़ी उलमा ग़ैर मलजई कहते हैं उसके बारे में उनके यहां मतभेद है। इमाम शाफ़ई और इमाम अहमद से एक रिवायत है कि यह इकराह मान्य है।

दूसरी रिवायत है कि यह इकराह मान्य नहीं है।

"أما غير الحنفية فلم يقسموا الإكراه إلى ملجئ وغير ملجئ كما فعل الحنفية، ولكنهم تكملوا عما يتحقق به الإكراه ومالا يتحقق، ومما قرروه في هذا الموضوع يؤخذ أنهم جميعا يقولون بما سماه الحنفية إكراها ملجئا، أما مايسمى بالإكراه غير الملجئ فإنهم يختلفون فيه. فعلى إحدى الروايتين عن الشافعي وأحمد يعتبر إكراها، وعلى الرواية الأخرى لايعتبر إكراها" (2)-

1. अल मौसूअतुल फिक़्हया: (इकराह की बहस भाग-6, पृ0 105)

2. अल मौसूअतुल फिक़्हया: 6, पृ0 105)

4. फक़ीहों ने इकराह के होने की जो शर्त बयान की है उनमें से एक यह है कि क़त्ल या अंग भंग की धमकी हो या अंग के बचे रहते हुए उसके प्रयोग योग्य होने को नष्ट की धमकी हो या आबरू बर्बाद करने की धमकी हो।

"الشريطة الثالثة: أن يكون ما هدد به قتلا أو إتلاف عضو ولوبإذهاب قوته مع بقائه كإذهاب البصر أو القدرة على البطش أو المشي مع بقاء أعضائها أو غيرهما مما يوجب غما يعدم الرضا، ومنه تهديد المرأة بالزنى والرجل باللوط" (1)-

5. समझदार बालिग़ लड़की को डरा धमका कर या मार पीट कर या मनोवैज्ञानिक दबाव में लाकर या पास पोर्ट नष्ट करने की कठोर धमकी देकर उससे निकाह के लिये हां कहलवा लिया जाता है। यह वास्तव में हनफ़ी उलमा के मतानुसार इकराह ग़ैर मुलजी है और शाफ़ई और हम्बली उलमा के यहां एक रिवायत के अनुसार इकराह नहीं है।

6. हनफ़ी फ़िक्ह व फतवे की किताबों में इकराह के प्रभावों पर चर्चा की गई है, उनका निचोड़ यह है कि वे मामले जो निरस्त नहीं हो सकते या जिनमें पक्षों को उन मामलों को निरस्त करने या बाक़ी रखने का अधिकार देना उचित नहीं है, उनमें इकराह चाहे मुलजी ही क्यों न हो, प्रभावी नहीं है उन्हीं में से निकाह भी है, इस लिए यदि इकराह के साथ निकाह किया जाये तो हनफ़ी उलमा के यहां निकाह सही होगा।

"ولكنهم استثنوا من ذلک بعض التصرفات فقالوا بصحتها مع الإكراه ولو كان ملجئا، ومن هذه التصرفات: الزواج، والطلاق، ومراجعة

1. अल मौसूअतुल फिक़्हया: भाग-6 पृ0 101,102,

الزوجة والنذر واليمين'' (١).

हनफ़ी फ़क़ीहों ने इसका कारण यह बयान किया है कि विधाता ने इन मामलों में केवल शब्दों को उनके अर्थो का प्रतिनिधि ठहराया है, जब शब्द पाये जायेंगे तो अर्थ पर उनका प्रभाव पड़ेगा, चाहे बोलने वाला इस अर्थ का इरादा करे या न करे, उस पर पड़ने वाले प्रभाव से राज़ी हो या न हो।

''**وعللوا هذا بأن الشارع اعتبر اللفظ في هذه التصرفات۔ عند القصد إليه۔ قائما مقام إرادة معناه، فإذا وجد اللفظ ترتب عليه ۔ثه الشرعی، وإن لم يكن لقائله قصد إلى معناه كما في الهازل، فإن الشارع اعتبر هذه التصرفات صحية إذا صدرت منه مع انعدام قصده إليها، وعدم رضاه بما يترتب عليها من الآثار''** (٢).

7. हम्बली उलमा के यहां भी इकराह के साथ यदि निकाह किया जाये तो सही होगा।

''**يختلف أثر الإكراه عند الحنابلة باختلاف المكرهعليه، فالتصرفات القولية تقع باطلة مع الإكراه إلا النكاح، فإنه يكون صحيحا مع الإكراه قياسا للمكره على الهازل''** (٣)، **وإذا عقد النكاح هازلا أو تلجئة صح، لأن النبى ﷺ قال: ثلاث هزلهن جد، وجدهن جد: الطلاق والنكاح والرجعة۔ رواه الترمذی۔ وعن الحسن قال: قال رسول الله ﷺ: من نكح لاعبا أو طلق لاعبا أو أعتق لاعبا جاز، وقال عمر: أربع جائزات إذا تكلم بهن: الطلاق والنكاح**

1. अल मौसूअतुल फिक्हिया: भाग-6 पृ0 106
2. अल मौसूअतुल फिक्हिया: भाग-6 पृ0 106
3. अल मौसूअतुल फिक्हिया: भाग-6 पृ0 110

والعتاق والنذر. وقال علي: أربع لا لعب فيهن: الطلاق والعتاق والنكاح والنذر" (١).

8. इमाम शाफ़ई के मसलक में तो कुँवारी बालिग़ लड़की पर अभिभावक को ज़बर दस्ती का अधिकार प्राप्त है अर्थात उसका निकाह करने के लिये अभिभावक को उससे अनुमति लेने की आवश्यकता ही नहीं है, ऐसी स्थिति में उनके यहां निकाह के बारे में अभिभावक की ओर से ज़बरदस्ती का कोई सवाल ही नहीं है।

"ولا يجوز للولي إجبار البكر البالغة على النكاح خلافا للشافعي، له الاعتبار بالصغيرة، وهذا لأنها جاهلة بأمر النكاح لعدم التجربة، ولهذا يقبض الأب صداقها بغير أمرها (٢).

ولا يجوز للأب والجد تزويج البكر من غير رضاها صغيرة كانت أو كبيرة لما روي عن ابن عباس أن النبى ﷺ قال: الثيب أحق بنفسها من وليها. والبكر يستأمرها أبوها في نفسها. فدل على أن الولي أحق بالبكر وإن كانت بالغة فالمستحب أن يستأنها للخير" (٣).

9. यह बात भी विचारणीय है कि ब्रिटेन और दूसरे देशों में बसने वाले मुसलमान वहां के समाज में फैले बिगाड़, अश्लीलता, बे परदगी से बचने के लिये तो नहीं, अपनी बच्चियों की शादी हिन्दुस्तान पाकिस्तान के दीनदार घराने में कराना चाहते है? और लड़कियां जो इस बिगाड़ की आदी हो चुकी होती हैं वे किसी भी तरह यह सहन नहीं करतीं, कि उस गन्दे माहौल से अलग करके उस माहौल में उनको लाया जाये जो उनके स्वार्थ के विपरीत

1. अल मुग़नी 6/335
2. हिदाया: भाग-2 पृ0 294
3. अल मजमूअ्: भाग-16 पृ0 165

है, यह छवि उनकी इन खराबियों के ज़िम्मेदार उनके मां-बाप और अभिभावक की है लेकिन वे अपनी ग़लती पर लज्जित हो कर अपनी बच्चियों को उस गन्दे माहौल से निकालना चाहते हैं और इसके लिये वे ज़बरदस्ती करते हैं तो इसको ग़ैर शरअ़ी इकराह कहना मेरे विचार में उचित नहीं होगा, चूंकि इस इकराह में न कोई अत्याचार है और न कोई गुनाह।

"إلـاكـراه بـحـق- هـو الإكـراه المشروع أي الذي لاظلم فيه ولا إثم- وهـو ما توافر فيه أمران: الأول: أن يحق للمكره التهديد بما هدد به- والثانى: أن يـكـون الـمـكره عليه مما يحق للمكره الإلزام به، وعلى هذا فإكراه المرتد عـلـى الإسـلام إكـراه بـحـق حيـث توافر فيه الأمران- وكذلك إكراه المدين الـقـادر عـلـى وفاء الدين وإكراه المولي على الرجوع إلى زوجته أو طلاقها إذا مضت مدة الإيلا" (1)-

10. ब्रिटेन और अन्य पश्चिमी देशों में रहने वाली लड़कियों और भारत-पाक में बसने वाले लड़कों के बीच जो सामाजिक अन्तर है, यदि इससे तात्पर्य वहां की नग्नता बे परदगी है तो स्पष्ट है कि इन हालात में यह कहना कि लड़का लड़की का कुफ़ू नहीं है, इस लिये कुफ़ू न होने के आधार पर निकाह निरस्त करने का अधिकार है, उचित नहीं है। दूसरी बात यह है कि कुफ़ू न होने पर आपत्ति का अधिकार अभिभावक को होता है लड़की को नहीं, इसलिये इस पर और अधिक चर्चा की आवश्यकता नहीं है।

11. हां यदि निकाह के बाद क़ाज़ी के सामने यह बात सिद्ध हो जाये कि यह निकाह ग़ैर शरअ़ी और जबरदस्ती किया गया है तो वह इस निकाह को निरस्त कर सकता है, इसलिए कि अधिकार विहीन इकराह अवैध है, बड़ा

1. अल मौसूअतुल फिक़्हया: भाग-6 पृ0 104

गुनाह (कबीरा गुनाह) और दीन के मामले में लापरवाही है इसलिये अन्याय है और अन्याय को मिटाना क़ाज़ी का दायित्व है।

"الإكـراه بغير حق ليس محرما فحسب بل هو أحد الكبائر، لأنه أيضا ينبـئ بقلة الاكتراث بالدين، ولأنه من الظلم وقد جاء فى الحديث االقدسى: يا عبادي إني حرمت الظلم على نفسي وجعلته بينكم محرما فلا تظالموا" (1)-

☆☆☆

1. अल मौसूअतुल फिक़्हया: भाग-6 पृ0 101

ज़बरदस्ती की शादी

मुफ्ती अनवर अली आज़मी
दारूल उलूम मऊ

1,2. जिन फ़क़ीहों के मतानुसार इकराह प्रभावी है उनके यहाँ निकाह मान्य नहीं होगा। हनफ़ी उलमा के विचार में ज़बरदस्ती निकाह के लागू होने में प्रभावी नहीं है, हनफ़ी उलमा इकराह को मज़ाक़ के साथ जोड़ कर उस स्थिति के मामलों में निकाह, तलाक़ और इताक़ (दास मुक्त करना) को लागू करते हैं, इसलिये तीनों इमामों के विपरीप हनफ़ी उलमा के विचार में निकाह लागू होगा, हां इमाम अबू हनीफ़ा के प्रसिद्ध शिष्य इस मसले में अलग मत रखते हैं, उनके विचार में ज़बरदस्ती किया हुआ निकाह निलम्बित रहेगा, इकराह के समाप्त होने के बाद अगर मुकरह (शादी के लिये जिस पर ज़बरदस्ती की गई थी) अनुमति दे तो लागू होगा और यदि इन्कार कर दे तो अवैध हो जायेगा। (1)

3. दोनों को सामाजिक अन्तर कुफू न होने के लिये पर्याप्त नहीं है, जब तक कि दूसरा भरोसेमन्द कारण मौजूद न हो।

4. यदि शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने से पहले ही दम्पति में अलगाव हो गया तो पति पर कुछ भी मेहर अनिवार्य नहीं होगा, जैसे पति कुफू नहीं था, लड़की ने कुफू न होने का दावा किया और क़ाज़ी ने अलगाव

1. बदाए भाग 7 पृ0 188, हिदाया रद्दुल मुहतार बहवाला हाशियतुल मुदख़ल भाग 1 पृ0 401

करा दिया था निकाह समान मेहर से कम पर हुआ था, पति से समान मकहर की मांग की गई और उसने इन्कार कर दिया। दूसरी तरफ़ बीवी मेहर में कमी पर राज़ी नहीं है तो क़ाज़ी अलगाव करा दे तो इस तरह की स्थिति में पति पर कुछ भी मेहर अनिवार्य नहीं है, क्योंकि अलगाव की मांग औरत की तरफ़ से आती है, (1) और यदि शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो चुके थे तो फिर इसकी दो स्थितियां हैं, या तो शारीरिक सम्बन्ध पति की तरफ़ से ज़बरदस्ती हो औरत उसके लिये बिल्कुल राज़ी न हो या उसकी रज़ामन्दी के साथ यह सम्बन्ध हो, ज़बरदस्ती की स्थिति में औरत को कुफ़ू न होने और मेहर के समान मेहर से कम होने के, के आधार पर अलग होने की मांग का अधिकार प्राप्त है। (2)

5. इस स्थिति में क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को निकाह निरस्त करने का अधिकार प्राप्त होगा।

इसकी स्पष्ट दलील नबी (सल्ल0) की सुन्नत में मौजूद है खन्सा बिन्ते ख़िज़ाम का निकाह उनके पिता ने कर दिया, वह बालिग़ थी और इस निकाह पर राज़ी नहीं थी और अल्लाह के रसूल (सल्ल0) के पास आई फिर आप (सल्ल0) ने उनका निकाह निरस्त कर दिया (3)

इमाम नसाई और इमाम अहमद ने हज़रत आयशा की रज़ि0 सनद से एक दूसरी घटना का भी उल्लेख किया है कि एक जवान औरत का निकाह उसके पिता ने अपने भतीजे से ज़बरदस्ती कर दिया था वह उल्लाह के रसूल

1. बदाइउस्सनाइअ़ भाग 6 पृ0 198

2. बदाइउस्सनाइअ़ भाग 6 पृ0 199

3. बुख़ारी बरिवायत ख़न्सा बिन्ते ख़िज़ाम और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ बरिवायत इब्ने उमर, नसबुर्राया बहवाला अल फ़िक़्हुल इस्लामी व अदिल्लातहु भाग 5 पृ0 404

(सल्ल0)के पास आई, आप (सल्ल0) ने मामला औरत के हवाले कर दिया। (1)

अल्लाह के रसूल (सल्ल0) का अमल हमारे लिये सबसे बड़ी दलील है। ज़बरदस्ती की स्थिति में आप (सल्ल0) ने एक अवसर पर लड़की को अधिकार दिया और एक अवसर पर निकाह निरस्त कर दिया, इन दोनों हालतों से लड़की की कठिनाई दूर की जा सकती है।

☆☆☆

1. अल फ़िक़्हुल इस्लामी व अदिल्लातहु भाग 5 पृ0 404

ज़बरदस्ती की शादी का शरअ़ी आदेश

मौलाना अख़्तर इमाम आदिल
जामिया रब्बानी मनोरवा शरीफ़ समस्तीपुर

निकाह एक ऐसा सम्बन्ध है जो दो व्यक्तियों को उम्र भर के लिये एक बन्धन में बांध देता है और दोनों को जीवन भर इस सम्बन्ध को निभाना होता है, इसीलिये इसको दोनों पक्षों की रज़ामन्दी और स्वतन्त्रता पर आधारित रखा गया है और इस मामले में ज़बरदस्ती करने से रोका गया है। हदीसों में स्पष्ट निर्देश है:

हज़रत अबू हुरैर: रिवायत करते हैं कि नबी करीम (सल्ल0) ने फ़रमाया:

"لاتنكح الثيب حتى تستأمر ولاتنكح البكر حتى تستأذن وإذنها الصموت" (1)-

"विधवा का निकाह उसके परामर्श के बिना और कुंवारी का निकाह उसकी अनुमति के बिना न किया जाये और कुंआरी की खामोशी उसकी अनुमति है।"

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 की रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने इरशाद फरमाया:

1. तिर्मिज़ी शरीफ़ भाग 1 पृ0 210 किताबुन्निकाह

"الأيم أحق بنفسها من وليها والبكر تستأذن وإذنها صماتها" (۱)۔

''विधवा अपने मामले में अभिभावक से अधिक हक़दार है, और कुंवारी से उसके मामले में अनुमति ली जाये और उसकी खामोशी उसकी अनुमति है।''

हज़रत अबू हुरैर: रज़ि0 हुज़ूरे अकरम (सल्ल0) का फ़रमान नक़ल करते हैं कि:

"اليتيمة تستأمر في نفسها فإن صمتت فهو إذنها وإن أبت فلا جواز عليها" (۲)۔

''कुंवारी लड़की से उसके मामले में पूछा जायेगा, यदि वह खामोश रहे तो अनुमति मानी जायेगी और यदि इन्कार करे तो उस पर कोई ज़बरदस्ती नहीं है।''

नबवी युग में उन मां-बाप का कभी उत्साह नहीं बढ़ाया गया जिन्होंने अपनी लड़कियों की शादी उनकी पसन्द के विरुद्ध कर दी।

यह रज़ामन्दी का रिश्ता है यह ज़िन्दगी भर का सौदा है, जीवन एक साथ लड़के लड़की को गुज़ारना है, मां-बाप का क्या है और न वे बहुत दिनों तक दुनिया में जीवित रहेंगे, लेकिन उनके बच्चों का जीवन अजीरन बनकर रह जायेगा या यह पवित्र बन्धन टूट कर बिखर जायेगा, इसलिये इस मामले में किसी तरह की ज़बरदस्ती से कदापि काम नहीं लेना चाहिये।

ईजाब व कुबूल रज़ामन्दी के प्रकट करने के माध्यम से:

लेकिन इसके बावजूद निकाह एक मामला है इसीलिये अन्य मामलों

1. तिर्मिज़ी शरीफ़ भाग 1 पृ0 210

2. तिर्मिज़ी शरीफ़ भाग 1 पृ0 210

की तरह इस को भी बैठ कर नियमित रूप से तय करना पड़ता है और मौखिफ रूप से ईजाब व कुबूल होता है, इसलिये इस मामले का आधार किसी गुप्त मामले पर नहीं है बल्कि स्पष्ट दलील पर रखा गया है अन्दर की पसन्द और नापसन्द को जानने के लिये ही ईजाब व कुबूल शरीअत में रखा गया है अन्यथा इसकी आवश्यकता नहीं थी इसलिये ईजाब व कुबूल वास्तव में अन्दर की पसन्द का प्रकटीकरण है, वास्तव में पसन्द है या नहीं अन्यथा बहुत से मामलों की तरह निकाह का आधार इस पर नहीं रखा गया है, हर व्यक्ति अपने प्रकटीकरण और शब्दों का पाबन्द है, यदि उसको पसन्द नहीं तो पसन्द का प्रकटीकरण क्यों? कहा जा सकता है कि ज़ोर ज़बरदस्ती या कुछ विकट परिस्थितियों में पसन्द व्यक्त करना पड़ती है परन्तु यह भी वास्तव में एक तरह से पसन्दीदगी ही का सबूत है कि उसने विकट परिस्थितियों के मुक़ाबले में अधिक आसान इस रिश्ते को समझा, बहर हाल रज़ामन्दी के अस्तित्व का इन्कार सम्भव नहीं, कमी और अधिकता संभव है परन्तु ज़बरदस्ती की स्थिति में भी किसी न किसी दर्जे में पसन्द मौजूद होती है, सदैव आदमी बड़ी मुसीबत की तुलना में छोटी मुसीबत को पसन्द करता है, जबकि वास्तव में मुसीबत को कोई भी पसन्द नहीं करता। यही हाल ज़ोर ज़बरदस्ती के निकाह का भी है। संभव है पक्षों में से किसी एक पक्ष को यह सम्बन्ध वास्तव में पसन्द न हो परन्तु सामने जो खतरे मंडरा रहे हैं उनसे बचने के लिये इस नापसन्दीदा सम्बन्ध को पसन्द करना पड़ता है अथति पसन्दीदगी और रज़ामन्दी हर स्थिति में मौजूद है चाहे किसी दर्जे की हो।

एक हदीस से मार्ग दर्शन:

इसी लिये इस्लामी फिक़्ह में सामान्य नियम के रूप में ईजाब व

कुबूल को आधार बनाया गया है और रज़ामन्दी व पसन्दीदगी को पैमानों से नापने से बचा गया है, एक हदीस में भी इस की तरफ़ मार्ग दर्शन किया गया है:

"ثلاث جدهن جد، وهزلهن، جد: النكاح، والطلاق، والرجعة" (۱)-

''तीन चीज़ें ऐसी है जिनमें गम्भीरता भी गंभीरता है और मज़ाक़ भी गंभीरता है, निकाह, तलाक़ और रजअत''

जबकि मज़ाक़ के समय इन्सान उपर्युक्त तीनों चीजों में से किसी चीज़ के मामले में वास्तव में गंभीर नहीं होता और न इन चीज़ों के करने का उसका कोई वास्तव में इरादा होता है लेकिन इसके बावजूद मात्र शब्दों की अदायगी पर आधार रखा गया है और गम्भीरता का आदेश लगा दिया गया, विचार किया जाये तो इरादे के सिलसिले में मज़ाक़ का मामला ज़बरदस्ती के मामले से अधिक कमज़ोर है, ज़बरदस्ती के मामले में इरादा तो होता है रज़ामन्दी नहीं होती और मज़ाक़ में कुछ नहीं होता।

निकाह का आधार रज़ामन्दी पर नहीं उसकी दलील पर है:

इसी तरह हदीस के इशारे से समझा जा सकता है कि निकाह के मामले में वास्तविक इरादा और रज़ामन्दी को कोई दखल नहीं है, सारे आदेश व्यक्त किये गये शब्दों पर आधारित होते हैं इसीलिये फ़क़ीहों ने इसमें रज़ामन्दी का नहीं रज़ामन्दी की दलील पर भरोसा किया है।

अल्लामा शामी (रह0) "**ليتحقق رضاهما**" की व्याख्या करते हुये लिखते हैं:

"**أي ليصدر منهما مامن شأنه أن يدل على الرضا إذ حقيقة الرضا غير**

1. मिशकात/ 284

مشروطة في النكاح لصحته مع الإكراه والهزل" (۱)۔

''रज़ामन्दी की दलील बनने वाले शब्द और अमल दोनों पक्षों की ओर से प्रकट हों इसलिये कि वास्तविक रज़ामन्दी निकाह में शर्त नहीं है क्योंकि निकाह ज़बरदस्ती और मज़ाक़ की हालत में भी हो जाता है।''

अल्लामा कासानी ने इसकी दो बुनियादें लिखी हैं: एक नक़्ली और दूसरे अक़्ली।

नक़्ली यह है कि अल्लाह तआला ने फरमाया:

"وأنكحوا الأيامى منكم" (۲)۔

''तुम में जो लोग बेनिकाह है उनका निकाह कराओ'' इस आयत के सामान्य होने में खुशी का निकाह और ज़बरदस्ती का निकाह दोनों सम्मिलित है।

अक़्ली आधार यह है कि यह एक मौखिक घोषणा है इस लिये कथन पर इसका आधार होगा ज़बरदस्ती इसमें प्रभावी न होगी:

"ولأن النكاح تصرف قولي فلا يؤثر فيه الإكراه كالطلاق والعتاق" (۳)۔

ज़बरदस्ती की शादी की अन्य समस्यायें:

फ़ुक़हा ने ज़बरदस्ती के निकाह के अन्तर्गत दूसरी समस्याओं को आधार बना कर चर्चाएं की हैं, परन्तु वास्तव में ज़बरदस्ती को ही एक मात्र आधार बनाने की आवश्यकता इसलिये हुई कि साधारण ज़बरदस्ती की शादी में बुनियादी तौर पर दो चीज़ों को पूरी तरह ध्यान में नहीं रखा जाता, सामान्य

1. रद्दुल मुहतार अलर्दरुल मुख़्तार भाग 4 पृ0 86 किताबुन्निकाह

2. सूरः नूर/32

3. बदाइउस्सनाइअ् भाग 6 पृ0 198 किताबुल इकराह

मेहर और कुफू या इस तरह कहा जाये कि ज़बरदस्ती का कारण भी इन्हीं दोनों चीज़ों में से किसी एक का असन्तुलन है और पक्षों में से किसी पक्ष की ओर से साधारण इन्कार भी इसी आधार पर होता है कि वह दूसरे पक्ष को अपना कुफू नहीं समझता या मेहर की मांगी गई मात्रा में कमी या अधिकता महसूस करता है इसीलिये फ़क़ीहों ने ज़बरदस्ती की शादी के अन्तर्गत इन दोनों बातों पर चर्चा की है और समाधान की विभिन्न राहों का प्रस्ताव किया है।

अल्लामा कासानी ने इस पर बड़ी लम्बी बहस की है, हम उसका निचोड़ प्रस्तुत करते है:

ज़बरदस्ती के निकाह की दो स्थितियां हैं:

1. ज़बरदस्ती की शादी लड़के का किया हो और लड़की राज़ी हो, इस स्थिति में यदि निर्धारित मेहर समान मेहर के बराबर या उससे कम है, तो कोई हानि नहीं, उसको समान मेहर तो देना ही था और यदि समान मेहर से अधिक है तब भी निकाह सही है हां समान मेहर के बराबर मेहर अनिवार्य रहेगा और इससे अधिक भाग निरस्त हो जायेगा और दोनों स्थितियों में ज़बरदस्ती करने वाले से मेहर का बदला नहीं लिया जायेगा इसलिये कि पति का माल नष्ट नहीं हुआ बल्कि उसका बदला मिल गया है।

2. और यदि ज़बरदस्ती की शादी लड़की की हुई हो और लड़का राज़ी हो, इस स्थिति में यदि निर्धारित मेहर समान मेहर के बराबर या अधिक है तब तो कोई हानि नहीं और यदि समान महर से बहुत कम हो तब भी निकाह सही है हां, इस स्थिति में देखना यह है कि पति कुफू है या नही यदि कुफू है तो उससे कहा जायेगा कि समान मेहर पूरा करो अन्यथा दोनों के बीच अलगाव कर दिया जायेगा, यदि पति समान मेहर पूरा करदे तो निकाह

लागू हो जायेगा और यदि इन्कार कर दे और औरत भी कम पर राज़ी न हो तो अलगाव करा दिया जायेगा, और यदि दोनों के बीच अब तक शारीरिक सम्बन्ध नहीं हुआ था तो पति पर कुछ अनिवार्य नहीं होगा।

लेकिन यदि औरत स्पष्ट रूप से या दलील से समान मेहर पर राज़ी हो जाये, मौखिक रूप से कह दे या पति को अपने ऊपर खुशी से अधिकार दे दे तो, औरत का अलगाव का अधिकार समाप्त हो जायेगा, और इमाम अबू हनीफ़ा के विचार में इसके अभिभावकों को भी अलग कराने का अधिकार नहीं रह जायेगा।

और यदि अलगाव के फ़ैसले से पहले पति औरत से ज़बरदस्ती सम्बन्ध स्थापित कर ले तो पति पर समान मेहर को पूरा करना अनिवार्य होगा और निकाह स्थापित हो जायेगा।

और यदि पति लड़की का कुफू न हो तो कुफू न होने के आधार पर लड़की और उसके अभिभावकों को अलगाव का अधिकार होगा, और यदि लड़की राज़ी भी हो जाये तो उसके अभिभावकों कों हर हाल में अलगाव कराने का अधिकार रहेगा। कुफू न होने की स्थिति में यदि पति ने पत्नी से संभोग न किया हो और अलगाव हो जाये तो पति पर कुछ अनिवार्य नहीं है।(1)

ज़बरदस्ती का निकाह हर हालत में सही है:

अर्थात हनफ़ी फिक़्ह में ज़बरदस्ती के निकाह के सही होने का मसला कभी बहस में नहीं रहा: अल्लामा शामी (रह0) के युग में कुछ लोगों की ओर से कहस्तानी के हवाले से यह विचार प्रस्तुत किया गया था कि

1. बदाइउस्सनाइअ़ भाग 6 पृ0 198 किताबुल इकराह

फुक़हा के यहां इस मामले में लड़का और लड़की के बीच फ़र्क़ है लड़के की ज़बरदस्ती शादी सही है। लड़की की नहीं अल्लामा शामी ने कठोरता से इसकी आलोचना की है, और इसको मात्र अन्धविश्वास कहा है और कहा कि कहस्तानी या किसी भी फ़क़ीह के यहां या किसी भी फ़िक़्ह की किताब में इस प्रकार का कोई अन्तर नहीं किया गया है, बल्कि हर हाल में मर्द और औरत दोनों के लिये शादी के सही होने का आदेश दिया गया है।

"وأما ما ذكر من أن نكاح المكره صحيح إن كان هو الرجل، وإن كان هو المرأة فهو فاسد فلم أر من ذكره وإن أوهم كلام القهستانى السابق ذلک بل عبارتهم مطلقة في أن نكاح المكره صحيح، كطلاقه وعتقه مما يصح مع الهزل ولفظ المكره شامل للرجل والمرأة، فمن ادعى التخصيص فعليه إثباته بالنقل الصريح" (1)-

अभिभावकों के इकराह की बहस:

बल्कि फुक़हा की बहसों पर विचार करने से एक बात और महसूस होती है कि ज़बरदस्ती की शादी के सम्बन्ध में सभी वार्ताओं की दिशा उस ज़बरदस्ती की तरफ़ है जो दूसरों की तरफ़ से या असम्बन्धित व्यक्तियों की ओर से सामने आया हो, यदि स्वयं अभिभावक अपने लड़के या लड़की पर ज़बरदस्ती करे, इससे फ़क़ीहों ने बहस नहीं की है और ज़बरदस्ती की सामान्य स्थितियों पर बस किया है शायद इसके दो कारण है:

1. जब दूसरों की ज़बरदस्ती निकाह के सही होने में प्रभावी नहीं जिनसे सामान्यत: हमदर्दी और भलाई की आशा नहीं की जा सकती तो अपने

1. रद्दुल मुहतार अलदुर्रुल मुख़्तार भाग 4 पृ0 87 किताबुन्निकाह

अभिभावकों की ज़बरदस्ती इससे ऊंचे दर्जे में प्रभावी होगा जिनमें स्नेह और भलाई का पहलू भारी होता है।

2. लड़का या लड़की अभिभावकों के जिस आग्रह को ज़बरदस्ती का नाम दे रहे हैं संभव है कि वास्तव में वह उनकी नासमझी हो और वास्तव में अभिभावक का इरादा उनके अच्छे भविष्य का निर्माण हो। आज के बच्चों की निगाह उन बारीकियों तक कहां पहुंच सकती है जहां तक उनके बड़ों की पहुंच सकती है, इसलिये क़ाज़ी और मुफ्ती को केवल बच्चों की चीख पुकार पर ध्यान नहीं देना चाहिये बल्कि उन वास्तविकताओं तक पहुंचने का प्रयास करना चाहिये जो इस मामले में संभव सीमा तक ध्यान में रखी जा सकती हैं।

इन विवरणों से निम्नलिखित समस्याओं पर प्रकाश पड़ता है:

1. इस्लामी शिक्षाओं और निकाह के बन्धन के स्वभाव की मांग यह है कि निकाह का मामला लड़का और लड़की की पूरी रज़ामन्दी से तय किया जाये, और इस मामले में किसी तरह की ज़बरदस्ती को रास्ता न दिया जाये अन्यथा, एक तो यह इस्लामी शिक्षाओं के विरुद्ध होगा, दूसरे इस निकाह से वे उद्देश्य प्राप्त न होंगे जो निकाह में मौलिक महत्व रखते हैं।

2. लेकिन यदि कोई व्यक्ति इन शिक्षाओं और निकाह के उद्देश्य को ध्यान में न रख कर लड़का और लड़की से ज़बरदस्ती किसी रिश्ते के बारे में 'हां' करा ले और लड़का और लड़की अपने अभिभावकों या अन्य हालात व समस्याओं का असाधारण दबाव महसूस करते हुए अपने मुंह से ईजाब व कुबूल कर ले तो इस्लामी फ़िक़्ह की रोशनी में यह निकाह सही हो जायेगा, इसलिये कि यह मौखिक घोषणाओं में से है जिनके सही होने में ज़बरदस्ती प्रभावी नहीं होती।

इसके अतिरिक्त ज़बरदस्ती की स्थिति में रज़ामन्दी बिल्कुल समाप्त नहीं होती, तुलनात्मक रज़ामन्दी मौजूद होती है फिर इरादा और रज़ामन्दी के मामले में ज़बरदस्ती का मामला मज़ाक़ से भी कमज़ोर है, इसलिये कि ज़बरदस्ती में इरादा होता है रज़ामन्दी नहीं होती जब कि मज़ाक़ में दोनों में से कुछ नहीं होता, इसके बावजूद मज़ाक़ का निकाह सर्व सम्मति से सही है इस के अनुसार ज़बरदस्ती का निकाह अधिक सही होगा।

3. ब्रिटेन के माहौल में रहने वाली लड़की और भारत में परवरिश पाने वाले लड़के के बीच जो सामाजिक अन्तर है, मात्र इस अन्तर को शरअ़ी कुफ़ू का आधार बनाना कठिन है, किफ़ाअत के अन्य मामले, नस्ल व रहन सहन, दीनदारी तक़्वा (परहेज़गारी) माल, व्यवसाय में यदि अन्तर न हो और उपयुक्त मामले लड़के व लड़की के बीच समान हों तो माल पश्चिम और पूरब या स्थान के अन्तर या सांस्कृतिक व सामाजिक अन्तर को कुफ़ू का क़ानूनी आधार नहीं बनाया जा सकता अन्यथा देहात का रहन सहन, शहर के रहन सहन से भिन्न होता है, एक क्षेत्र का रहन सहन दूसरे क्षेत्र से भिन्न होता है लेकिन फ़ुक़हा ने इनके कुफ़ू होने के लिये क़ानूनी दर्जा देने से इन्कार किया है।

"القروي كفوء للمدنى فلا عبرة بالبلد (در مختار) أي بعد وجود ما مر من أنواع الكفاءة، قال في البحر: فالتاجر في القرى كفء لبنت التاجر في المصر للتقارب" (1)۔

''देहाती शहरी का कुफ़ू है, अर्थात यदि कुफ़ू की तमाम चीज़ें मौजूद हों तो क्षेत्रीय भिन्नता का भरोसा नहीं, बहरुर्राइक़ में है कि देहाती व्यापारी

1. रद्दुल मुहतार भाग 4 पृ0 219

शहरी व्यापारी की बेटी का कुफू है इसलिये दोनों में व्यापारिक समानता मौजूद है।''

4. ज़बरदस्ती की शादी में यदि कुफू और समान मेहर दोनों को ध्यान में रखा गया हो तो निकाह सही और अनिवार्य होगा और पति पत्नी में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने के बाद पूरा मेहर अनिवार्य होगा और शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने से पहले यदि तलाक़ या अलगाव हो जाये तो आधा मेहर अनिवार्य होगा।

और यदि समान मेहर को ध्यान में न रखा गया हो तो पति को समान मेहर पूरा करने का आदेश दिया जायेगा, या औरत को कम पर राज़ी किया जायेगा, यदि दोनों स्थितियों में से कोई स्थिति न बन सके तो अलगाव करा दिया जायेगा। इस स्थिति में यदि अलगाव के फ़ैसले से पहले पति पत्नी से ज़बरदस्ती संभोग कर ले तो निकाह अनिवार्य हो जायेगा और पति पर समान मेहर पूरा करना अनिवार्य होगा और यदि अलगाव से पहले औरत से खुशी से संभोग कर ले तो इसका अर्थ यह होगा कि औरत समान मेहर से कम पर राज़ी हो गई है इसलिये निकाह अनिवार्य हो जायेगा और औरत के अलगाव का अधिकार समाप्त हो जायेगा।

और यदि दोनों पति पत्नी आपस में कुफू न हों तो औरत को अलगाव का अधिकार होगा, हां यदि अलगाव से पहले औरत स्पष्ट रूप से या संकेत में उस निकाह पर राज़ी हो जाये तो उसके अलगाव का अधिकार समाप्त हो जायेगा, इस स्थिति में यदि पति पत्नी के बीच शारीरिक सम्बन्ध हुआ और अलगाव हो गया तो पति पर कुछ भी मेहर अनिवार्य नहीं होगा, इसलिये अलगाव का कारण पति नही है, हां, यदि पति संभोग कर ले तो

निर्धारित मेहर अनिवार्य होगी।

5. क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के सामने यदि इस तरह का केस आये तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को दोनों के बयानों के बाद इस बात का विश्वास हो जाये कि लड़की को ज़बरदस्ती करके निकाह पर मजबूर किया गया था हालांकि लड़की किसी तरह निकाह स्वीकार करने पर राज़ी नहीं थी और न पति के साथ रहने पर राज़ी थी, तब भी उसको मात्र ज़बरदस्ती करके निकाह निरस्त करने का अधिकार नहीं होगा, शरअ़ी कौंसिल को दूसरे मामलों की भी छान बीन करनी चाहिये और यदि कोई भी चीज़ सुधार योग्य हो तो सुधार कर ले और बातचीत के माध्यम से लड़की को इस रिश्ते पर आमादा करे अन्यथा मात्र ज़बरदस्ती के आधार पर क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को निकाह निरस्त करने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

☆☆☆

ज़बरदस्ती की शादी

मुफ्ती महबूब अली वजीही
रामपुर

1,2. निस्सन्देह निकाह के लिये समझदार बालिग़ लड़की की रज़ामन्दी आवश्यक है। मुबारक हदीस इस पर बहुत सी दलीलें प्रस्तुत करती हैं, लेकिन एक वास्तविक रज़ामन्दी है और एक शाब्दिक और ऊपरी रज़ामन्दी है। निकाह, तलाक़, इत्क़ इनका सम्बन्ध व्यक्त होने और शाब्दिक रज़ामन्दी से है, यहां तक कि मज़ाक़ और बिना इरादा भी यदि निकाह, तलाक़, इत्क़ के शब्द ज़बान से अदा हो जायें तो निकाह, तलाक़, इत्क़ लागू हो जयोंगे। तो मामूली ज़बरदस्ती और इकराह के साथ निकाह स्थापित हो जायेगा, हां ऐसी ज़बरदस्ती जिससे जान जाने का या किसी अंग भंग का संदेह हो मेरे विचार में इस से निकाह स्थापित नहीं होगा, ऐसी लड़कियां जिनका निकाह ज़बरदस्ती करा दिया जाता है, उनको ख़ुलअ का अधिकार प्राप्त है, वह मुस्लिम पंचायती संस्थाओं में खुलअ् प्राप्त कर सकती हैं। पासपोर्ट नष्ट करने की धमकी यदि लड़की के अनुमान के अनुसार सच्ची है तो यह भी ज़बरदस्ती की दूसरी स्थिति में सम्मिलित है। यदि लड़की को धोख देकर निकाह पढ़वाया जाये तो इस स्थिति में उसकी अनुमति नहीं होगी।

3. सामाजिक रहन सहन का अन्तर महत्वपूर्ण नहीं है, लड़की भारत

या पाकिस्तान में ब्याह कर आये तो उसको यहां के सांचे में ढल जाना चाहिये और लड़की यूरोप गई है तो उसको वहां के सांचे मे ढल जाना चाहिये।

4. निकाह के बाद जो शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होते है उसका आदेश अलग है और यदि नहीं स्थापित हुए हैं तो उसका आदेश अलग है जो फ़क़ीह लोग जानते हैं।

5. यदि लड़की किसी तरह भी पति के साथ रहना नहीं चाहती तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को पहले खुलअ् की कोशिश करना चाहिये, यदि पति खुलअ् के लिये राज़ी न हो तो फिर क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को निकाह के निरस्त करने का अधिकार है।

☆☆☆

जबरी शादी

डॉ0 मरवान मु0 महरूस आज़मी
(इराक़)

निकाह में किफ़ाअत का अर्थ और उसके निर्धारण में उर्फ़ का असर:

पहली बहस:

الكفاءة: (ज़बर और मद के साथ) और **المكافاة** शब्दकोष में "**كافا**" का मसदर है। ये दोनों संज्ञा के रूप में भी इस्तेमाल होते हैं और **الكفاء** बदला को कहते हैं, कहा जाता है **مالى به قِبَلٌ ولا كِفاء** अर्थात मुझे उस से बदला लेने की ताक़त नहीं। हज़रत हस्सान बिन साबित रजि0 का शेअर है **وروح القدس ليس له كفاء** (अर्थात जिबरील की कोई उपमा और मिसाल नहीं) हदीस में आया है **فنظرا ليهم فقال: من يكافى هؤ لاء** (आप ने उनकी तरफ़ देखा और फ़रमाया कौन है जो उन लोगों के बराबर हो) और अहनफ़ की हदीस में है **لا أقاوم من لا كفاء له** (मैं उससे मुक़ाबला नहीं करता जिसके बराबर कोई नहीं) **الكفاء، الكفوء، الكفيء**: नज़ीर और मसावी को कहते हैं इसी से है **الكفاءة فى النكاح** हम कहते हैं **فلان كفء فلانة** जब कोई मर्द किसी औरत का पति बन सकता हो, उसका बहुवचन **أكفاء** आती है। **تكافأ الشيئان**(1) का मतलब हुआ दो चीज़ें एक दूसरे के बराबर हुई

1. लिसानुल अरब, अल मोजमुल वसीत और अल मौसूअतुल फिक़्हया: प्रकाशन कूवैत, भाग 32

كـافأه، مكافأ ةً و كفاءً का मतलब है बराबर होना, अरब कहते हैं **الحمد لله** **كـفـاء الواجب** अर्थात अल्लाह तआला की शान के योग्य, हदीस में आया है **"المسلمون تتكافأ دماء هم"** अर्थात दियात और क़िसास में मुसलमानों के खून बराबर हैं।

फ़िक़्ह की परिभाषा में यह कई मायना में इस्तेमाल होता है जैसे **كـفـاء ة فـى الدماء، كفاء ة فى النكاح** निकाह के बाब में किफ़ाअत यह है कि कुछ ख़ास मामलों में पति पत्नी के बीच बराबरी हो।(1)

वे ख़ास मामलात यह हैं: पति का पत्नी के नस्ल, धर्म और घर आदि में बराबर होना। बरकती ने उस की परिभाषा यूं की है कि पति पत्नी के बीच कुछ विशेष मामलों में बराबरी का दर्जा हो (2)

मेरी राय इसी बुनियाद पर यह है कि निकाह में किफ़ाअत का अर्थ यह है कि उपर्युक्त मामलों में पति पत्नी के बराबर हो।

दूसरी बहस–उर्फ़ का परिभाषिक भावार्थ:

उर्फ़ शब्दकोष में उस चीज़ को कहते हैं जो रस्म व रिवाज और मामलात में लोगों के बीच प्रचलित है। उर्फ़ मारूफ़ को भी कहा जाता है और उर्फ़ घोड़े की गर्दन के बाल, और मुर्ग़ की कलग़ी को भी कहते हैं इसी तरह उर्फ़ समन्दर की मौज और ऊंची जगह के लिए भी बोला जाता है। (3) **عَـرَفَ، عَـرُفَ عَرِفَ** आदि ऐसी क्रियाएं हैं जिनके भिन्न-भिन्न रूप आते हैं

1. अल बहरुराइक, भाग 3 पृ0 137, दुर्रुल मुख़्तार व रद्दुल मुहतार भाग 3 पृ0 84, मौसूअतुल फ़िक़्हिया भाग 32
2. अलबरकती अत्तारीफ़ातुल फ़िक़्हिया
3. अल मुअ़जमुल वसीत भाग 2 पृ0 595

और हर रूप के शब्द कोष के अनुसार कई अर्थ है लेकिन वह हमारी बहस से बाहर हैं। हमने अपनी बहस से संबंधित अर्थ नक़ल कर दिये हैं। रहा उर्फ़ का परिभाषिक अर्थ, तो अब्दुल्लाह बिन अहमद अलनसफ़ी ने ''अलमुस्तफ़ी'' में उसकी परिभाषा इस तरह की है।

उर्फ़: वह चीज़ है जो अक़्ली लिहाज़ से लोगों के मन मासिक में बैठ गई हो और जिसे कोमल स्वभाव ने कबूल कर लिया हो। (1)

इब्न आबिदीन ने उर्फ़ से संम्बन्धित अपने रिसाला में यही परिभाषा अल इश्बाह लिलबीरी के हवाले से और उन्होंने अलमुस्तस्फ़ी के हवाले से नक़ल की है। (2)

लेकिन यह परिभाषा मुकम्मल नहीं है क्योंकि इसमें इस बात का स्पष्टीकरण नहीं है कि दिल में क्या चीज़ बैठी और वह क्या है, जिसे कोमल स्वभाव वाले कुबूल करें। मुनासिब था कि परिभाषा के अन्दर यह बात भी आती कि वे काम जो दिल में बैठ जायें और क्रिया में सकारात्मक और नकारात्मक दोनों आते हैं (क्योंकि क्रिया का न होना भी एक क्रिया है। (3) जानकर किसी चीज़ से रुकना भी क्रिया है इसी वजह से इस पर इन्सान से हिसाब लिया जायेगा।

बरकती ने इस की परिभाषा इस तरह की है 'उर्फ़' वह है जिस को अक़्ल की शहादत के साथ दिल मान जायें और कोमल स्वभाव कुबूल कर

1. मुलाहज़ा हो अहमद फ़हमी अबू सिना अल उर्फ वल-आदत फ़ी राइल फ़ुक़हा भाग- 19, पृ0 8, मतबा अज़हर।

2. इब्ने आबिदीन, रिसाल: नशरूल उर्फ़ फ़ी बिनाइ बाजुल अहकामि अलल उर्फ़। मज़कूरा तारीफ़ में लफ़्ज़ आदत का इज़ाफ़ा है।

3. निसारुल उकूल फ़ी इल्मुल उसूल अज़ डा0 मुहम्मद महरूसुल मुदर्रिस

लें। (1)

वर्तमान युग की एक जमाअत ने उसकी परिभाषा यूं की है कि वह क्रिया व कथन या तर्क है जो आम लोगों मे परिचित हो जाये और लोग उसपर चलने लगें। (2) लेकिन यह दलील भी पूरी तरह भारी भरसक नहीं हैं, क्योंकि:

1. अहल् मन्तिक़ के मुताबिक़ इस परिभाषा में ''दौर'' है क्योंकि इस में उर्फ़ शब्द परिचय पर आधारित है।

2. परिभाषा हक़ीक़ी नहीं जो अहले मन्तिक़ के नज़दीक शर्त है।

3. इस परिभाषा में तर्क को एक क्रिया नहीं क़रार दिया गया है जबकि जो बात मालूम है वह इस के विपरीत है (अत: तर्क को भी क्रिया की श्रेणी में रखना चाहिए) हमारी पसन्दीदा परिभाषा वही है जो नस्फी ने की है, उस कैद के साथ जो हम ने लगाई है।

अक्सर फुक्हा आदत और उर्फ़ को एक जैसा क़रार देते हैं। (3)

कुछ का कहना है कि आदत उर्फ से सामान्य और विस्तृत है। (4)

---

1. अलवरकती अत्ताअ़रीफ़ातुल फ़िक़्हिया

2. मु0 मुस्तफ़ा शलबी: अलमुद्खल फ़ित्तारीफ़ बिल फ़िक्हिुल इस्लामी, दारुन्नहज़ा अल अरबिया 1969 ई0 260, और देखिए अब्दुल वहहाब ख़लाफ़, इल्म उसूलुल फ़िक़ह, दारुल क़लम, कुवैत, पृ0 89 और इसी मफ़हूम में डा0 अब्दुल करीम ज़ैदान की अल वजीज़ फ़ी उसूलिल फ़िक़ा, मकतबतुल क़ुदस पृ0 252, और डा0 मुस्तफ़ा ज़ुहैली की असबाब इख़्तिलाफ़ुल फ़ुक़हा फ़िल अहकामिश्शरइया, बग़दाद पृ0 503

3. इन में से इब्ने आबिदीन, और साहिबुल मुसतसफ़ा हैं और जदीद फ़ुज़ला में से डा0 अब्दुल करीम ज़ैदान, डा0 मुस्लफ़ा ज़ुहैली और अब्दुल वहहाब ख़ल्लाफ़ हैं।

4. इन में से से इब्ने अमीरुल हाज और अल क़राफ़ी हैं और इब्नुल हुमाम ''अत्तहरीर'' में कहतें हैं कि उर्फ़ आदत से आम है।

मेरी राय यह है कि यह मात्र परिभाविक मसला है और "ولـــــا مشاحة فی الاصطلاح" (परिभाषा में तर्क वितर्क की कुछ ज़रूरत नहीं) और यह मालूम ही है कि स्वयं परिभाषा भी एक खास क़िस्म का उर्फ़ होता है, अत: इस पर ग़ौर किया जाना चाहिए। (1)

उर्फ़ कभी अमली होता है और कभी क़ौली। उर्फ़ अमली वह है जिस पर अमल होता हो, चाहे वह सामान्य हो जैसे बिना किसी समय या मज़दूरी के निर्धारण के हमाम में दाखिल होना या किसी शहर के साथ खास हो, जैसे देहात वालों का सरमाया चौपायों की सूरत में होना।

उर्फ़ क़ौली, शब्दों से होता है। इसे किसी विशेष अर्थ पर दलालत करने के लिए गढ़ा जाता है, लिहाज़ा वह खास होता है, अगर लोगों के एक वर्ग के बीच बोला जाये तो वह खास होगा, जैसे जीव विज्ञान के माहिरीन ज़मीन में जो खुदाईयां आदि डायनामाइट के ज़रिये करते हैं, उन्हें वह ज़िलज़ाली (ज़लज़ला से संबंधित) रिसर्च का नाम देते हैं, जबकि ज़लज़ला का एक परिचित अर्थ हैं जो उसके अतिरिक्त है।

और अगर तमाम लोगों के बीच परिचित हो तो उसे साधारण कहेंगे जैसे शब्द "**دابة**" का प्रयोग चौपाया पर, हांलांकि शब्द कोष में "**دابة**" हर उस चीज़ को कहते हैं जो ज़मीन पर रेंगे।

इस तरह शब्द कोष के उर्फ़ मजाज़ के क़बील से होते हैं। अर्थात आगे बढ़ करके जिन को दूसरे शब्द के अर्थ में इस्तेमाल कर लिया जाता है और कोई ऐसा क़रीना होता है जो अस्ल को मुराद लेने से रोकता है।

तमाम क़िस्म के मजाज़ात कभी हक़ीक़त भी बन जाते हैं इस की दो शर्तें हैं:

---

1. निसारुल उकूल/ मरजा साबिक़

1. जैसे ही बोला जाये वही अर्थ ज़ेहन में आये।

2. उसकी नफ़ी न की जा सके।

अत: कुछ हक़ीक़तें शरअ़ी होती हैं और कुछ ख़ास उर्फ़ी जो मुख़्तलिफ़ ख़ास क़िस्म के आराफ़ में बदल जाते हैं और कुछ आराफ़ सामान्य होते हैं जबकि सभी उनका इस्तेमाल करते हैं।

मुसलमान फ़ुक्हा ने उर्फ़ पर भरोसा और उस पर अमल करने के लिए कई शर्तें लगायी हैं। उनमें कुछ अहम शर्तें निम्न लिखित हैं।

1. यह है कि उर्फ़ सामान्य हो या ग़ालिब हो ''अलइशबाह व अन्नज़ाइर'' में कहा है: आदत अगर मुस्तक़िल हो या ग़ालिब हो तो उसका भरोसा होगा और अगर सिर्फ़ मशहूर हो तो उसका भरोसा न होगा। (1)

2. यह कि कुछ लोगों कि राय के मुताबिक़ उर्फ सामान्य हो क्योंकि अहकाम की बुनियाद के लिए मोतबर उर्फ़ के सिलसिले में इख़्तिलाफ़ है कि वह सिर्फ़ उर्फ़ आम हो या मुतलक़ उर्फ़?

मेरा यह कहना है और इसी पर अमल भी किया जाता है कि तर्क क़यास और विशेष क़यास में उर्फ़ विशेष का एतेबार होगा अतएव जब बल्ख वालों का यह मामूल हो गया कि बुनने वाले को बुने गये कपड़े का कुछ हिस्सा मज़दूरी के रूप में दे देते तो चूकिं उसकी हुरमत 'आटा पीसने वाले की नाप' पर क़यास करते हुये क़यासी तौर पर साबित होती थी, जिसकी स्पष्ट मनाही नबी (सल्ल0) से नक़ल की है, इसलिए यहां क़यास को विशेष अर्थ के माध्यम से विशेष कर दिया गया। (2)

---

1. अल-इशबाह, इब्ने नुजैम भाग-1 पृ0 128, अल बरकती, अल क़वाइदुल फ़िक़्हिया क़ायदा न0 55

2. मशइख़ बल्ख़ मिनल हंफ़िया अज़ डा0 मुहम्मद महरूसुल मुदर्रिस/2

3. यह कि उर्फ़ शरीअत विरोधी न हो।

4. यह कि वह उर्फ़ जिस पर घोषणा को आधारित बनाया जाये, इन्शा, घोषणा के वक़्त मौजूद हो, इस तरह कि उर्फ़ घोषणा के वक़्त से पहले ही से मौजूद चला आ रहा हो, और उसके वक़्त में भी हो तब तुलना होगी, चाहे घोषणा क़ौल से हो या अमल से।

अल- इश्बाह के लेखक कहते हैं: (1)

''वह उर्फ़ जिस पर शब्दों को महमूल किया जायेगा वह मुतवाज़ी (सामानानतर) होगा जो पहले से मौजूद हो, (2) बाद में वजूद में न आया हो इसलिए फ़ुक्हा कहते हैं कि तारी होने वाले उर्फ़ का भरोसा नही।

हिक्मत के साथ शरीअत देने वाले ने सालेह उर्फ़ का लिहाज़ किया है, क्योंकि लोग जिस तरीक़ा के आदी हों और उस पर अमल पैरा हों इस से उन को निकालने में कठिनाई और कड़ी मशक़्क़त होगी। अन्बिया किराम को सख्त मुश्किलें इसीलिए पेश आती हैं कि वह लोगों को उन के फ़ासिद रिवाजों से बाहर निकालते हैं।

इस्लामी शरीअत ने उन रिवाजों का भी लिहाज़ किया जो इस्लाम से पहले दौर में राइज थे। कुछ सही को बाक़ी रखा और जो शरीअत विरोधी थे, उन्हें बातिल क़रार दिया, इस की मिसालें बहुत हैं।

मसलन शरीअत ने बैअ़, शिरकत, वकालत, रेहन और इजारह आदि

---

1. अल-अशबाह, भाग-1, पृ0 133

2. अशबाह की व्याख्या करने वाले हमवी इस इबारत पर तबसरा करते हुए लिखते है: ''यानी बोलने के वक़्त से मुक़द्दम, हत्ता कि वह उस वक़्त तक साबित शुदा बन जाए और जो उर्फ़ अभी अभी वजूद पज़ीर हुआ हो उस का एतेबार नहीं होगा और न उस के मुताबिक़ किसी साबिक़ लफ़्ज़ की तावील की जागगी''। माख़ूज़ मुहम्मद मुस्तफ़ा शलबी: अल मुदख़ल फ़ित्तारीफ़ बिल फ़िक़्हुल इस्लामी, दारुन्नहज़ा अल अरबिया 1969ई0 पृ0 264

को बाक़ी रखा।

जबकि बादशाह अपने लिए जो ज़मीनें खास करते हैं उनको बैअ् लमुनाबिज़ा, बैअ् लमुलामसा, तलक़्क़िर्रूकबान (सवारों से पहले ही सामान हासिल कर लेने की कोशिश) बैअ् लहाज़िर लिलबादी (शहरी का देहाती से देहात ही के दर पर बैअ् करना) आदि को अवैध क़रार दिया।

तीसरी बहस–किफ़ाअत का उद्देश्यः

किफ़ाअत की शर्त का भरोसा करने न करने के बारे में फ़ुक्हा का मतभेद है, कुछ हनफ़ी इमामों इमाम करखी और ताबईन में से इमाम हसन बसरी इसका भरोसा नहीं करते। करखी कहते हैं: मेरे विचार में ज़्यादा सही यह है कि निकाह में किफ़ाअत का भरोसा ही न किया जाये, क्योंकि जो चीज़ निकाह से भी ज़्यादा अहम है, मसलन दैत आदि के मसाइल, उनमें किफ़ाअत मोतबर नहीं, इसलिये ज़्यादा बेहतर यह होगा कि निकाह में भी इसका भरोसा न हो। (1)

हनफ़ी उलमा में अधिक संख्या इसका एतेबार करती हैं और इसका कारण उनके विचार में यह है कि मामले सही तौर पर सामान्यता बराबर के लोगों में ही अन्जाम पाते हैं। निकाह उन्हीं मामलों के बेहतर प्रबन्ध की खातिर शरीअत में वैध किया गया है। असमान लोगों के बीच उमूमन मामलात ठीक से अन्जाम नहीं पाते। शरीफ़ औरत किसी ज़लील के बिस्तर की शोभा नहीं बनना चाहती। वह इसमें अपमान महसूस करती है। और इसलिए भी कि निकाह ससुराली रिश्तों के स्थायित्व के लिए वैध किया गया है, जिस से दूर का क़रीबी और मददगार बन जाये। आप की खुशी उसकी खुशी हो और ऐसा

1. सरख़सी की अल मब्सूत भाग-5, अल बदाए भाग 2 पृ0 317

अनुकूलता और आपसी निकटता के ज़रिये ही हो सकता है। निकटता नस्ल की दूरी से पैदा नहीं होगी। इसी तरह ग़ुलामी या (ग़ुलाम होकर) आज़ाद होने आदि से भी नहीं होगी, इसलिए असमान लोगों से निकाह करना ऐसा अक़्द (बन्धन) होगा जो अपने उद्देश्य से दूर होगा। हनफ़िया, हसन की रिवायत में जो फ़तवा के लिए ज़्यादा पसन्दीदा है और लख्मी, इब्ने फ़रहून, इब्ने सलमून (मालकिया में से) उस तरफ गये हैं कि किफ़ाअत निकाह के सेहत मन्द होने के लिए शर्त है। (1) यही इमाम अहमद से भी एक रिवायत है।

उनकी दलील यह है कि जब किफ़ाअत क़िताल (युद्व)में मतलूब है तो निकाह में तो ऊंचे दर्जे में मतलूब होगी, क्योंकि निकाह तो उमर भर के लिए किया जाता है, जो रहन-सहन उलफ़त व मुहब्बत, अच्छे और नये रिश्ते बनाने जैसे उद्देश्यों पर आधारित होता है और यह उद्देश्य एक दूसरे के हमसर और बराबर के लोगों में बेहतर तरीक़ा पर हासिल हो सकते हैं, फिर यह कि औरत के किसी के मिलकियत में होने में इसके लिए एक तरह की ज़िल्लत पाई जाती है। नबी (सल्ल0) ने स्वयं उस की तरफ इस तरह संकेत किया है: **"النكاح رق فلينظر أحدكم أين يضع كريمته"** (निकाह एक तरह की ग़ुलामी है, लिहाज़ा तुम में से हर एक शख़्स ग़ौर कर ले कि वह अपनी शरीफ़ ज़ादी को किस के हवाले कर रहा है) अपने को ज़लील करना हराम है, जैसा कि नबी करीम (सल्ल0) ने फरमाया ''कि मोमिन के लिए जायज़ नहीं कि अपने आप को ज़लील करे) जिस ज़िल्लत की इजाज़त है, वह ज़रूरत की वजह से है और ऐसे शख़्स के बिस्तर की शोभा बनना जो उसके हमसर न हो, ज़्यादा बड़ी ज़िल्लत है, जिस की कोई ज़रूरत नहीं है, इस लिए किफ़ाअत का भरोसा किया गया। (2)

1. अल मौसूअतुल फ़िक्हिया अल कुवैतिय
2. सरखसी की अल मब्सूत भाग-5

उलमा ने कहा है: किफ़ाअत दम्पति सम्बन्ध को बरक़रार रखने के लिए मोतबर क़रार दिया गया है, क्योंकि औरत प्राकृतिक रूप से अपने से कमतर का बिस्तर बनने पर अपमान महसूस करती है बिस्तर के कम दर्जा होने से उसे नफ़रत होती है और उसे और उसके अभिभावकों को अपमान होता है, इसी तरह पति औरत से कम दर्जा का हो तो भी उसे अपमान महसूस होगा, फिर जो औलाद होगी बाप की तरफ़ ही सम्बनधित होगी। (1)

चौथी बहस–फ़क़ीहों के भरोसे का क्षेत्र:

फ़ुक़हा का इसमे मतभेद है कि किफ़ाअत किन मामलों में होगी।

हनफ़ी उलमा की राय यह है कि यह निम्न लिखित छह मामलों में मोतबर होगी।

ख़ानदान, इस्लाम, आज़ादी, माल, दीनदारी, पेशा।

शाफ़ई उलमा की राय यह है कि इस का भरोसा ख़ानदान, ऐब से खाली होने, दीनदारी, नेकी, पेशा और आज़ादी में होगा। (2) उनके यहां माल या खुशहाली में किफ़ाअत का ज़िक्र नहीं मिलता है।

---

1. हिदाया की व्याख्या बिदाय: भाग-1 पृ0 200, साहिबे बहरुर्राइक़ शरह कन्ज़ुद्दक़ाइक़ लिखते हैं: **إن المصالح لا تنتظم إلا بين المتكافتين عادة، ولأن الشريفة تأبى أن تكون مستفرثة للخسيس، بخلاف زوجها، لأن الزوج مستفرش فلا تغيظه دنائة الفراش"** (मसालेह उमूमन बराबर दर्जा के लोगों के दरमियान बेहतर तौर पर अंजाम पाते हैं। इस की ज़रूरत यूं भी है कि एक शरीफ़ ज़ादी किसी कमतर का साथी (बिस्तर) नहीं बनना चाहेगी। उस के पति का मामला उसके विपरीत है, क्योंकि पति साथी (बिस्तर) नहीं बल्कि मुसतफ़रिश (बिस्तर से फ़ाइदा उठाने वाला) है, लिहाज़ा फ़िराश के कम दर्जा होने से उसे नफ़रत नहीं होगी) अरब मुल्कों के पर्सनल ला में से अनेक ने किफ़ाअत का भरोसा किया है, चुनान्चे शाम और उरदुन के क़वानीन में इस की सराहत है। इस बारे में उन के क़वानीन ज़्यादातर हन्फ़ी फ़िक़ा से मुतास्सिर हैं।
1. मुग्नीयुल मोहताज भाग 3, पृ0 166, मुहाज़रात फ़ी अक़दिन्निकाह, मुहम्मद अबु ज़ुहरा 190 ता 191

जहां तक हम्बली उलमा की बात है तो इस सिलसिले में इमाम अहमद से दो रिवायतें हैं, एक तो इमाम शाफ़ई के मसलक के मुताबिक़ है, ऐब से खाली होने की शिक़ (धारा) को छोड़कर, और दूसरी रिवायत में किफ़ाअत का भरोसा अल्लाह से डरने और खानदान में किया गया है, बाक़ी में मतभेद है।

इमाम मालिक के यहां खानदान, पेशा, माल या खुशहाली में किफ़ाअत का भरोसा नहीं है। उनके विचार में सिर्फ दीनदारी अल्लाह के डर और ऐब से खाली होने में इसका भरोसा है और आज़ादी के बारे में दो रिवायतें हैं, एक में उसका भरोसा किया गया है, दूसरी में नहीं किया गया है।

किफाअत के मामलों में मसलकों के इमामों ही के बीच नहीं बल्कि एक ही मसलक के इमामों के बीच इख्तिलाफ इस बात की दलील है कि किफ़ाअत का मसअला इज़ाफ़ी और भिन्न है और इसमें काल व स्थान के प्रभाव का दख़ल है।

फिर यह कि किफ़ाअत के मामलों की हदबन्दी इस तरह नही हुई जैसे ज़कात वाली आयत में ज़कात की मदों की हदबन्दी की गयी है। इसी वजह से उनके बारे में फुक्हा के बीच मतभेद हुआ, इस सिलसिले में जिन मामलों की भी हदबन्दी की गयी है वह उर्फ़ पर आधारित हैं। इसलिए समय व स्धान के फ़र्क़ से किफ़ाअत के आदेशों में मतभेद हो गया। कुछ फुक्हा ने इस हक़ीक़त की तरफ़ साफ़ तौर पर संकेत भी कर दिया है, ''अलबदाइअ'' के मुसन्निफ़ ने लिखा है:

''فلا يكون الفقير كفأ للغنية؛ لأن التفاخر بالمال أكثر منن التفاخر بغيره عادة وخصوصا في زماننا هذا''۔

''ग़रीब आदमी मालदार औरत का कफ़ू नहीं होगा, क्योंकि उमूमन माल की बिना पर अभिमान दीगर चीज़ों की वजह से अभिमान के मुकाबले ज़्यादा होता है खासकर हमारे इस ज़माने में'' तो उनके क़ौल: **خصوصا في زماننا هذا**" से पता चलता है कि उन्होंने अपने ज़माने के उर्फ़ पर इस हुक्म को क़यास किया।

पेशा में किफ़ाअत पर चर्चा की मुनासिबत से उन्होंने इमाम अबू हनीफ़ा के हवाले से लिखा है कि यह भी उर्फ़ पर आधारित होगा। वह कहते हैं: रहा पेशा तो कर्ख़ी ने ज़िक्र किया है कि पेशों और दस्तकारी में किफ़ाअत (बराबरी) इमाम अबू-यूसुफ़ के नज़दीक मोतबर है। इसीलिए पार्चाबाफ़, सोने के ताजिर और सुनार का कुफ़ू नहीं होगा। इसी तरह ज़िक्र किया गया है कि इमाम अबू हनीफ़ा रह0 ने इस सिलसिले में अरबों के इस नियम को बुनियाद बनाया कि उनके ग़ुलाम यह काम करते थे। लेकिन पेशे के तौर पर नहीं। इसीलिए उन्हें उनमें अपमान महसूस नहीं होता था। इमाम अबू-यूसुफ़ ने अपने ज़माने के लोगों के रिवाज़ को देख कर फ़तवा दिया कि वह इन कामों को पेशा बनाते थे और कमतर दर्जा के कामों में अपमान महसूस करते थे। इसी लिए हक़ीक़तन उनमें कोई मतभेद नहीं है। इसी तरह क़ाज़ी ने अपनी शरह 'मुख़्तसर अत-तहावी' में ज़िक्र किया है कि पेशा में किफ़ाअत का एतेबार होगा। (1)

उपर्युक्त दलील में स्पष्ट इशारा है कि इमाम अबू-हनीफ़ा ने इस सिलसिले में अरबों के रिवाज पर क़यास किया, तो अगर ज़माना बदल जाये तो हुक्म बदला जा सकता है। ''यह नियम प्रचलित है'' ज़माना के तबदीली से आदेश बदलने का इन्कार नहीं किया जा सकता।

---

1. बदाइउस्सनाइअ् भाग 2

हक़ीक़त में ज़माना नहीं बदलता, ज़माने वाले बदलते हैं। और फलस्वरूप उनका अमल बदलता है।

इसी तरह हमने देखा कि इमाम अबू-यूसुफ ने आदेश की बुनियाद देश के वासियों के रिवाज पर रखी है। इब्नुलहम्माम ''अल-फ़तह'' में कहते हैं:

''فإذا ثبت اعتبار الكفاء ة بما قدمنا – أي بالأدلة المذكورة سابقاً – فيمكن ثبوت تفصيلها بعرف الناس فيما يحقرونه ويعيرون به، فيستأنس بالحديث الضعيف في ذلک'' (1)-

जब पूर्व में बयान की गयी दलीलों से किफ़ाअत (बराबरी) का मोतबर होना साबित हो गया तो उसका विस्तार लोगों के उस रिवाज को देखकर कि वे किन चीज़ों को नीच समझते हैं और किन चीज़ों से उन्हें अपमान का एहसास होता है, साबित किया जा सकता हैं। इस सिलसिले में कमज़ोर प्रमाण वाली हदीस से दलील दी जा सकती है। उन्होंने आगे और कहा कि पेशा के अच्छे और घटिया होने में भरोसा हर ज़माना और हर जगह के रिवाज का होगा। पेशों के एक दूसरे से क़रीब या एक दूसरे से दूर होने का आधार रिवाज पर होगा।

किफ़ाअत के रिवाज पर आधारित होने ही की वजह से हम देखते हैं कि फ़ुक़्हा के बीच कई चीज़ों में मतभेद हुआ है। जैसे--

1–आदमी की दीनदारी के बारे में:

इमाम मुहम्मद की राय यह है कि इसका एतेबार होगा। हां! अगर फ़ासिक़ आदमी भी दबदबा रखने वाला हो और लोगों में शौकत वाला हो तो

1. अल फ़तह भाग 2 पृ0 418

ऐसी स्थिति में उसका भरोसा न होगा। इमाम अबू-हनीफ़ा इसका पूरी तरह भरोसा नहीं करते, क्योंकि फ़िस्क़ ख़त्म हो सकता है।

यही बात इमाम अबू-यूसुफ़ भी कहते हैं। सिवाय इसके कि फ़ासिक़ लोगों में ऐलानिया फ़िस्क़ को प्रकट करता हो, तो ऐसा आदमी शालीन लड़की का कुफ़ू (बराबर) नहीं हो सकता। (1)

2–पेशा:

इसका इमाम अबू-यूसुफ और इमाम मुहम्मद ने भरोसा किया है। लेकिन इमाम अबू-हनीफ़ा ने नहीं किया। इमाम अबू-यूसुफ़ से भी इमाम अबू-हनीफ़ा की तरह का कथन उल्लिखित है। सिवाय इसके कि पेशा बहुत ही घटिया दर्जे का हो। जैसे नाई, चमड़ा ठीक करने वाला और साइस।

3–माल:

माल व दौलत में बराबरी के भावार्थ में में विभिन्न रिवायतें है। कुछ लोगों ने इसका अर्थ लिया है कि मेह्र देने में समर्थ हो और कुछ ने रोटी व दूसरे खर्चो की सकत अर्थ लिया है। (2)

4–हसब:

इमाम मुहम्मद से यह रिवायत है कि वह इसका भरोसा करते हैं यहां तक कि जो नशा करता हो और बच्चे उसका मज़ाक़ उड़ाते हों, वह किसी शरीफ़ घराने की लड़की का कुफ़ू (बराबर) नही हो सकता है। इसी तरह अत्याचारी और जाबिरों के मददगार और साथी, उनमें से जिसको नीचा समझा जाता हो, वह भी किसी शरीफ़ घराने की लड़की का कुफ़ू नहीं होगा, सिवाय

1. सरख़सी की अल-मब्सूत भाग-5, और देखिए: अबु ज़ुहरा हवाला साबिक़

2. अबु ज़ुहरा/ 188

इसके कि लोगों में दबदबे और हैबत वाला हो।

इमाम अबू-यूसुफ़ से रिवायत है कि उन्होंने नशीली चीज़ का इस्तेमाल करने वाले व्यक्ति के बारे में फ़रमाया कि अगर वह उसे छुप कर इस्तेमाल करता हो और नशा की हालत में बाहर न निकलता हो तो वह कुफ़ू होगा और अगर उसको खुले तौर पर करता हो तो वह शरीफ़ घराने की लड़की का कुफ़ू नहीं हो सकता।

इमाम अबू-हनीफ़ा से इस सिलसिले में कुछ भी रिवायत नहीं। उनसे सही रिवायत यह है कि उसका भरोसा नहीं होगा। क्योंकि यह कोई ऐसी ज़रूरी चीज़ नहीं जिसे छोड़ा न जा सकता हो। (1) उपर्युक्त मतभेद से पता चलता है कि किफ़ाअत के आदेशों की बुनियाद उन लोगों के ज़माने में प्रचलित प्रथा पर थी, इसलिए अबू-यूसुफ ज़ालिमों के हिमायतियों को भली औरत का कुफ़ू नहीं मानते। अगर उनको ज़लील समझा जाता हो। लेकिन अगर वे लोगों में मर्तबा रखते हों तो फिर कुफ़ू होंगे। अर्थात उन्होंने समस्या की बुनियाद उस पर रखी कि लोग क्या समझते हैं?

हम इस विवादित समस्या में विभिन्न मतों को ज़िक्र करके उसे तूल देना नहीं चाहते। हमारा मक़सद यह था कि जब एक ही मसलक के क़रीब-क़रीब ज़माने के इमामों के बीच इस समस्या में इतना मतभेद हो गया तो ज़मान व मकान की दूरी के बाद कितना हो सकता है? यह आप समझ सकते हैं। इसी बात को शैख अबू-ज़ुहरा (रह0) ज़ोर देकर बयान करते हैं। क्योंकि वह किफ़ाअत को उन समस्याओं में गिनते हैं जो रिवाज के अन्तर्गत हैं। इसलिए कि दम्पति जीवन के स्थायित्व का तक़ाज़ा है कि पति और पत्नी

1. सरख़सी की अल मबसूत भा 5, अल बहरुर्राइक़ भाग 4 पृ0 133

दोनों के ख़ानदानों में आवश्यक निकटता पाई जाये।

पांचवीं बहस–रिवाज और वर्तमान में इसका प्रभावः

इस्लामी शरीअत ने यह स्वीकार किया है कि परिस्थितियों के बदलने का शरअ़ी और इज्तिहाद वाले आदेशों पर बड़ा असर पड़ता है। शरीअत का मक़सद यह है कि न्याय स्थापित हो, उद्देश्य प्राप्त हों, बुराइयों को ख़त्म किया जाए, इसीलिए बहुत-से ऐसे आदेश मिलते हैं जिनमें लोगों की परिस्थितियों और उद्देश्य बदलने से आदेश बदल जाते हैं तो अगर विधाता कोई ऐसा आदेश लागू करता जो न बदल सकता तो उससे लोगों को तंगी और हानि होती और यह इस्लाम के उद्देश्यों के विरुद्ध होता जिसने शरीअत के आदेशों की बुनियाद बंदों के हितों पर रखी है। इसलिए हम देखते हैं कि विधाता ने सम्पूर्ण आदेश दे दिए है और उनके विस्तार और उसकी शाखाओं को स्पष्ट नहीं किया। ताकि उनको परिस्थितियों के अनुसार लागू किया जा सके जो प्राकृतिक रूप से बदलते रहते हैं। इसी वजह से फ़िक़्हः-ए-इस्लामी हर ज़मान व मकान के लिए है। अगर आदेश इज्तिहाद के क़ाबिल न हो सकते तो यह बात नहीं कही जा सकती थी।

यही कारण है कि बाद के फ़ुक़्हा ने विभिन्न फ़िक़्ही मसलकों की बहुत-सी समस्याओं में अपने मसलक के इमामों और बुज़ुर्ग फ़ुक़्हा के फ़त्वों के विरुद्ध फ़तवे दिए हैं और यह स्पष्टीकरण दिया है कि मतभेद का कारण ज़माने का बदलाव है। अतः वह वास्तव में बुज़ुर्गो के विरुद्ध नही होते बल्कि बात यह है कि अगर पहले के फ़ुक़्हा बाद के फ़ुक़्हा के ज़माने में होते और रिवाज व स्वभाव और ज़रूरतों का भेद देखते, बल्कि संसाधनों का भेद

भी, तो वे भी वही बात कहते जो बाद के फ़ुक़्हा ने कही। (1)

हनफ़ी फ़ुक़्हा (क़ानूनदाँ) रिवाज के बारे में दूसरे मसलकों से ज़्यादा खुलेपन से काम लेते हैं। इब्ने आबिदीन ने एक रिसाला लिखा है जिसका नाम है: **"نشر العرف في بناء بعض الأحكام على العرف"** 'नश्रुल उर्फ़ फ़ी बिनाए बाज़िल-अहकाम अलल-उर्फ़'

और उन लोगों ने पहले के फ़क़ीहों के शाखाओं से लेकर विभिन्न नियम बनाये हैं, जो इस बात की दलील हैं कि जिन आदेशों के सिलसिले में कोई इजमाअ् या कुरआन व सुन्नत की दलील न हो उनमें रिवाज का भरोसा होगा। हम निम्न में उन नियमों का ज़िक्र करते हैं:

١ – العادة محكمة

1. रिवाज फ़ैसले का आधार होगा। (2)

٢ – الحقيقة تترک بدلالة العادة

2. रिवाज को देखते हुए वास्तविक अर्थ छोड़ दिया जाएगा। (3)

٣– استعمال الناس حجة يجب العمل بها

3. लोगों का इस्तेमाल दलील समझा जाएगा। उसपर अमल ज़रूरी होगा। (4)

٤– المعروف عرفا كالمشروط شرطاً

4. जो रिवाजों में प्रसिद्ध हो वह शर्त की तरह समझा जाएगा। (5)

---

1. देखिए इब्ने आबिदीन का रिसाला नशरुल उर्फ़, जो उन के मजमूआ रसाइल में शामिल है।
2. देखिये मुजल्लतुल अहकामुल अद्लीया की धारा 40, बरकती ने अपनी अल क़वाइदुल फ़िक़्हिया में इसे बयान किया है, क़ायदा न0 126
3. पूर्ववत धारा 40
4. पूर्ववत धारा 37
5. मुजल्लतुल अहकाम की धारा 43, अलबरकरती नियम 334

٥– التعيين بالعرف كالتعيين بالنص

5. रिवाज से निर्धारण नस्स से निर्धारण की तरह है। (1)

٦– لاينكر تغير الأحكام بتغير الأزمان

6. ज़माना बदलने से अहकाम में बदलाव कोई बुराई की बात नहीं। (2)

٧– العادة تجعل حكما إذا لم يوجد التصريح بخلافه

7. रिवाज को आदेश क़रार दिया जाएगा बशर्ते कि उसके विरुद्ध कोई स्पष्टता न पाई जाए। (3)

٨– العادة معتبرة في تقييد مطلق الكلام

8. सामान्य बात को विशेष करने में रिवाज का भरोसा होगा। (4)

٩– المعروف بين التجار كالمشروط بينهم

9. ताजिरों के बीच जारी रिवाज को शर्त की तरह समझा जाएगा। (5)

١٠– الثابت بالعرف كالثابت بالنص

10. उर्फ (रिवाज) से जो चीज़ साबित हो वह किताब व सुन्नत से साबित-शुदा चीज़ की तरह है। (6)

इब्ने आबिदीन रिवाज से सम्बन्धित अपने रिसाला में कहते हैं: मुफ़्ती पर लाज़िम है कि वह ज़ाहिरुर्रवाया की किताबों में नक़ल की गयी समस्याओं

1. धारा 45, मुजल्लतुल अहकामुल अदलिया की धारा 45 अल बरकती नियम 88
2. धारा 39
3. अल बरकती नियम 125
4. अल बरकती नियम 127
5. अल बरकती नियम 135
6. अल बरकती नियम 101

पर जमे न रहें कि अपने ज़माना और अहले ज़माना को ध्यान में न रखें और यह कि बहुत-से अधिकार नष्ट न करे और न उसकी हानि उसके लाभ से अधिक हो। (1)

इसीलिए आखिरी दौर के फुक़हा ने इमाम अबू-हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद व इमाम यूसुफ से कई समस्याओं में परिस्थिति बदलने को बुनियाद बना कर मतभेद किया। जैसे उन्होंने क़ुरआन की तालीम अज़ान और इमामत आदि की मज़दूरी को वैध क़रार दिया है। जबकि इमाम साहब और साहिबैन की राय इसके ख़िलाफ़ है।

इसी तरह यह समस्या कि इमाम अबू-हनीफ़ा ने हुदूद व क़िसास को छोड़ कर दूसरी समस्याओं में गवाहों के बारे में मात्र स्पष्ट रूप से न्यायी होने को काफ़ी समझा और उनके सत्यापन को ज़रूरी नहीं क़रार दिया। रसूलुल्लाह (स0) का यह इर्शाद है:

"المسلمون عدول بعضهم على البعض"

''मुसलमान आपस में क्षमाशील हैं।'' यह इज्तिहाद इमाम साहब के ज़माना के लिए तो ठीक था, क्योंकि उस समय भलाई का बोलबाला था। लेकिन जब इमाम अबू-यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद का ज़माना आया और झूठ आम हो गया तो ज़ाहिर अदालत को काफ़ी समझने में बिगाड़ का खतरा था और अधिकार के नष्ट होने का सन्देह था। इसलिए ज़माने के बिगाड़ के कारण उन्होंने कहा कि तमाम गवाहों का सत्यापन कराया जायेगा ताकि बिगाड़ को दूर किया जा सके। इसलिए फुक़्हा इस मतभेद के सिलसिले में कहते हैं कि यह दौर और ज़माना का भेद है। उन्होंने साहिबैन के कथन पर फ़तवा

1. नशरुल उर्फ़, मजमूआ रसाइल इब्ने आबिदीन भाग 2 अर्रिसाला 31

दिया है। (1)

इसी बुनियाद पर उलमा ने रिवाज को नियम बनाने के आधारों में से एक आधार समझा है। जिन समस्याओं में नस्स (दलील) नहीं और न उनपर सर्वसम्मति है, उनमें रिवाज के ज़रिये हुक्म लगाया जाता है। क्योंकि लोग अपने हितों और आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जिस रिवाज पर चलते हों उसका लिहाज़ रखना अनिवार्य है। (2) बशर्ते कि वह शरीअत के विरुद्ध न हों। विधाता ने विधान के सिलसिले में अरबों के उचित रिवाजों का लिहाज़ रखा है। लेकिन जो अनुचित रिवाज थे, उन्हें अवैध क़रार दिया। इसी तरीक़ा पर अब भी रिवाज पर आदेश जारी होंगे, जैसा कि इससे पहले उसकी तफ़सील उसकी शर्तों के अन्तर्गत गुज़र चुकी है।(3)

मेरी राय यह है कि किफ़ाअत उन मामलों में से है जिनका रिवाज पर बहुत आधार है। अतः शैख़ अहमद फ़हमी अबू सिनः की राय है कि किफ़ाअत भी अरबों के उन पुराने रिवाजों में से है जिन्हें इस्लाम ने जारी रखा है।

चूंकि हमारे ज़माने में रिवाज काफ़ी हद तक बदल चुके हैं। पूर्व के फ़कीहों के ज़माने की हालत बाक़ी नहीं रही इसीलिए अब फिर से किफ़ाअत के मामलों पर ग़ौर करना ज़रूरी है, बल्कि उन मामलों के अर्थ पर भी ग़ौर करना चाहिए ताकी दम्पति सम्बन्धों के स्थायित्व और उनकी बक़ा से सम्बन्धित

1. अल उर्फ़ वल आदा फ़ी रायिल फ़ुक़हा लि अहमद फ़ही अबू सिना पृ0 88, अबू सिना ने इन के अलावा और मिसालें भी अपनी किताब में ज़िक्र की हैं और शैख़ मुस्तफ़ा ज़रक़ा ने भी कई मिसालें अपनी किताब अल मुदख़लुल फ़िक़्ही अल आम अर्थात अल फ़िक़्हुल इस्लामी फ़ी सौबहुल जदीदी में ज़िक्र की हैं, भाग 1 पृ0 926–929

2. इल्म उसूलुल फ़िक़्ह लि अब्दिल वहहाब ख़ल्लाफ़क्ष्90

3. अबू सिना, हवाला साबिक़ पृ0 72, ख़ल्लाफ़, हवाला साबिक़

विधाता के उद्देश्य को हम काम में ला सकें।

आज औरत यूनिवर्सिटियों और विभिन्न क़िस्म के कॉलेजों में पढ़ रही हैं; विभिन्न मैदानों में काम कर रही हैं। जैसे मेडिकल, इंजीनियरिंग, टीचिंग आदि। नौकरी के ज़रिये वे अपनी रोज़ी कमा रही हैं।

पश्चिमी मुल्कों में टैक्नालॉजी के मैदान में ज़बरदस्त तरक़्क़ी के कारण बहुत सी धारणाएं बदल चुकी हैं। इस तरक़्क़ी में मुसलमान भी शामिल हैं। अब वहाँ अनपढ़ उसे कहा जाता है जो कम्प्यूटर को ऑपरेट न कर सकता हो, जबकि तीसरी दुनिया और विकासशील देशों में अनपढ़ होने की वही पुरानी और रिवायती धारणा प्रचलित है, अर्थात पढ़ना, लिखना न जानना! यूरोप, अमेरिका और जापान वग़ैरह बहुत-से मुल्कों में ज़िन्दगी आज आधुनिक यन्त्रों और विकसित तकनीक पर चलती है, जबकि ग़रीब मुल्कों में आज भी रिवायती संसाधनों पर भरोसा किया जाता है।

मैं कहता हूँ क्या इसकी रोशनी में किफ़ाअत की धारणा में बदलाव नहीं आना चाहिए?!

पेशा के सिलसिले में बाप के पेशे को देखा जाता था। क्योंकि काम आम तौर से बाप ही करता था और औरतें पिछले ज़मानों में बहुत कम काम करती थीं। हमारे फ़ुक़्हा ने पेशा की शर्त के सिलसिले में यही उल्लेख किया था। जैसे इमाम अबू-यूसुफ (रह0) से रिवायत है कि पेशा का भरोसा किया जाएगा। यहां तक कि दबाग़त देने वाला, नाई, जुलाहा और भिश्ती, कपड़ा-फ़रोश और अत्तार (गंधी) की बेटी के कुफ़ू नहीं होंगे। अर्थात इमाम अबू-यूसुफ ने इस सिलसिले में रिवाज का भरोसा किया। (1)

1. सरखसी की अल मब्सूत भाग-5

शिक्षा के सिलसिले में पूर्व के फ़क़ीहों ने बाप की शिक्षा का भरोसा किया है। इसलिए उनका कहना है कि आलिम की बेटी के बराबर कोई नहीं। क्योंकि इल्म की इज़्ज़त माल व नसब (नस्ल) की इज़्ज़त से बढ़कर है। (1)

इसको बुनियाद बनाकर क्या आधुनिक दौर में किफ़ाअत की धारणा में कोई तब्दीली नहीं होगी? क्या, हम अब भी बाप के पेशे को देखेंगे जबकि औरत विभिन्न मैदानों में काम कर रही है? क्या हम लड़की की योग्यता से ध्यान हटाकर बाप की शिक्षा को ही देखेंगे !

किफ़ाअत के आदेशों की बुनियाद ज़्यादातर समाजों के रिवाज पर है। यही फ़ुक़्हा का कहना है और इसी की तरफ़ हमने इशारा किया है।(2) लिहाज़ा वह औरत जो ब्रिटेन में पली बढ़ी और उसने वहीं शिक्षा पाई, उसका विकास भिन्न परिस्थिति में हुआ जो हिन्दुस्तान, बल्कि सारे पूर्वी देशों की भिन्न परिस्थितियों से भिन्न हैं। किफ़ाअत के मामलों में जहाँ तक हम समझते हैं, देश व शिक्षा की भिन्नता का ज़िक्र भी मुनासिब है!

इसके साथ ही यह इज़ाफ़ा भी कीजिए कि ब्रिटिश समाज, जैसे दूसरे समाजों में औरतें आम तौर से शिक्षित होती हैं और आधुनिक संचार माध्यमों का इस्तेमाल जानती हैं। विकसित वैज्ञानिक यन्त्रों से शिक्षित होती हैं जबकि वह मर्द जो हिन्दुस्तान और उस जैसे मुल्कों में पला बढ़ा हो अगर उसकी शादी किसी ब्रिटिश लड़की से कर दी जाएगी तो यह पति लड़की के मुक़ाबले में कमतर होगा और अपनी अज्ञानता और माहौल के भेद के आधार पर दूसरों की हंसी का निशाना बनेगा। उसके और उसकी पत्नी के बीच बड़ा फ़र्क़

1. दुर्रे मुख़्तार भाग-3 पृ, 90,92 उन्होंने यह भी लिखा है कि इसे अलबज़ाज़ी ने भी ज़िक्र किया हे और कमाल ने पसन्द किया है।

2. देखिए: 9,10

होगा। अगर लड़की ऐसा न करेगी तो समाज तो ज़रूर उसे नीची निगाह से देखेगा, जिससे वह अपनी पत्नी बीवी की निगाह में कमतर होगा। यह उसके लिए नुक़सानदेह है। उससे परिवारिक जीवन टूटेगा। दम्पति जीवन में स्थायित्व ख़त्म हो जाएगा और दम्पति के बीच प्यार और रहमत जो अल्लाह को वांछित है वह ख़त्म हो जाएगी।

मैं समझता हूं कि हमारे फ़ुक़्हा ने बाप और पति के पेशे में समानता और निकटता की शर्त से यह चाहा होगा कि औरत को एक जैसा माहौल मिले, बाप के घर में और पति के घर में। इसी तरह जहां उन्होंने पति की खुशहाली की शर्त लगाई है वहां भी उससे वांछनीय यही होगा कि पति पत्नी को ऐसा ही माहौल उपलब्ध कराये, जैसे में वह पली बढ़ी है।

यहीं से मन में यह सवाल उभरता है कि हमारे फ़ुक़्हा ने माहौल का मतभेद न होने को किफ़ाअत के मामलों में से क्यों नहीं क़रार दिया? यहां तक कि उन्होंने यह भी लिखा है कि देहाती, शहरी का कुफ़ू होगा। (1) तो मौजूदा दौर में वह मुल्कों के भेद को किफ़ाअत के न होने के कारणों में से कैसे शुमार करते हैं?

हम कहते हैं कि हम इसका भरोसा करते हैं। जब दोनों देशों की परिस्थितियों में अधिक अन्तर होगा, उदाहरणतः हिन्दुस्तान और ब्रिटेन का अन्तर। एक तो साइन्टिफ़िक और टैक्नालॉजिकल तरक़्क़ी की वजह से और दूसरे इस वजह से भी कि ब्रिटेन के रिवाज और परिस्थितियां इस्लामी और पूर्वी मुल्कों की परिस्थितियों से आम तौर से भिन्न हैं। लेकिन अगर यह सूरत हो कि दोनों मुल्क परिस्थितियों, आर्थिक स्तर और शिक्षा के विकास और हासिल की जाने वाली शिक्षा में, एक दूसरे से क़रीब हों, तो उस स्थान के

1. देखियेः सुयूती की फत्हुल क़दीर भाग 3 पृ0 298

बदलाव को, किफ़ाअत के कारण बदलने में से माना जाएगा। जैसा कि हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बंगलादेश की हालत है।

जो मतभेद हमारे फ़ुक़्हा ने ज़िक्र किया है वह उनके ज़माने की प्रचलित परिस्थितियों को प्रकट करता है। जहां शहर और गांवों में कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं होता था। फिर यह भी विचार योग्य है कि उन्होंने गांवं और शहर पर दारुल इस्लाम के अन्तर्गत बात की है। दारुल-कुफ़्र और दारुल-इस्लाम के भेद के बारे में उन्होंने बात नहीं की है।

चर्चा का निचोड़:

चूंकि किफ़ाअत का विषय उन विषयों में से है, जिनका ज़्यादातर दारो-मदार रिवाज पर होता है जैसा कि हमने बयान किया और आदेशों पर रिवाज के असर का ज़िक्र किया और यह कि बहुत से आदेश रिवाज बदलने से बदल जाते हैं। इसलिए वह औरत जो पश्चिमी मुल्क में पैदा हुई और वहीं रही, तीसरी दुनिया का आदमी उसका कुफ़ू नहीं होगा।

क्योंकि किफ़ाअत में जिस चीज़ का भरोसा है वह लड़की और उसके परिवार से अपमान और हानि को दूर करना है ताकि उस मुल्क के रिवाज की वजह से जहां वह रह रही है, उसे शर्म न दिलाई जाए और उस आदमी से शादी के कारण उसकी तौहीन न हो। क्योंकि किफ़ाअत लड़की ही के लिए शरीअत में रखी गई है। तो अगर उस आदमी से शादी उसके समाज के मुताबिक़ उसके लिए अपमान का कारण बने और पति दूसरों के मज़ाक का निशाना बन जाए, तो वह उस का कुफ़ू नहीं होगा।

किफ़ाअत के मामलों को अपनाने की कुछ सूरतों के वैध होने के लिए इमाम मुहम्मद रह0 का यह कथन प्रस्तुत किया जाता है:

"لاتعتبر الديانة، لأنها من أمور الآخرة فلا تبنى أحكام الدنيا عليه إلا إذا كان يصفع، ويسخر منه، أو يخرج إلى الأسواق سكرانا، ويلعب به الصبيان، لأنه مستخف به" (1)

दीनदारी का भरोसा नहीं होगा, क्योंकि यह आख़िरत के मामलों में से है। अत: उस पर दुनिया के आदेशों की बुनियाद नहीं रखी जाएगी सिवाय यह कि उसे थप्पड़ रसीद किया जाता हो और उसका मज़ाक़ उड़ाया जाता हो या वह नशा की हालत में बाज़ारों में निकलता हो और बच्चे उससे खेलते हों। क्योंकि इन परिस्थितियों में उसको हल्का किया जाता है। यह कथन अपने भावार्थ में बिल्कुल स्पष्ट है कि इमाम मुहम्मद दीनदारी को किफ़ाअत (बराबरी) में से इसलिए शुमार नहीं करते कि वह आख़िरत के मामलों में से है। हां! किफ़ाअत मोतबर होगी अगर पति दूसरों के मज़ाक का निशाना बन जाए। इससे भी पता चलता है कि किफ़ाअत का उद्देश्य दम्पति सम्बन्धों का स्थायित्व है और ऐसे ख़ानदान की बुनियाद है जो प्यार व रहमत पर आधारित हो। अगर ऐसा नहीं होता तो विधाता का मक़सद ही नष्ट हो जाता है। जैसा कि इर्शादे बारी तआला है:

"ومن آياته أن خلق لكم من أنفسكم أزواجا لتسكنوا اليها وجعل بينكم مودة ورحمة ان في ذلك لآيات لقوم يتفكرون" (2)-

''और यह उसकी निशानियों में से है कि तुम्हारे लिए तुम्हीं में से जोड़ा पैदा किया ताकि तुम उसके पास संतुष्टि पाओ और तुम दोनों के बीच

1. अल बहरुर्राइक़ 3/141, इसी मफ़हूम में अल हिदाया शरह अल बिदाया के लेखक ने भी इसे नक़ल किया है।

2. सूर: रूम 21

प्यार और रहमत पैदा किया, बेशक इसमें सोचने वालों के लिए निशानियां है''

चूँकि आदेशें के पीछे कारण होते हैं लेकिन उनकी बुनियाद हिक्मतें हैं, जिनके नियमित न होने की वजह से और कारणों के नियमित होने के कारण विधाता ने हिकमतों से बचा लिया है। लेकिन इस मामले में हिकमतें भी कारणों ही की तरह हैं।

☆☆☆

जबरी शादी

मुफ़्ती मुहम्मद सदरे आलम क़ासमी
इदारा महकमा शरईया, बदरबना, नेहरा, दरभंगा

1,2. चूँकि निकाह के मामले में ज़ोर ज़बरदस्ती प्रभावी नहीं है, इसलिए लड़की के अपनी जुबान से क़ुबूल के शब्द अदा कर देने के बाद चाहे जबरन ही क्यों न हो, उसे रज़ामंदी तसलीम किया जाएगा और निकाह स्थापित हो जाएगा। बदाइउस्सनाइअ़ में है:

"التصرفات الشرعية في الأصل نوعان: إنشاء و اقرار والإنشاء نوعان: نوع لايحتمل الفسخ ونوع يحتمله، أما الذي لايحتمل الفسخ: الطلاق والعتاق والرجعة والنكاح واليمين والنذر والظهار والإيلاء والفئ في الإيلاء والتدبير والعفو عن القصاص، وهذه التصرفات جائزة مع الإكراه عندنا، وعند الشافعي رحمه الله لاتجوز" (1)-

शरअ़ी घोषणाएं वास्तव में दो क़िस्म की हैं: इंशा और इक़रार। इंशा की दो क़िस्में हैं: एक क़िस्म ऐसी है जिसमें निरस्तीकरण का सन्देह नहीं होता है, और एक ऐसी क़िस्म है जिसमें निरस्तीकरण का सन्देह होता है। जिन घोषणाओं में निरस्तीकरण का सन्देह नहीं वह ये हैं: तलाक़, इताक़, रजअत, निकाह, यमीन, नज़्र, ज़िहार, ईला, फ़ै फ़िलईला, तदबीर और क़िसास से माफ़ी।

1. बदाइउस्सनाइअ़ भाग 6 पृ0 193

यह घोषणाएं ज़बरदस्ती के बावजूद हमारे विचार में जायज़ हैं, और इमाम शाफ़ई रह0 के विचार में नाजायज़।

3,4. निकाह क़ुबूल कर लेने के बाद ज़बरदस्ती की स्थिति ही सही अगर पति पत्नी के बीच शारीरिक सम्बन्ध क़ायम हो जाते हैं तो चूंकि यह उसकी रज़ामंदी है इसलिए उसका अलग होने का अधिकार समाप्त हो जायेगा। अगर लड़की क़ुबूल के शब्दों की अदायगी के बाद पहले ही की तरह इन्कार करती रहे, यहां तक कि शारीरिक सम्बन्ध तक की नौबत न आए तो यह उसके वास्तविक इन्कार की दलील है। उसको अलग होने का हक़ हासिल होगा। चूंकि आक़िला, बालिग़ा, अपने मामले में अधिकार वाली होती है, इसलिए किसी का दबाव उस पर सही नहीं। लिहाज़ा उसके बाप की हैसियत इस मामले में बाप की नहीं रही बल्कि वह दूसरे अभिभावकों की तरह हो गया। कम उम्र की लड़की के सिलसिले में यह शरअ़ी मत है कि अगर उसका निकाह बाप, दादा के अलावा अन्य अभिभावकों ने असमान लोगों में कर दिया तो उसको बालिग़ होने के बाद अलग होने का अधिकार मिलता है। जब नाबालिग़ जिसको अपने नफ़्स पर कोई अधिकार नहीं था उसको हक़ मिल रहा है, तो बालिग़ को तो ज़बरदस्ती की स्थिति में ऊंचे दर्जे में यह हक़ मिलना चाहिए, क्योंकि बाप ने उसके शरअ़ी अधिकार को पामाल किया है।(1)

5. इस सूरत में काज़ी या शरअ़ी कौंसिल को निकाह निरस्त कर देना चाहिए। क्योंकि यह निकाह के उद्देश्य और हितों का तक़ाज़ा है।

☆☆☆

1. बदाइउस्सनाइअ़ भाग 6 पृ0 198

जबरी शादी

मौलाना खुर्शीद अनवर आज़मी
जामिया मज़हरुलउलूम, वाराणसी

इस्लामी शरीअत ने समझदार बालिग़ ख़ातून को यह अधिकार दिया है कि वह अपनी शादी स्वयं कर सकती है। अगर कोई अभिभावक उसकी शादी करता है तो उसके लिए अनिवार्य और ज़रूरी है कि इस सिलसिले में उस ख़ातून से अनुमति हासिल करे। नबी अकरम (सल्ल0) ने स्पष्ट शब्दों में इस पर ज़ोर दिया है। नबी (सल्ल0) का कथन है:

"الأيم أحق بنفسها من وليها والبكر تستأذن في نفسها وإذنها صماتها" (१)-

बेवा अपने आप की अपने अभिभावक से ज़्यादा हक़दार है। कुंवारी से उसके बारे में इजाज़त ली जाएगी और उसकी इजाज़त उसका खामोश रहना है।

दूसरी रिवायत में है:

"الثيب أحق بنفسها من وليها والبكر يستأذن بها أبوها في نفسها وإذنها صماتها" (२)-

''सय्यिब (पति देखी हुई) अपनी शादी की अपने अभिभावक से ज़्यादा

1. सहीह मुस्लिम भाग 1 पृ0 455
2. सहीह मुस्लिम भाग 1 पृ0 455

हक़दार है। कुंवारी से उसके बारे में उसके पिता अनुमति लेंगे। उसकी इजाज़त उसका खामोश रहना है।''

यही कारण है कि नबी करीम (सल्ल0) ने हज़रत खन्सा बिन्त खुज़ाम का निकाह मात्र इस आधार पर निरस्त कर दिया था कि उनके बाप ने उनकी इच्छा के विपरीत उनका निकाह कर दिया था। (1) एवं उसी तरह की स्थिति में आप सल0 ने एक कुंवारी लड़की को अपने निकाह के बाक़ी रखने और उसके निरस्त करने का अधिकार दिया। (2)

लेकिन इसी के साथ यह भी एक हक़ीक़त है कि अगर किसी औरत को ज़बरदस्ती निकाह की अनुमति देने पर मजबूर किया गया और उसने दबाव को क़ुबूल करते हुए ज़ुबान से अनुमति दे दी तो वह निकाह सही हो जाएगा। इस वजह से कि निकाह व तलाक़ इन्सानों की उन घोषणाओं में से हैं जो ज़बरदस्ती होने पर भी लागू हुआ करती हैं।'नूरुलअनवार' में है:

''فإن كان القول مما لاينفسخ ولايتوقف على الرضا لم يبطل بالكرة كالطلاق ونحوه من العتاق والنكاح ..... فإن هذه التصرفات كلها لاتحتمل الفسخ ولا تتوقف على الرضاء فلو أكره بها أحد وتكلم بها لم يبطل بالكره وتنفذ على المكره'' (٣)۔

''अगर ऐसा कथन हो कि न निरस्त होता हो और न रज़ामंदी पर आधारित होता हो तो वह ज़बरदस्ती से अवैध नहीं होगा। जैसे तलाक़, अताक़, निकाह आदि। इस वजह से कि यह तमाम घोषणाएं निरस्त करने का सन्देह

1. सहीह बुखारी भाग 2 पृ0 771

2. अबू दाऊद भाग 1 पृ0 285

3. नूरुल अनवार पृ0 316

नहीं रखतीं और न रज़ामंदी पर आधारित होती हैं। इसलिए अगर किसी को इन चीज़ों पर मजबूर किया गया और उसने ज़ुबान से उन्हें कह दिया तो ज़बरदस्ती के कारण ये अवैध नहीं होंगे और जिस पर दबाव डाला गया उस पर लागू हो जाएँगे''।

नबी अकरम (सल्ल0) के मुबारक दौर में भी इस तरह की मिसालें मौजूद हैं कि ज़बरदस्ती के बावजूद आप (सल्ल0) ने यमीन व तलाक़ को सही और लागू माना है। अत: हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान की हदीस में है कि ''जब शिर्क करने वालों ने उन्हें गिरफ़्तार किया और यह क़सम ली कि वह लड़ाई में हुज़ूर (सल्ल0) का साथ नहीं देंगे तो उन्होंने दबाव में आकर मजबूरी में क़सम खा ली और आकर हुज़ूर (सल्ल0) को इस घटना की खबर दी तो आप (सल्ल0) ने फ़रमाया: उनका वायदा पूरा करो। हम उनके ख़िलाफ़ अल्लाह तआला से मदद तलब करेंगे''। (1)

इससे स्पष्ट होता है कि यमीन (प्रतिज्ञा) चाहते हुए या अनचाहे दोनों का आदेश एक जैसा होता है। इस तरह मजबूरी की स्थिति में दी गई तलाक़ के बारे में 'नस्बुर्राय: लिलज़ैलई' में सफ़वान बिन ग़ज़वान की एक रिवायत है:

''إن رجلا كان نائما فقامت امرأته فأخذت سكينا فجلست على صدره فوضعت السكين على حلقه فقالت لتطلقني ثلاثا أو لأذبحنک، فناشدها الله فأبت فطلقها ثلاثا ثم أتى النبى ﷺ فذكر له ذلک فقال: لاقيلولة في الطلاق'' (٢)-

''एक आदमी सोया हुआ था कि उसकी औरत उठी और एक छुरी

1. अल फिक्हुल इस्लामी व अदिल्लातुहू भाग 3 पृ0 4452, नस्बुर्राय भाग 3 पृ0 223

2. नस्बुर्राय भाग 3 पृ0 222

लेकर उसके सीने पर चढ़ बैठी। उसके हलक़ पर छुरी रख कर बोली: या तो मुझे तीन तलाक़ दे दे या फिर मैं तुम्हें ज़बह कर दूँगी। आदमी ने उसे अल्लाह का वास्ता दिया मगर उसने एक न सुनी। आख़िरकार उस आदमी ने उसे तीन तलाक़ दे दी। फिर हुज़ूर (सल्ल0) की सेवा में उपस्थित होकर आप (सल्ल0) से उसका उल्लेख किया तो आप (सल्ल0) ने फ़रमाया: तलाक़ में निरस्त करना नहीं है।

और यह पहलू भी विचार करने योग्य और बड़ा अहम है कि आप (सल्ल0) का क़ीमती इर्शाद है:

"ثلاث جدهن جد وهزلهن جد: النكاح والطلاق والرجعة" (۱)۔

''तीन चीज़ें ऐसी हैं कि उनका इरादा भी और हँसी मज़ाक़ भी इरादा होता है। यह निकाह, तलाक़ और रजअत है।'' इससे यह बात स्पष्ट है कि निकाह, हँसी-मज़ाक़ के तौर पर भी लागू हो जाता है। यही वजह है कि उलमा का हंसी में तलाक़ के लागू होने पर इत्तिफ़ाक़ है। 'मिरक़ातुल-मफ़ातीह' में है:

"قال القاضی: اتفق أهل العلم أن طلاق الهازل يقع" (۲)۔

''क़ाज़ी ने कहा: ज्ञान रखने वालों की इस बात पर सहमति है कि मज़ाक़ की तलाक़ लागू होती है।

जब मज़ाक़ में तलाक़ कहने वाले की तलाक़ को तस्लीम किया जा रहा है तो दबाव की घोषणाओं, तलाक़ व निकाह को भी तस्लीम करना इसलिए ज़रूरी होगा कि दोनों की स्थिति एक जैसी है कि दोनों ने अपने

1. सुनन तिर्मिज़ी भाग 1 पृ0 142

2. मिरकातुल मफ़ातीह 6/287, बज़लुल मजहूद 10/286

अधिकार से ऐसे शब्द कहे जिनके आदेश से वह राज़ी नहीं हैं। लिहाज़ा क़ानूनी तौर पर दोनों एक दर्जे में हुए। इसलिए इस पहलू पर रौशनी डालते हुए मुल्ला अली क़ारी लिखते हैं:

"وكذلك المكره مختار في التكلم اختيارا كلاما فيالسبب إلا أنه غير راض بحكمه، لأنه عرف الشرين فاختار أهونهما عليه غير أنه محمول على اختياره ذلك ولا تاثير لهذا في نفي الحكم" (۱)۔

इसी तरह दबाव के कारण के सम्बन्ध में, जिस पर दबाव डाला गया वह अपनी बात कहने में पूरे तौर पर समर्थ है मगर यह कि वह उसके आदेश से राज़ी नहीं हैं। इस वजह से कि, उसके सामने दो ख़राबियां हैं, जिनमें से उसने अपने लिए सबसे आसान को अपनाया है, सिवाय इसके कि वह उसके अपनाने पर मजबूर है और उस ज़बरदस्ती के आदेश के इन्कार करने में कोई असर नहीं होता''।

इसी वजह से हनफ़ी फ़क़ीहों का तरीक़ा है कि जो चीज़ 'मज़ाक़' के साथ सही होगी वह ज़बरदस्ती के साथ भी सही होगी। दुर्रे मुख़्तार में है:

"والأصل عندنا أن كل مايصح مع الهزل يصح مع الإكراه، لأن مايصح مع الهزل لايحتمل الفسخ وكل مالا يحتمل الفسخ لايؤثر فيه الإكراه" (۲)۔

''हमारे नज़दीक असल यह है कि हर वह चीज़, जो मज़ाक़ के साथ सही होती है दबाव के साथ भी सही होती है। इस वजह से जो चीज़ मज़ाक़ के साथ सही होती है उसमें निरस्तीकरण का सन्देह नहीं होता और हर वह चीज़ जिसमें निरस्तीकरण का सन्देह नहीं होता, उसमें दबाव प्रभावी नहीं

1. मिरक़ातुल मफ़ातीह 6/288

2. दुर्रे मुख़्तार 9/191

होता''।

उपर्युक्त विवरण की रोशनी में देखा जाए तो सवालनामा के जवाब की यह स्थिति बनती है कि:

1. अगर किसी औरत को दबाव डाल कर, मारने-पीटने की धमकी देकर या ज़बरदस्ती करने के किसी और माध्यम से निकाह की इजाज़त देने पर मजबूर किया गया और उसने उसके लिए 'हाँ' कर ली तो निकाह हो जाएगा। अलबह्रूर्राइक़ में अलमब्सूत के हवाले से लिखा:

"وكل تصرف يصح مع الهزل كالطلاق والعتاق والنكاح يصح مع الإكراه" (۱)۔

''हर वह घोषणा जो मज़ाक़ के साथ सही होती है जैसे तलाक़, अताक़, निकाह, ज़बरदस्ती के साथ भी सही होता है''।

बदाइउस्सनाइअ़ में है:

"التصرفات الشرعية في الأصل نوعان: إنشاء وإقرار، والإنشاء نوعان: نوع لايحتمل الفسخ ونوع يحتمله، أما الذي لايحتمل الفسخ فالطلاق والعتاق والرجعة والنكاح ..... وهذه التصرفات جائزة مع الإكراه عندنا وعند الشافعي لاتجوز" (۲)۔

शरअ़ी घोषणाओं की वास्तव में क़िस्में हैं: इन्शा व इक़रार। इन्शा की दो क़िस्में हैं: एक जिसमें निरस्तीकरण का सन्देह न हो, दूसरी जिसमें निरस्तीकरण का सन्देह हो। जिसमें निरस्तीकरण का सन्देह नहीं होता वह तलाक़, इताक़, रजअत और निकाह आदि हैं।.....और यह घोषणाएं हमारे नज़दीक दबाव के साथ जायज़ हैं इमाम शाफ़अ़ी के यहाँ जायज़ नहीं हैं।

1. अल बहरुर्राइक 8/75 2. बदाइउस्सनाइअ़ 7/182

2. यह सच है कि समझदार बालिग़ लड़की को अपनी शादी करने का पूरा-पूरा अधिकार है और अभिभावक को बिल्कुल अनुमति नहीं है कि इस सिलसिले में ज़बरदस्ती का मामला करे। इसके बावजूद अगर अभिभावक ने धोखे से या धमकी देकर या किसी और तरह के दबाव से लड़की से निकाह के समय 'हाँ' कहलवा ली तो यह अनुमति मानी जायेगी और निकाह सही होगा।

रद्दुलमुहतार में है:

"إذ حقيقة الرضا غير مشروطة في النكاح لصحته مع الإكراه والهزل ..... بل عباراتهم مطلقة في أن نكاح المكره صحيح كطلاقه وعتقه مما يصح مع الهزل ولفظ المكره شامل للرجل والمرأة" (1)-

''क्योंकि निकाह में वास्तविक रज़ामंदी की शर्त नहीं है। इस वजह से कि वह दबाव और मज़ाक़ के साथ भी सही होती है ... बल्कि फ़ुक़हा के वाक्य इस सिलसिले में दो टूक हैं कि दबाव का निकाह सही है। जैसे उसकी तलाक़ व अत्क़, कि यह उन मामलों में से हैं जो मज़ाक़ के साथ सही होते हैं। दबाव का शब्द मर्द व औरत दोनों के लिये है''।

इसके अतिरिक्त अल्लामा शामी ने हाकिम शहीद की 'अल-काफ़ी' इकराह के अध्याय के हवाले से लिखा है कि अभिभावक का दबाव के साथ किया हुआ निकाह भी लागू हो जाता है।(2)

इसी तरह हज़रत मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान साहब उस्मानी रह0 का फ़तवा भी 'फ़तावा दारुल-उलूम में मौजूद है। लिखते हैं:

''ज़बरदस्ती करके और मारपीट करके बालिग़ लड़की से स्वीकृति या

1. रद्दुल मुहतार 2/294,295

2. रद्दुल मुहतार 2/295

क़ुबूल करा लेने से भी निकाह लागू हो जाता है''। (1)

3. ब्रिटेन और हिन्दुस्तान के समाज में निस्सन्देह स्पष्ट अन्तर है। मगर उसे कुफ़ू की समस्या से जोड़ना सही नहीं होगा। इसलिए कि लड़का और लड़की दोनों चूंकि एक नस्ल व ख़ानदान के होते हैं और उनके बीच मानसिक व स्वभाव की ख़ानदानी एक रूपता होती है। इसलिए दोनों के लिए आपस में निर्वाह की सूरत पैदा करना मुश्किल नहीं है। अत: इस बुनियाद पर औरत को यह हक़ नहीं होगा कि बराबरी का मामला खड़ा करके क़ाज़ी से अलगाव की मांग करे। क्योंकि किफ़ाअत में देशों के अन्तर का लिहाज़ नहीं किया गया है।

रद्दुल मुहतार में है:

"القروی کفء للمدنی فلا عبرة بالبلد أي بعد وجود مامر من أنواع الكفاءة" (٢)۔

''देहाती आदमी शहरी का कुफ़ू है। अत: किफ़ाअत की बयान की हुई क़िस्मों के पाए जाने के बाद शहर का भरोसा नहीं होगा''।

इसी तरह अल्लामा शामी ने 'अलबह्रुर्राइक़' के हवाले से लिखा है:

"فالتاجر في القرى كفء لبنت التاجر في المصر للتقارب"

''देहाती व्यापारी शहरी व्यापारी की बेटी का कुफ़ू है, दोनों में आपसी निकटता के कारण''।

लिहाज़ा एक हिन्दुस्तानी लड़का, ब्रिटिश प्रवासी लड़की का कुफ़ू होगा। दोनों के बीच निकाह का बन्धन सही होगा। लड़की के लिए इस

1. फ़तावा दारुल उलूम 7/68
2. रद्दुल मुहतार 2/351

बुनियाद पर अलगाव की मांग करना सही न होगा।

4. यह आदेश सामान्य है, चाहे दम्पति में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो चुके हों या उसकी नौबत अभी तक न आई हो।

5. क़ाज़ी उस निकाह को निरस्त नहीं कर सकता है, इसके बावजूद यह कि यह तयशुदा है कि, औरत को मजबूर करके 'हाँ' कहलवायी गयी है।

☆☆☆

जबरी निकाह

मौलाना मु0 ज़फ़र आलम नदवी
दारुल-उलूम नदवतुल उलमा, लखनऊ

1. हनफ़ी उलमा के विचार में रज़ामंदी के लिए वास्तविक रज़ामंदी ज़रूरी नहीं बल्कि अगर ज़ाहिरी तौर पर ज़ुबान से रज़ामंदी प्रकट हो जाये तो निकाह लागू होने के लिए काफ़ी है। (1)

डॉ. मुस्तफ़ा अहमद ज़रका ने ''अल-मुदख़लुल-फ़िक़ही अलआम'' (पहला भाग) में इस विषय पर बड़ी विस्तृत बहस की है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हनफ़ी उलमा के यहाँ जिस तरह दबाव वाली तलाक़ लागू हो जाती है, उसी तरह निकाह भी लागू हो जाता है।

एक बात विचार योग्य यह भी है कि शरीअत ने अभिभावकों को जो अभिभावकत्व सौंपा है उसमें सन्देह नहीं कि उसकी बुनियाद स्नेह और लड़की के हितों को ध्यान में रखने और सुरक्षा पर है। इसलिए यह बात समझ से बाहर है कि अभिभावक स्नेह और हित के ख़िलाफ़ कोई क़दम उठायें। लड़की का राज़ी न होना, अभिभावकों के फ़ैसले के ख़िलाफ़ भावना का होना-यह लड़की की समझ की कमी है। इसलिए उसकी इस नासमझी पर अभिभावक के फ़ैसले को वरीयता देना ही लड़की के हित में है। अत: लड़की को डरा

1. रद्दुल मुहतार 3/21 अल मुदख़लुल फ़िक़्ही अलआम 1/364,372,373

धमका-कर या मार पीट करके या मनोवैज्ञानिक दबाव में लाकर या पासपोर्ट नष्ट कर देने की धमकी देकर उससे निकाह के लिए जो 'हाँ' कहलवायी गयी हो, चाहे वह दिल से राज़ी न हो, निकाह लागू होने में जो रज़ामंदी वांछित है, इसमें यह शामिल है और निकाह हो जायेगा।

2. वास्तविक रज़ामंदी और अनुमति पर निकाह लागू होने की बुनियाद नहीं है, बल्कि ज़ुबान से अनुमति व रज़ामंदी निकाह लागू होने के लिए काफ़ी है जैसा कि सवाल नंबर 1 में विवरण गुज़र चुका है।

3. इसमें सन्देह नहीं कि ब्रिटेन और हिन्दुस्तान की सामाजिक शैली में काफ़ी अन्तर है। उस सामाजिक भेद की वजह से दोनों पक्षों में असमानता का रिश्ता कहलायेगा। लेकिन बराबरी न होने के आधार पर निकाह के निरस्त करने की मांग का हक़ उस स्थिति में अभिभावक को होता है, जब लड़की ने अभिभावक की आज्ञा के बिना अपना निकाह ग़ैर-कुफ़ू में कर लिया हो। इसका उद्देश्य अभिभावक के हितों की रक्षा और समाज में उनको अपमान से बचाना है। अगर लड़की अपने इस निकाह में अड़चन महसूस कर रही है तो उसे ख़ुलअ् हासिल कर लेने का हक़ मौजूद है। इसलिए वह उसको इस्तेमाल करे।

4. मेरे विचार में ज़बरदस्ती के निकाह में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हों या न हों दोनों स्थितियां एक जैसी हैं। हाँ! ग़ैर-कुफ़ू में, जिसमें कि अभिभावक को निरस्त करने का अधिकार होता है, शारीरिक सम्बन्ध का अन्तर होता है। अगर सम्बन्ध स्थापित हो गये हैं तो उस स्थिति में अभिभावकों का अलगाव का अधिकार जाता रहता है, जैसा कि फिक़्ही विवरण से मालूम होता है।

5. मेरा विचार है कि अलगाव की बुनियाद हानि है, अगर उस निकाह से लड़की को वाक़ई कोई हानि हुई हो और उसके हित प्रभावित हो रहे हों तो जिस तरह निकाह टूटने की अन्य बुनियादों और कारणों में हानि को सामने रखते हुए निरस्त करने का आदेश लगाया जाता है उसी तरह यहाँ भी ''हानि को दूर किया जायेगा'' के शरअ़ी नियम के अन्तर्गत यह आदेश जारी होना चाहिए।

☆☆☆

जबरी शादी

मौलाना अबू-सुफ़ियान मिफ्ताही
जामिया अरबिया मिफ़्ताहुल-उलूम, मऊ

1. चूंकि समझदार बालिग़ लड़की के निकाह में शरीअत ने उसकी रज़ामंदी को बहुत महत्व दिया है जैसा कि नबी (सल्ल0) की हदीसों से स्पष्ट भी है कि समझदार बालिग़ लड़की अपने निकाह में स्वतन्त्र है। उसे कोई व्यक्ति भी निकाह पर मजबूर नहीं कर सकता। उसकी अनुमति व रज़ामंदी के बिना उसकी तरफ़ से किसी व्यक्ति ने निकाह कुबूल कर लिया तो यह निकाह शरीअत के अनुसार वैध नहीं। अर्थात समझदार बालिग़ लड़की जब तक स्वयं कुबूल न करे या किसी को अपना वकील न बनाए उस समय तक उसका निकाह सही नहीं होगा। इसके आधार पर यह स्थिति उसकी रज़ामंदी में शामिल न होगी और इस तरह किया हुआ निकाह सही न होगा। क्योंकि इस तरह डरा-धमका कर ज़बरदस्ती शादी कर देना लड़की के मां बाप या अन्य अभिभावकों की मुहब्बत व स्नेह के प्रतिकूल है। लड़की की ज़िन्दगी के साथ एक खिलवाड़ करना है।(1)

"ولا تجبر البالغة البكر على النكاح لانقطاع الولاية بالبلوغ"۔

2. यह उसकी रज़ामंदी और वास्तविक अनुमति शरीअत के अनुसार

1. दुर्रे मुख़्तार व शामी 2/324

तस्लीम नहीं की जाएगी। इस तरह निकाह स्थापित न होगा। हां, समझदार बालिग़ औरत के लिए पंसन्दीदा है कि वह अपने निकाह के मामले को अपने अभिभावक के हवाले कर दे ताकि बेहयाई का धब्बा न लगे और इमाम शाफ़ई रह. के मतभेद से बचा जा सके। (1)

3. ब्रिटेन के माहौल में रहने वाली लड़की और हिन्दुस्तान में परवरिश पाने वाले लड़के के बीच ठीक है कि सामाजिक अन्तर है। यह भी ठीक है कि सामाजिक अन्तर की वजह से यह शादियां बेजोड़ मानी जाती हैं। लेकिन इसके बावजूद कुफू की शर्त के साथ अगर लड़की इस शादी पर दिल से राज़ी है तो यह शादी शरीअत के अनुसार दुरुस्त है। लिहाज़ा उस स्थिति में लड़की को यह दावा करने का हरगिज़ अधिकार नहीं है कि मेरी शादी जिस व्यक्ति से की जा रही है वह मेरा कुफू नहीं है। किफ़ाअत के आधार पर उसे रिश्ता तोड़ने का अधिकार भी हासिल नहीं है। क्योंकि किफ़ाअत में देशों का अन्तर और शहर व देहात के भेद का भरोसा नहीं है। शरीअत के अनुसार तो इस देश और समाज के अन्तर की बुनियाद पर निकाह प्रभावित न होगा। (2)

4. ऊपर जिस क़िस्म के निकाह का ज़िक्र हुआ है उसके बाद दोनों के बीच शारीरिक सम्बन्ध स्थापित रहते हैं तो अच्छी बात है। उस निकाह को क़ायम रहने देना चाहिए। क्योंकि उस निकाह को निरस्त कर देना हानिकारक हो सकता है। और अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने की नौबत नहीं आई तो उस स्थिति में हर संभव सुलह और सुधार और गुज़ारे की शक्ल की कोशिश करनी चाहिए। उस पर नाकामी की स्थिति में अलगाव का रास्ता

1. दुर्रे मुख़्तार व शामी 2/321

2. दुर्रे मुख़्तार व शामी 2/351

अपनाया जाए जैसा कि अल्लाह सुब्हानहू व तआ़ला ने क़ुरआन करीम में इस का हल ख़ुद बयान फ़रमाया है:

"وإن خفتم شقاق بينهما فابعثوا حكما من أهله وحكما من أهلا إن يريدا إصلاحا يوفق الله بينهما إن الله كان عليماً خبيرا" (1)-

"अगर तुम डरो कि वे आपस में हठ धर्मी रखते हैं तो खड़ा करो एक मुंसिफ़ मर्द के ख़ानदान से और एक मुंसिफ़ औरत के ख़ानदान से। अगर ये दोनों चाहेंगे कि सुलह करा दें तो अल्लाह ताल-मेल कर देगा उन दोनों में, बेशक अल्लाह सब कुछ जानने वाला ख़बरदार है।" (सूर: निसा-35)

निचोड़ यह है कि पूछी गई स्थिति में दोनों का आदेश अलग-अलग है। दोनों भलाई में लिखे गये समझौते के मुताबिक अमल किया जाये कि इसी में फ़लाह निहित है।

5. शरअ़ी कौंसिल या क़ाज़ी के पास निकाह निरस्तीकरण का दावा पेश किए जाने के बाद क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल इस निकाह को निरस्त कर सकते हैं।

☆☆☆

1. सुर: निसा 35

निकाह में लड़की की पसंद

मौलाना ज़फ़रुल-इस्लाम अल-आज़मी
दारुल-उलूम, मऊ

١ – "إن جارية بكرا أتت رسول الله ﷺ فذكرت أن أباها زوجها وهي كارهة فخيرها رسول الله ﷺ"۔

1. एक कुंवारी औरत रसूलुल्लाह सल0 के पास आई और उसने ज़िक्र किया कि उसके बाप ने उसकी शादी करा दी है और वह उसे नापसंद करती है तो आप (सल्ल0) ने उसे अधिकार दिया।

"وحجتنا في ذلک حديث أبي هريرة وأبي موسى الأشعري أن النبی ﷺ رد نكاح بكر زوجها أبوها وهي كارهة" (١)۔

एक कुंवारी औरत के निकाह को जिसकी शादी उसके बाप ने करा दी थी और वह उसे नापसंद थी, आप (सल्ल0) ने रद्द फ़रमा दिया।

"والدليل عليه حديث الخنساء، فإنها جاء ت إلى النبی ﷺ فقالت: إن أبي زوجني من ابن أخيه وأنا لذلک كارهة فقال: أجيزي ماصنع أبوک، فقالت: مالي رغبة فيما صنع أبي ..... ولكني أردت أن يعلم النساء أن ليس للآباء من أمور بناتهم شئ ولم ينكر عليها رسول الله ﷺ مقالتها" (٢)۔

1. मबसूत लिस्सरख़सी 5/2

2. मबसूत लिस्सरख़सी 5/2

इसकी दलील हज़रत ख़न्सा की यह हदीस है कि वह नबी (सल्ल0) के पास आयीं और उन्होंने कहा कि मेरे पिता ने अपने भतीजे से मेरी शादी करा दी है। मैं उसे नापसंद करती हूं। तो आप (सल्ल0) ने फ़रमाया: तुम उसे बनाए रखो जो तुम्हारे पिता ने कर दिया तो उन्होंने कहा कि मुझे अपने पिता के किए हुए काम से कोई दिलचस्पी नहीं। मैं तो सिर्फ़ यह चाहती थी कि औरतों को मालूम हो जाए कि बापों को अपनी बेटियों के सिलसिले में कुछ अधिकार नहीं। आप (सल्ल0) ने उनकी इस बात को नापसंद नहीं फ़रमाया।

"الأيم أحق بنفسها من وليها"

''शौहर-दीदा औरत अपने आप की अपने अभिभावक से ज़्यादा हक़दार है।''

उपर्युक्त तमाम रिवायात से मालूम होता है कि अभिभावक को मजबूर नहीं करना चाहिए। यही इमाम अबू-हनीफ़ा रह0, इमाम सूरी रह0, इमाम औज़ाई और क़ाजी अबू सौर और एक गिरोह का विचार है। (1)

2. अगर ज़बरदस्ती ही सही, लड़की ईजाब या क़ुबूल करती है तो उस सूरत में निकाह हो जाएगा।

"إن نكاح المكره صحيح ... ولفظ المكره شامل للرجل والمرأة (٢)-

''मुकरेह ('जिसको मजबूर किया जाए') का निकाह सही है। ....और शब्द 'मुकरेह' में मर्द व औरत दोनों शामिल हैं। लेकिन अंगूठे लगवा लेने और दस्तख़त करा लेने से निकाह न होगा। जैसा कि 'ख़ैरुलफ़तावा' पृ 257/4 पर एक सवाल के जवाब में लिखा है। ''सिर्फ़ अंगूठा लगाना निकाह नहीं

1. बिदायतुल मुजतहिद 2/6,17, और देखिए: फ़तहुल क़दीर हिदाया सहित 2/38, फ़तावा दारुल उलूम देवबन्द 8/37

2. शामी 2/271 प्रकाशन बैरुत

है''।

3. चूंकि किफ़ाअत बीवी और उसके अभिभावक दोनों का हक़ है जैसा कि दुर्रेमुख़्तार पृ0 317/2 पर लिखा है। इसलिए इस तरह की बेजोड़ शादियों पर औरत अलगाव का दावा कर सकती है।

4. अगर लड़की ने ज़बरदस्ती ही सही ईजाब या क़ुबूल कर लिया तो यह निकाह सही हो गया और शारीरिक सम्बन्ध से पहले तलाक़ देने पर आधी मेह्र अनिवार्य होगी। ज़ाहिरीय: मत का भी यही विचार है।

अगर शारीरिक सम्बन्ध हो गया तो पूरा मेह्र अनिवार्य होगा और क़ाज़ी के ज़रिये विच्छेद कराना होगा। अगर सिर्फ़ दस्तख़त कर दिया या अंगूठा निशान लगा दिया तो मेरे विचार में सिरे से यह निकाह ही न होना चाहिए जैसा कि पहले उल्लेख हुआ। इसलिए इसमें अलगाव की ज़रूरत नहीं।

5. वे दलीलें जो ऊपर उल्लिखित हैं उनकी रोशनी में समझ में आता है कि क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल पूरे तौर पर सन्तुष्ट होने के बाद इस निकाह को निरस्त कर सकती है।

☆☆☆

निकाह में लड़की की पसंद की रिआयत इस्लामी उसूल की रौशनी में

मौलाना सैयद असरारुलहक़ सबीली
जामिअतुल क़ुरआन, अकबरबाग़, हैदराबाद

1. निकाह में समझदार बालिग़ लड़की की रज़ामंदी का महत्व:

इस्लाम ने समझदार बालिग़ लड़की को शादी के मामले में उसको पसंद और नापसंद का अधिकार दिया है और उसकी अनुमति व रज़ामंदी को अनिवार्य ठहराया है, नबी (सल्ल0) का इरशाद है:

"الثيب أحق بنفسها من وليها، والبكر تستأذن في نفسها وإذنها صماتها" (1)-

''शादीशुदा औरत अभिभावक के मुक़ाबले में अपने आप की ज़्यादा ज़िम्मेदार है और ग़ैर-शादीशुदा लड़की से उसके निकाह की बाबत इजाज़त ली जाये और उसकी इजाज़त ख़ामोशी है।''

लिहाज़ा अगर कुंवारी लड़की भी किसी लड़के से शादी करने से इन्कार कर दे, तो ज़बरदस्ती उसका निकाह कराना जायज़ नहीं होगा। रसूलुल्लाह (सल्ल0) का इरशाद है:

"اليتيمة تستأمر في نفسها فإن صمتت فهو إذنها، وإن أبت فلا جواز

1. सहीह मुस्लिम 1/455 किताबुन्निकाह, बाब इस्तिज़ानुश्शैब बिन्निकाह फ़िन्निकाहि बिन्तुतक़

عليها'' (۱)۔

''कुंवारी लड़की से उसके निकाह के बारे में उसकी राय मालूम की जाये। अगर वह ख़ामोश रहे तो उसकी इजाज़त समझी जाएगी, अगर वह इन्कार कर दे तो उसकी इच्छा के विरुद्ध (निकाह) करना भी जायज़ नहीं।

अत: हदीस में आता है कि एक लड़की की शादी उसके बाप ने उसकी नापसंदीदगी के बावजूद कर दी, तो नबी करीम (सल्ल0) ने उसको फ़ैसला करने का अधिकार दिया:

''**إن جارية بكرا أتت النبي ﷺ فذكرت أن أباها زوجها وهي كارهة، فخيرها النبى ﷺ**''۔

''एक कुंवारी लड़की नबी करीम (सल्ल0) के पास आई और उसने बताया कि उसके बाप ने उसकी नापसंदीदगी के बावजूद उसकी शादी कर दी है तो नबी करीम सल्ल0 ने उसको अधिकार दिया।'' (2)

'बुलूगुलमराम' के व्याख्याकार अल्लामा मु0 बिन इस्माईल सन्आनी (1182 हिजरी) इस हदीस के अन्तर्गत लिखते हैं:

''**وهذا الحديث أفاد ما أفاده، فدل علي تحريم إجبار الأب لابنته البكر على النكاح وغيره من الأولياء بالأولى، وإلى عدم جواز إجبار الأب ذهبت الهادوية والحنفية**'' (۳)۔

''यह हदीस बाप के अपनी कुंवारी बेटी को निकाह पर मजबूर करने

1. सुनन तिर्मिज़ी 1/210 किताबुन्निकाह, बाब मा जाआ फ़ी इकराहुल यतीमा अलत्तज़वीज, और अबू दाऊद 1/285, नसाई 2/64 बाबुल बिकरि युज़व्विजुहा अबूहा व हिया कारिहतुन
2. अबू दाऊद 1/286 बाब फ़िल बिकरि युज़व्विजुहा अबूहा व ला यसतामुर्रहा
3. सुबुलुस्सलाम 3/237

की अवैधता को बताती है। तो दूसरे अभिभावकों के लिए यह ऊंचे दर्जे में हराम होगा। हादोया: और हनफ़िया का विचार बाप के लिए ज़बरदस्ती वाले दबाव के अवैध होने का है।''

नसाई की हदीस में इसी तरह की एक घटना नक़ल की गयी है:

''عن عائشة أن فتاة دخلت عليها، فقالت: إن أبي زوجني ابن أخيه ليرفع بي خسيسته وأنا كارهة، فقالت: اجلسي حتى يأتي النبي ﷺ، فجاء رسول الله ﷺ فأخبرته، فأرسل إلى أبيها فدعاه، فجعل الأمر إليها، فقالت: يا رسول الله: قد أجزت ما صنع أبي، ولكن أردت أن أعلم النساء أن ليس إلى الآباء من الأمر شئ؟'' (1)-

''सैयदा आइशा से रिवायत है कि एक लड़की उनके पास आई। उसने कहा कि मेरे बाप ने मेरी शादी अपने भतीजे से करा दी, ताकि मेरे ज़रिये उसकी कमी को दूर करे। जबकि मैं यह रिश्ता नापसंद करती हूं। उम्मुल मोमिनीन ने फ़रमाया: नबी (सल्ल0) के आने तक यहाँ बैठो। रसूल (सल्ल0) तशरीफ़ ले आए, तो उसने आप (सल्ल0) से बताया। आप (सल्ल0) ने किसी को भेज कर उसके बाप को बुलाया। फिर लड़की को फ़ैसले का अधिकार दिया। लड़की ने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल ! जो कुछ मेरे अब्बा ने किया, मैं उसे बरक़रार रखती हूं। लेकिन मैं औरतों को बताना चाहती थी कि बापों को निकाह के मामले में कुछ अधिकार नहीं है।''

बुख़ारी में एक दूसरी घटना शादीशुदा औरत के बारे में है:

''عن خنساء بنت خذام الأنصارية أن أباها زوجها وهي ثيب، فكرهت

1. सुनन नसाई 2/64 किताबुन्निकाह बाबुल बिकरि युज़्विजुहा अबूहा व हिया कारिहतुन

ذلک، فأتت رسول الله ﷺ فرد نکاحها'' (۱)۔

''ख़न्सा बिन्त ख़ुज़ाम अंसारी रजि0 से रिवायत है कि उनके पिता ने उनकी शादी कर दी, जबकि वह शौहर-दीदा थीं। उनको यह शादी नापसंद थी। वह रसूलुल्लाह (सल्ल0) के पास आईं, आप (सल्ल0) ने उनका निकाह रद्द कर दिया।''

अत: इन रिवायातों से दलील देते हुए (2) हनफ़िया ने बालिग़ लड़की का जबरी निकाह कराना नाजायज़ क़रार दिया है:

''**ولا یجوز للولي إجبار البکر البالغة علی النکاح**'' (۳)۔

''अभिभावक के लिए कुंवारी बालिग़ लड़की को निकाह पर मजबूर करना जायज़ नहीं है।''

अल्लामा हाफिज़ इब्ने तैमिया रह0 ने हनफ़ी उलमा के विचार को हदीस की रौशनी में ज़्यादा सही क़रार दिया है:

''**وإذا کانت بکرا فالبکر یجبرها أبوها علی النکاح، وإن کانت بالغة في مذهب مالک والشافعی، وأحمد في إحدی الروایتین وفي الأخري وهي مذهب أبي حنیفة وغیره أن الأب لایجبرها إذا کانت بالغاً، وهذا أصح مادل علیه سنة رسول الله ﷺ وشواهد الأصول**'' (۱)۔

''जब लड़की कुंवारी हो तो इमाम मालिक, शाफ़ई और अहमद की एक रिवायत के मुताबिक़ उसका बाप उसको निकाह पर मजबूर कर सकता है,

---

1. बुख़ारी 2/771,772 किताबुन्निकाह बाब इज़ा जव्वजा इब्नताहु व हिया कारिहतुन फ़निकाहहु मरदूदुन
2. फ़तहुल क़दीर 3/252
3. हिदाया मअल फ़तह 3/251
4. मजमूअ फ़तावा इब्ने तैमिया 32/29,30 प्रकाशन दारुत्तर्जुमा क़ाहिरा

यद्यपि वह बालिग़ हो। इमाम अहमद की दूसरी रिवायत, और यही इमाम अबू-हनीफ़ा आदि का विचार है, यह है कि जब लड़की बालिग़ हो तो बाप उस पर ज़बरदस्ती नहीं करेगा। हदीसे नबवी और उसूल की रोशनी में यह ज़्यादा सही कथन है।

हाफ़िज़ इब्ने तैमिया रह0 दूसरी जगह एक सवाल के जवाब में फ़रमाते हैं:

"وسئل رحمه الله تعالى عن بنت بالغ، وقد خطبت لقرابة لها فأبت وقال أهلها للعاقد: اعقد وأبوها حاضر: فهل يجوز تزويجها؟

فأجاب: أما إن كان الزوج ليس كفواً لها فلا تجبر على نكاحه بلا ريب، وأما إن كان كفواً فللعماء فيه قولان مشهوران؛ لكن الاظهر في الكتاب والسنة والاعتبار أنها لاتجبر؛ كما قال النبي ﷺ "لاتنكح البكر حتى يستأذنها أبوها وإذنها صماتها" والله أعلم (1)-

"इब्ने तैमिया रह0 से ऐसी बालिग़ लड़की के बारे में पूछा गया, जिसको उसके किसी रिश्तेदार की तरफ़ से पैग़ाम दिया गया हो, वह इन्कार करती हो, उसके घर वाले निकाह करने वाले से कहें उससे निकाह कर लो: वहाँ उसका बाप हाज़िर हो तो क्या उस लड़की का निकाह कराना जायज़ होगा? उन्होंने जवाब दिया: अगर पति लड़की का कुफ़ू नहीं है, तो इसमें सन्देह नहीं कि उसको निकाह करने पर मजबूर नहीं किया जाएगा, अगर पति कुफ़ू है तो इस बारे में उलमा के दो कथन प्रसिद्ध हैं। लेकिन कुरआन, हदीस और क़यास की रौशनी में ज्यादा स्पष्ट बात यह है कि उसको मजबूर नहीं किया जायेगा जैसा कि नबी (सल्ल0) ने फ़रमाया: ग़ैर-शादीशुदा लड़की का

1. फ़तावा इब्ने तैमिया 32/28

निकाह न किया जाये, यहाँ तक कि उसका बाप उससे इजाज़त ले ले और उसकी इजाज़त उसकी खामोशी है।''

शैखुलइस्लाम हाफ़िज़ इब्ने तैमिया इसकी वजह बताते हुए लिखते हैं:

"وأما تزويجها مع كراهتها للنكاح: فهذا مخالف للأصول والعقول، والله لم يسوغ لوليها أن يكرهها على بيع أو إجارة إلا بإذنها، ولا على طعام أو شراب أو لباس لاتريده، فكيف يكرها على مباضعة ومعاشرة من تكره مباضعته ومعاشرة من تكره معاشرته؟ والله قد جعل بين الزوجين مودة ورحمة، فإذا كان لايحصل إلا مع بغضها له، ونفورها عنه، فأي مودة ورحمة في ذلك؟" (1)-

''लड़की की नापसंदीदगी के बावजूद उसका निकाह कराना शरीअ़त के नियमों और अक़्ल के ख़िलाफ़ है। अल्लाह तआला ने अभिभावक के लिए गुंजाइश नहीं रखी है कि उसको क्रय-विक्रय या किराया के मामले में मजबूर करे और न ही खाने पीने या लिबास के मामले में उसको मजबूर ऐसी चीज़ पर करे जिसको वह न चाहती हो, तो कैसे उसको ऐसे व्यक्ति के साथ रहने और ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर कर सकता है, जिसको वह नापसंद करती हो? अल्लाह तआला ने मियाँ-बीवी के बीच मुहब्बत और रहमदिली रखी है। जब लड़की की तरफ़ से नफ़रत और ग़ुस्सा के साथ यह रिश्ता तय पाए तो कौन-सी मुहब्बत और रहमदिली पैदा होगी''?

इस तरह के स्पष्टीकरण से मालूम होता है कि इमाम इब्ने-तैमिया का विचार भी हनफ़ी उलमा के अनुसार है। अत: किताब व सुन्नत और क़यास की रौशनी में यह बात स्पष्ट हो गई कि समझदार बालिग़ लड़की को उसकी इच्छा के विरुद्ध निकाह के लिए मजबूर करना, उसपर दबाव डालना और

1. फ़तावा इब्ने तैमिया 32/25

निकाह न करने पर उसको धमकियाँ देना जायज़ नहीं है। और इस तरह डरा-धमका कर लड़की से हाँ कहलवा लेना उसकी रज़ामंदी नहीं कहलायेगी। क्योंकि हदीस में (कारिहा) का शब्द आया है कि वह लड़की अपने चचेरे भाई से निकाह करना पसंद नहीं करती थी। इसलिए रसूलुल्लाह सल्ल0 ने उसको अधिकार दिया, तो जो चीज़ दिल से पसंद न हो उस पर रज़ामंदी कैसे हो सकती है?

2-निकाह के लिए ज़बरदस्ती राज़ी करना:

जब हनफ़ी उलमा का नियम यह है कि वह शरअी मामले जो पूरे होने के बाद निरस्त होने का सन्देह नहीं रखते हैं, वह दबाव के बावजूद जायज़ होते हैं। जैसे:- निकाह, तलाक़, रजअत, ईला और क़सम आदि। (1) अत: फ़ुक़्हा लिखते हैं:

"والمرأة إذا أكرهت على النكاح ففعلت صح النكاح" (٢)-

''औरत पर जब निकाह के लिए ज़बरदस्ती की जाये और वह निकाह कर ले तो निकाह दुरुस्त है।''

हनफ़ी उलमा की दलील इस सिलसिले में क़ुरआन की स्पष्ट आयतों से है। जिनमें दबाव आदि की कोई क़ैद और विशेषता नहीं बताई गई है:

"وأنكحوا الأيامى منكم" (٣)-

''अपने में से बेनिकाहों का निकाह करा दो।''

"فطلقوهن لعدتهن" (٤)-

1. बदाइउस्सनाइअ 6/193
2. अल फ़तावा अल हिन्दिया 5/53 प्रकाशन देवबन्द
3. सूर: नूर/32
4. सूर: तलाक़/1

''उनको पाकी की हालत में तलाक़ दो।''

इसके अतिरिक्त हनफ़ी उलमा की दलील उन हदीसों से भी है:

"ثلاث جدهن جد وهزلهن جد: النكاح والطلاق والرجعة" (۱)۔

''तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनकी संजीदगी भी संजीदगी है और उनका मज़ाक़ भी संजीदगी के दर्जो में है: निकाह, तलाक़ और रजअत।''

दबाव में हज़्ल (मज़ाक़) का अर्थ पाया जाता है। क्योंकि उसमें वास्तविक इरादा नहीं होता। (2) इसी तरह मुसन्निफ अब्दुर्रज़्ज़ाक़ में सैयदना हुज़ैफा बिन यमान रजि0 से रिवायत है कि जब उनको मुश्रिकों ने पकड़ लिया और उनसे ज़बरदस्ती क़सम खिलाई कि वह मुश्रिकों के विरुद्ध रसूल (सल्ल0) की मदद नहीं करेंगे तो उन्होंने क़सम खा ली। उन्होंने रसूल सल्ल0 से बताया तो आप सल्ल0 ने फ़रमाया: ''उनका अहद अर्थात क़सम पूरी करो''। "أوف لهم بعدهم" (3)

इसलिए यह कहा जा सकता है कि दबाव की स्थिति में, कि लड़की दबाव में आकर ''हाँ'' कर दे तो निकाह लागू हो जाएगा, लेकिन लड़की को क़ाज़ी के पास जाकर निकाह निरस्त कराने का अधिकार होगा। जैसा कि रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने एक कुँवारी लड़की को अधिकार दिया था:

"إن أباها زوجها وهي كارهة فخيرها النبي ﷺ" (۴)۔

नसाई की रिवायत में है कि रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने उस लड़की को इख़्तियार दिया, लेकिन उसने उस निकाह को बाक़ी रखा: लड़की के बाप ने

1. सुबुलुस्सलाम 3/335

2. अल फ़िक़्हुल इस्लामी व अदिल्लातुहु 5/404 प्रकाशन अल मकतबतुल हक़्क़ानिया पाकिस्तान

3. मुसन्नफ़ अब्दुर्रज़्ज़ाक़ बहवाला नसबुर्राया 3/222

4. अबू दाऊद 1/286

उसका निकाह कर दिया और यह उसको नापसन्द था, तो रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने उसको अधिकार दिया।

"فجعل الأمر إليها، فقالت: يا رسول الله! قد أجزت ماصنع أبي" (۱)-

इससे यह स्पष्ट होता है कि नापसंदीदगी और दबाव की हालत में निकाह लागू हो जाता है। हां क़ाज़ी के पास उस निकाह को निरस्त कराया जा सकता है। अल्लामा सिंधी नसाई की इस हदीस के तहत लिखते हैं:

"فجعل الأمر إليها" يفيد أن النكاح منعقد إلا أن نفاذه إلى أمرها" (۲)-

(निकाह के मामले में उसको अधिकार दिया) इस वाक्य से मालूम होता है कि निकाह लागू हो जाता है, मगर उसका लागू होना औरत की समझ पर आधारित है।

3–किफ़ाअत 'बराबरी' न होने का दावा:

ब्रिटेन या किसी पश्चिमी देश की नागरिकता रखने वाली लड़की का निकाह उसके अभिभावक ज़बरदस्ती अपने ख़ानदान के हिन्दुस्तानी या पाकिस्तानी लड़के से करा दें, तो लड़की को इस आधार पर अलग होने का अधिकार हासिल नहीं होना चाहिए कि यह निकाह उसके कुफू में नहीं हुआ है बल्कि यह निकाह तो लड़की के कुफू में ही शुमार होगा, कि लड़की का निकाह उसके पैत्रिक देश से सम्बन्ध रखने वाले और उसके खानदान के लड़के से हुआ है। किसी इंसान के अपने देश को छोड़ कर दूसरे देश में जा बसने से उसकी नागरिकता और नस्ल बदल नहीं जाती। दूसरे, यह कि फ़ुक़्हा ने किफ़ाअत का भरोसा नस्ल, आज़ादी, इस्लाम, दयानत, माल और पेशा में किया

1. नसाई 2/64

2. हाशियतुल इमामुस्सनदी अन्नसाई 6/87 प्रकाशन अद्दुरारुल मिस्रिया अल बनानिया क़ाहिरा

है। (1) किसी भी फ़क़ीह ने किफ़ाअत में नागरिकता का भरोसा नहीं किया है, बल्कि अल्लामा हस्कफ़ी ने उसके मोतबर न होने का स्पष्टीकरण किया है:

"**والقروي كفء للمدني، فلا عبرة بالبلد، كما لاعبرة بالجمال**"(٢) .

''देहाती शहरी का कुफ़ू है, लिहाज़ा नागरिकता का कोई भरोसा नहीं, जैसा कि ख़ूबसूरती का कोई भरोसा नहीं है।''

4–ज़बरदस्ती निकाह के बाद की दो स्थितियां:

इस तरह के ज़बरदस्ती के निकाह के बाद शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो गये हों, या स्थापित न हुए होंगे –– दोनों स्थितियों में औरत को निकाह निरस्त करने का अधिकार हासिल होगा। हां अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न हुआ हो तो निर्धारित मेह्र का आधा अनिवार्य होगा, जैसा कि कुरआन में है:

"**وإن طلقتموهن من قبل أن تمسوهن، وقد فرضتم لهن فريضة فنصف مافرضتم**" (٣)-

''अगर तुम औरतों को उनके पास जाने से पहले तलाक़ दे दो, और उनके लिए मेह्र निर्धारित कर चुके थे तो (ऐसी सूरत में) निर्धारित किए हुए मेह्र का आधा हिस्सा देना आवश्यक है।''

अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने के बाद अलगाव हो, तो पूरा मेह्र देना होगा। अत: अबू-दाऊद की रिवायत में है:

"**عن بصرة قال: تزوجت امرأة بكرا في سترها، فدخلت عليها، فإذا هي حبلى، فقال النبى ﷺ: لها الصداق بما استحللت من فرجها ..... وفرق**

1. कन्ज़ुद्दक़ाइक़ मअल बहर 3/130

2. अद्दुर्रुल मुख़्तार 4/219

3. सूरा बक़रा: 237

بينهما" (١).

"बसरः रज़ि0 कहते है कि मैंने एक ग़ैर-शादीशुदा औरत से शादी की, मैं उसके पास आया, वह गर्भवती नजर आई, तो नबी (सल्ल0) ने फ़रमायाः शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने के आधार पर औरत के लिए मेह्र है .... और उन दोनों के बीच अलगाव करा दिया।"

5–अलगाव का अधिकारः

क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के पास ज़बरदस्ती निकाह का कोई मुक़द्दमा आये, दोनों पक्षों के बयान को सुनने के बाद वे महसूस करें कि लड़की को दबाव डालकर निकाह पर मजबूर किया गया था, लड़की उस निकाह पर राज़ी नहीं थी और अब भी उस पति के साथ रहने पर राज़ी नहीं है तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल उस निकाह को नरस्त कर सकते हैं। अतः उससे पहले अबू-दाऊद और निसाई की हदीस ज़िक्र कर दी गई हैः

"إن جارية بكرا أتت النبي ﷺ، فذكرت أن أباها زوجها وهي كارهة فخيرها النبى ﷺ" (٢).

"एक कुँवारी लड़की नबी करीम (सल्ल0) के पास आई और उसने बताया कि उसके बाप ने उसकी नापसंदीदगी के बावजूद उसका निकाह करा दिया है। तो नबी करीम (सल्ल0) ने उस लड़की को अधिकार दिया।"

और दारक़ुतनी व बैहेक़ी की रिवायत में हैः

"إن رجلا زوج ابنته وهي بكر من غير أمرها فأتت النبي ﷺ ففرق

1. अबू दाऊद 1/290 बाबुल मिरअति यतज़व्वजुल मरआः फ़यजिदुहा हुबला
2. अबु दाऊद 1/286

بينهما" (1)-

"एक व्यक्ति ने अपनी कुँवारी बेटी की शादी उससे इजाज़त लिए बग़ैर करा दी। वह नबी करीम (सल्ल0) के पास आई, तो आप (सल्ल0) ने दम्पति में अलगाव करा किया।"

अत: सबसे बेहतर रास्ता यही है कि ज़बरदस्ती के निकाह को लागू मान कर औरत को क़ाज़ी के पास अलगाव का अधिकार दिया जाये।

बहस का निचोड़:

1. समझदार, बालिग़ लड़की का निकाह उसकी इच्छा के विरुद्ध कराना शरीअत के अनुसार अवैध है। लड़की को डरा धमका कर और उस पर दबाव डाल कर उसको निकाह के लिए तैयार कर लेना और "हाँ" कहलवा लेना उसकी रज़ामंदी नहीं समझी जायेगी।

2. हनफ़ी उलमा के विचार में दबाव के आधार पर ही सही अगर लड़की ने निकाह की इजाज़त दे दी तो यह निकाह लागू हो जाएगा। हां, उसको निकाह निरस्त कराने का अधिकार होगा।

3. ब्रिटिश नागरिकता प्राप्त लड़की का निकाह अगर उसके रिश्तेदारी में हिन्दुस्तानी या पाकिस्तानी लड़के से कर दिया जाये और दोनों एक जगह रह रहे हैं, तो लड़की को महज़ इस आधार पर अलगाव का अधिकार नहीं होगा कि उसका पति ब्रिटिश नागरिक नहीं है और उसकी तालीम व तरबीयत ब्रिटेन के माहौल में नहीं हुई है।

4. ज़बरदस्ती निकाह के बाद चाहे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो जाये, या सम्बन्ध स्थापित न हो–दोनों स्थितियों में अलगाव का अधिकार हासिल

1. सुनन दारे क़ुतनी 3/233, सुनन अल बैहेक़ी 7/117

होगा। हां शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने के बाद अलगाव हो तो पूरी मेह्र देना अनिवार्य होगा और इससे पहले अलगाव की स्थिति में आधा मेह्र अनिवार्य होगा।

5. क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के विचार में जब इस बात की तसदीक़ हो जाये कि लड़की को उसकी रज़ामंदी के बग़ैर ज़बरदस्ती दबाव के ज़रिये निकाह पर मजबूर किया गया है, लड़की को वह निकाह पसंद नहीं, और वह अपने पति के साथ रहना पसंद नहीं करती है, तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल उस निकाह को निरस्त कर सकते हैं।

☆☆☆

जबरी शादी

डॉ. अब्दुल्लाह जोलम
उमराबाद, तमिलनाडु

अभिभावक के लिए वैध नहीं है कि समझदार बालिग़ लड़की की शादी उसकी इच्छा और अनुमति के बिना कर दे। अगर उसने ऐसा किया तो लड़की को इख़्तियार होगा कि चाहे तो निकाह क़ुबूल करे या निरस्त करवा ले। उसकी दलील निम्नलिखित हदीसें हैं:

"عن أبي هريرة قال قال رسول الله ﷺ لا تنكح الأيم حتى تستأمر ولاتنكح البكر حتى تستأذن، قالوا: يا رسول الله وكيف إذنها؟ قال: أن تسكت" (۱)۔

"हज़रत अबू-हुरैरा रजि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने फ़रमाया: शौहर-दीदा औरत का निकाह उसके मश्वरा के बिना न किया जाये और कुँवारी लड़की का निकाह उसकी अनुमति के बिना न किया जाये। सहाबा ने अर्ज़ किया: या रसूलुल्लाह (सल्ल0) उसकी इजाज़त कैसे मालूम होगी? आप (सल्ल0) ने फ़रमाया: उसकी ख़ामोशी उसकी इजाज़त है।"

"عن خنساء بنت خذام أن أباها زوجها وهي ثيب فكرهت ذلك، فأتت رسول الله ﷺ فرد نكحا" (۲)۔

1. बुख़ारी व मुस्लिम

2. इस हदीस की रिवायत मुस्लिम को छोड़ कर मुहद्दिसीन की एक जमाअत ने की है।

''हज़रत ख़न्सा बिन्ते ख़ुज़ाम (रजि0) से रिवायत है कि उनके पिता ने उनकी शादी करा दी थी और वह सय्यिबा थीं, तो उन्हें यह शादी नापसंद थी। चुनाँचे वह रसूलुल्लाह (सल्ल0) के पास आईं तो आप (सल्ल0) ने उनका निकाह रद्द कर दिया।''

''عن ابن عباس قال: إن جارية بكرا أتت رسول الله ﷺ فذكرت أن أباها زوجها وهي كارهةفخيرها النبى ﷺ'' (1)-

''हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 से रिवायत है कि एक कुँवारी लड़की रसूलुल्लाह (सल्ल0) के पास आई और उसने बताया कि उसके बाप ने उसकी शादी कर दी है और वह उसको नापसंद है तो आप (सल्ल0) ने उसको अधिकार दिया।''

दबाव की स्थिति में उसके 'हाँ' कहने या दस्तख़त करने से रज़ामंदी प्रकट नहीं होती।

1, 2 लड़की को निकाह निरस्त कराने का अधिकार हासिल है।

3. अगर लड़की प्रारम्भ में निकाह से राज़ी रही हो और बाद में सामाजिक अन्तर के कारण से जुदाई चाहे तो उसे ख़ुलअ् लेना पड़ेगा। निकाह निरस्त नहीं किया जाएगा। क्योंकि निकाह के सही होने के लिए इस क़िस्म की किफ़ाअत की कोई शर्त नहीं है।

4. अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो चुके हों तो इस बात की छानबीन अच्छी तरह करनी होगी कि प्रारम्भ में निकाह में लड़की राज़ी थी या नहीं। क्योंकि लड़की का अपने आप को पति के हवाले करना प्रबल रूप से उसकी रज़ा की दलील है और यह भी हो सकता है कि अपने आपको मजबूर

1. इसकी रिवायत इब्ने माजा को छाड़ कर हदीस के पांचों इमामों ने की है।

पा कर हवाले करने के लिए तैयार हुई हो। तो फिर यह देखना होगा कि हिन्दुस्तान व पाकिस्तान से बाहर जाने के बाद, उनके बीच शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हुए या नहीं। अगर हुए हों तो निकाह निरस्त कराने का अधिकार न होगा। हज़रत बरीरा के आज़ाद होने के बाद आप (सल्ल0) ने उनसे फ़रमाया:

"وإن قربک فلا خیار لک" (1)۔

''अगर वह (अर्थात तुम्हारे पति) तुमसे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर चुके हैं तो तुम्हें अधिकार नहीं है।''

5. अगर क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के सामने इस बात का सुबूत मिल जाता है कि लड़की को दबाव के ज़रिये निकाह पर मजबूर किया गया था। लड़की किसी तरह निकाह मंजूर करने के लिए तैयार नहीं थी और न है तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को इसकी मांग पर निकाह निरस्त करने का अधिकार होगा। क्योंकि यही मुसलमानों के लिए सरकार के स्थान पर हैं।

☆☆☆

1. अबू दाऊद

जबरी शादी

डॉ. अब्दुल अज़ीम इस्लाही
मुस्लिम युनिवर्सिटी, अलीगढ़

यह बड़े अफ़सोस का मक़ाम है कि इस्लाम जिसने औरतों का अलग अस्तित्व तस्लीम किया और उनको तरह-तरह के अधिकार दिए, हम अपने कर्म से उसकी घिनौनी तस्वीर पेश करें, और दूसरों को इस पर हंसने का अवसर उपलब्ध करें। पश्चिम के ऊचें स्तर में ज़िन्दगी गुज़ारने और उसके आज़ादाना माहौल में बच्चों को उसी तरह विकसित होने देने के बाद सिर्फ़ शादी की हद तक यह ज़ोर-ज़बरदस्ती किसी तरह इस्लामी रूह से हमआहंग नहीं है। जिसको हो ईमान व दिल अज़ीज़ उसकी गली में जाए क्यों? यह मरहला तो आना ही था। ऐसे लोगों को पहले ही सोच कर या तो उस पश्चिमी माहौल को छोड़कर वापस आ जाना चाहिए था, और नहीं आए तो उसके कड़वे कसीले फलों को खाना पड़ेगा। उसके सुधार के लिए पूरब में रिश्ते करने से जो नतीजे हो सकते हैं उनको सवालनामा में पूरी तरह प्रतिबिम्बित कर दिया गया है। ये रिश्ते धार्मिक, शैक्षिक व सांस्कृतिक एतेबार से बिल्कुल ग़ैर-कुफ़ू में होंगे। नस्ल के एतेबार से एक हों। जिनकी उस माहौल में विकसित नस्ल के लिए कोई अहमियत नहीं है। शादी के सिलसिले में उस तरह की ज़ोर ज़बरदस्ती और चालबाज़ी व फ़रेब पश्चिम में विकसित

औलाद को धर्म से और दूर कर देगी और इस्लाम की अलग जग हंसाई होगी। ऐसे खानदानों के लिए बेहतर है कि उसी माहौल में रहने वाले मुसलमानों के बीच रिश्ते तलाश करें। इस संक्षिप्त भूमिका के बाद दिए गए सवालों के उत्तर प्रस्तुत हैं:

1. बेशक इस्लाम में समझदार बालिग़ लड़की की रज़ामंदी को शरीअत ने अनिवार्य क़रार दिया है और उपर्युक्त अत्याचार पूर्ण तरीक़े से रज़ामंदी के विरुद्ध हैं। इसलिए शायद स्थापित ही न हो।

2. धोखा, मार-पीट और पासपोर्ट के नष्ट कर देने-जैसी धमकी के माध्यम से शादी के लिए समझदार बालिग़ लड़की से दबाव के साथ 'हाँ' करा ली जाए या दस्तख़त करा लिए जाएँ तो यह उसकी वास्तविक रज़ामंदी या अनुमति हरगिज़ तस्लीम नहीं होगी। इस तरह की चीज़ की धारणा अफ़्रीक़ा के किसी जंगली क़बीले में भले ही किया जाए। इस्लाम में इसकी कोई धारणा नहीं है।

3. सांस्कृतिक, शैक्षिक व धार्मिक अन्तर के आधार पर लड़की का यह दावा उसका वैध अधिकार होगा कि उसकी शादी जिससे की जा रही है वह उसका कुफ़ू नहीं है और इस आधार पर उसको अलगाव का अधिकार हासिल है।

4. इस तरह के दबाव के बाद दोनों के बीच शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं तो उसे निकाह स्वीकार करने पर दलील माना जाएगा अन्यथा नहीं। (जिस तरह एक तलाक़ के बाद उस तरह का सम्बन्ध तलाक़ वापस होने के जैसा होता है और ऐसा न हो तो जुदाई हो जाती है)।

5. क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को दोनों पक्षों के बयान के बाद इस

बात का यक़ीन हो जाये कि लड़की को दबाव के ज़रिये निकाह पर मजबूर किया गया था, हालाँकि वह किसी तरह राज़ी नहीं थी, तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल उस निकाह को निरस्त कर सकते हैं।

☆☆☆

निकाह में अभिभावकों के अधिकार

मुफ़्ती अहमद नादिर क़ासमी

इस्लाम की सामाजिक और परिवारिक व्यवस्था में अभिभावक को बड़े आदर की निगाह से देखा गया है। शरीअत की तरफ़ से बहुत सी आर्थिक, प्रशासनिक, शैक्षणिक और नैतिक ज़िम्मेदारियाँ उनपर डाली गई हैं। और उसे हर संभव निभाने और बरतने की आशा की गयी है। ज़िम्मेदारियाँ चाहे आचरण व चरित्र, शिक्षा व प्रशिक्षण और सामाजिक जीवन से सम्बन्धित हों या रोटी व कपड़ा और शादी-ब्याह से, उनमें किसी भी क़िस्म की कोताही और कमी पर सख़्त पकड़ की है। अत: नबी (सल्ल0) का कथन है:

"كلكم راع وكلكم مسئول عن رعيته" (۱)۔

''कि तुम में का हर व्यक्ति निगहबान है। हर एक से उसके मातहतों (नीचे वालों) के बारे में पूछताछ होगी।''

इसी तरह जब बच्चे जवान और बालिग़ हो जायें तो उनकी समय पर शादी-ब्याह कर देने का भी शरीअत ने मुतालबा किया है। अत: क़ुरआन करीम में अल्लाह तआला का इरशाद है:

"وأنكحوا الأيامى منكم والصالحين من عبادكم وإمائكم إن يكونوا فقراء يغنهم الله من فضله" (۲)۔

1. अख़रजा अश्शैख़ान फ़ी किताबिल इमारा, अल्लुलु वल मरजान 478

2. सूरा नूर: 32

''और निकाह कर दो बे निकाह लोगों का अपने में के (और उन गुलाम और बांदियों का जो नेक और भले हों) अगर वह ग़रीब और मुफ़लिस होंगे तो अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से उन्हें ग़नी और मालदार कर देगा।''

इसी तरह जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) का इर्शाद है:

''من ولد له ود فليحسن اسمه وأدبه، فإذا بلغ فليزوجه، فإن بلغ ولم يزوجه، فأصاب إثما فإنما إثمه على أبيه، وفي رواية: عن رسول الله ﷺ قال: في التوراة مكتوب من بلغت ابنته اثنتي عشرة سنة ولم يزوجها فأصابت إثما فإثم ذلک عليه'' (1)-

''जिस व्यक्ति के घर बच्चा पैदा हो उसे चाहिए कि उसका अच्छा-सा नाम रखे और उसे बेहतरीन आचरण सिखाये और जब वह बालिग़ हो जाये तो उसकी शादी कराये। बालिग़ होने के बाद उसने उसकी शादी नहीं कराई और उससे कोई गुनाह हो गया तो उस गुनाह का वबाल उसके बाप पर होगा। और दूसरी रिवायत में जनाब रसूलुल्लाह सल्ल0 ने फ़रमाया कि तौरेत में यह मौजूद है कि जिस व्यक्ति की लड़की बारह साल की हो गई और उसने उसकी शादी नहीं कराई और उस लड़की से कोई गुनाह सरज़द हो गया तो उस गुनाह का वबाल उस व्यक्ति पर होगा।''

यही नहीं बल्कि समाज को पाक व साफ़ रखने और बिन ब्याही औरतों के रिश्ता मिलने के बाद फ़ौरन उनका निकाह कर देने की जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने अभिभावकों को ज़ोर देकर आदेश दिया एक रिवायत में है:

''ثلاث لاتؤخرها: الصلاة إذا آنت، والجنازة إذا حضرت، والأيم إذا

1. रवाहुमा बैहेक़ी फ़ी शुअ़बिल ईमान और देखिए: अल मिशकात 2/271

وجدت لها كفواً" (1)-

''तीन चीज़ में देर नहीं करनी चाहिए। नमाज़, जब उसका वक़्त आ जाये; जनाज़ा, जब हाज़िर हो जाये, और जब बेशादी शुदा लड़के या लड़की का रिश्ता मिल जाये।''

अभिभावकों की रज़ामंदी और समझदार बालिग़ से इजाज़तः

लड़के और लड़की के निकाह और शादी ब्याह में - मां बाप और अभिभावकों की भूमिका (खास तौर से जब बालिग़ हों) एक दीनी कर्त्तब्य और शरअ़ी हक़ की हैसियत रखता है। उसे हर सम्भव अदा करना है। शरीअत के उद्देश्य बंदे के सामान्य हितों, और सामाजिक जीवन का गहराई से अध्ययन करने से मालूम होता है कि निकाह में अभिभावक की रज़ामंदी अगर वह सन्तुलित सीमा में हो और किसी ख़ास जगह निकाह के किसी हित की वजह से अनुमति न देने की स्थिति में उनके शरीअत के दिये हुए अधिकार नष्ट न हो रहे हों, तो यह अवश्य शरीअत में वांछित है। वे रिवायतें जिनमें अभिभावकों की इजाज़त को ज़रूरी और इच्छा के बिना किये हुए निकाह को निरस्त व अवैध ठहराया गया है उनकी मंशा वास्तव में यही है कि अगर बच्चे अपनी मनमानीसे अभिभावकों की अनुमति के बग़ैर अपनी शादी कर लेंगे तो सामाजिक हैसियत से उनकी ग़ैरत और भावनाओं को उसे पहुंचेगी जो अवश्य शरीअत की निगाह में माता-पिता और अभिभावकों के निरादर और अदब व सम्मान से दूर की बात है, और इसलिए भी कि अभिभावकों की अनुमति पर निकाह को आधारित करके वास्तव में व्यक्तिगत सम्मान को और समाज में उसकी प्रतिष्ठा को क़ायम रखना है ताकि लोग उसे बुरा न

1. रवाह तिर्मिज़ी व क़ालाः इस्नादुहु ग़रीब

समझें। इसीलिए रिवायतों में अभिभावकों की सहमति और रज़ामंदी के बिना किये गये निकाह को बुरा समझा गया है। कुछ रिवायतों में तो उसे व्यभिचार तक कह दिया गया है, इस सिलसिले की कुछ रिवायतें निम्न पंक्तियों में दर्ज की जाती हैं जिन से अभिभावक की सहमति के बिना किए गये निकाह के लागू न होने का पता चलता है:

"عن عائشة رضى الله تعالى عنها أن رسول الله ﷺ قال: أيما امرأة نكحت بغير إذن وليها فنكاحها باطل، فنكاحها باطل، فنكااحها باطل، فإن دخل بها، فلها المهر بما استحل من فرجها فإن اشتجروا فالسطان ولى من لا ولى له" (۱)-

''हज़रत आइशा (रजि0) फ़रमाती है कि रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने फ़रमाया : जिस औरत ने अपना निकाह अपने अभिभावक की अनुमति बिना किया उसका निकाह अवैध है, उसका निकाह अवैध है, उसका निकाह अवैध है। अगर उसके पति ने शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर लिया तो उस औरत का मेह्र उसको अपने लिए हलाल समझने की वजह से उस पर वाजिब होगा और अगर अभिभावक आपस में मतभेद कर लें तो सुलतान उसका वली है, जिसका कोई वली नहीं।''

इसी तरह हजरत इब्ने अब्बास रजि. की रिवायत में है:

"أن االنبى ﷺ قال: البغايا اللاتى ينكحن أنفسهن بغير بينة" (۲)-

''जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने फ़रमाया कि वह औरत व्यभिचारिणी

1. रवाह अहमद व तिर्मिज़ी व अबु दाऊद व इब्ने माजा व दारमी, मिशकात 2/70–271, प्रकाशन मकतबा थानवी सहारनपूर

2. वस्सहीह अन्नहु मौक़ूफ़न अला इब्ने अब्बास, रवाह तिर्मिज़ी, मिशकात: 2/271

और अश्लील है जिसने अपना निकाह बिना प्रमाण के कर लिया।'' (उसकी सनद हज़रत इब्न अब्बास रज़ि0 पर आधारित है)

हज़रत जाबिर रज़ि0 की रिवायत में है:

"أن النبی ﷺ قال: أيما عبد تزوج بغير إذن سيده فهو عاهر" (١)۔

''जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने फ़रमाया: जिस गुलाम ने अपने मालिक की अनुमति के बग़ैर अपनी शादी कर ली, वह व्यभिचारी है।

और हज़रत अबू-हुरैरा रजि0 की रिवायत में है:

"قال رسول الله ﷺ: لا تزوج المرأة نفسها فإن الزانية التی تزوج نفسها" (٢)۔

रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने फ़रमाया कि कोई औरत खुद से शादी न करे, क्योंकि वह औरत व्यभिचारिणी है जो खुद से अपनी शादी कर ले''(अभिभावकों की अनुमति के बग़ैर)। उपर्युक्त रिवायतों से यह मालूम होता है कि लड़कियां, चाहे बालिग़ हों, या नाबालिग़ उनका निकाह आभिभावकों की अनुमति और मर्ज़ी के बग़ैर सही नहीं।

अनुमति अनिवार्य न होने की रिवायतें:

अब वे रिवायतें नक़ल की जा रही हैं जिनसे मालूम होता है कि निकाह में लड़की अगर बालिग़ और समझदार हो और अपनी ज़िन्दगी का फ़ैसला खुद कर सकती हो तो उसकी इच्छा और अनुमति के बिना, या उसकी मंशा के ख़िलाफ़ और दबाव के साथ किसी दूसरी जगह शादी कर देना सही नहीं, चाहे वह अभिभावकों की नज़र में कितना ही बेहतर रिश्ता क्यों न हो,

1. रवाह तिर्मिज़ी व अबूदाऊद व दारमी, मिशकात 2/271

2. रवाह इब्ने माजा, मिशकात 2/271

मगर वह शरीअत के अनुसार इसके हक़दार नहीं। अल्लाह तआला का इर्शाद है:

"وإذا طلقتم النساء فبلغن أجلهن فلا تعضلوهن أن ينكحن أزواجهن إذا تراضوا بينهم بالمعروف، ذلک يوعظ به من كان منكم يؤمن بالله واليوم الآخر ذلكم أزكى لكم وأطهر والله يعلم وأنتم لاتعلمون" (۱)۔

''और जब तुमने औरतों को तलाक़ दे दी और वह अपने गिनती के दिन पूरी कर चुकी, तो तुम उनको अपने उन्हीं पूर्व पतियों से निकाह करने से मत रोको। जब दोनों आपस में ख़ुशगवार माहौल में और नियमानुसार निकाह करने पर रज़ामंद हों। यह नसीहत उन लोगों को की जाती है जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखते हैं और उसी में तुम्हारे लिए बड़ी पवित्रता और सुथराई की बात है। इस बात को अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते''

"فإذا بلغن أجلهن فلا جناح عليكم فيما فعلن في أنفسهن بالمعروف والله بما تعلمون خبير" (۲)۔

''तो जब पूरी कर चुकीं वह अपनी इद्दत तो तुम पर कोई गुनाह नहीं इस बात में कि वह कोई फ़ैसला करें अपने पक्ष में नियमानुसार और अल्लाह तआला अच्छी तरह परिचित और बाख़बर है तुम्हारे कामों से जो तुम करते हो।''

"وعن أبي هريرة أن رسول الله ﷺ: قال: لاتنكح الأيم حتى تستأمر، ولاتنكح البكر حتى تستأذن قالوا: يا رسول الله! وكيف إذنها: قال: أن

1. सूरा बक़रा: 232 2.सूर: बक़रा 234

تسكت" (۱).

"हज़रत अबू हुरैरा रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने फ़रमाया सय्यिबा का निकाह उससे राय लिए बग़ैर नहीं किया जा सकता है और कुवांरी का निकाह उसकी अनुमति के बिना न किया जाये। सहाबा ने पूछा उसका तरीक़ा क्या होगा? फ़रमाया उसकी तरफ़ से अनुमति उसकी ख़ामोशी है।"

"**عن ابن عباس أن النبی ﷺ: قال: الأيم أحق بنفسها من وليها، والبكر تستأذن في نفسها وإذنها صماتها، وفي رواية: الثيب أحق بنفسها من وليها، والبكر تستأمر وإذنها سكوتها، وفي رواية: البكر يستأذنها أبوها في نفسها**" (۲).

"हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 से रिवायत है कि आप (सल्ल0) ने फ़रमाया बिना पति वाली (अय्याम) अपने आप की अभिभावक से ज़्यादा हक़दार है और कुंवारी से उसके व्यक्तिगत मामले में इजाज़त ली जाएगी और उसकी इजाज़त उसकी ख़ामोशी है। एक रिवायत में है कि सय्यिबा (शौहरदीदा) अपने आप की अभिभावक से ज़्यादा हक़दार है और कुंवारी से राय ली जाएगी और उसकी राय ख़ामोशी है। एक दूसरी रिवायत में है कि कुंवारी के बारे में उसके पिता उससे इजाज़त लेंगे।"

"**عن خنساء بنت خذام أن أباها زوجها وهي ثيب فكرهت ذلک فأتت رسول الله ﷺ فرد نكاحها**" (۳).

1. मुस्लिम 5/218 व अफ़क़हुल बुख़ारी, वन्नसाई अन यहया बिन अबी कसीर
2. मुस्लिम बाब इस्तिज़ानुस्सय्यिब फ़िन्निकाह बिन्नुतक़ि 5/220
3. रवाह बुख़ारी, मिशकात 2/270

''ख़न्सा बिन्त ख़ुज़ाम से रिवायत है कि उनके पिता ने उनकी शादी बिना उनकी अनुमति के कर दी जबकि वह सय्यिबा थीं। वह उस शादी से खुश नहीं थीं। अत: उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल0) से उसकी शिकायत की तो जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने उस निकाह को निरस्त फ़रमा दिया।''

इस भाग से सम्बन्धित रिवायतों पर उसूली बहस:

वह तमाम रिवायतें जिनमें इस बात की तरफ़ इशारा किया गया है कि ''अभिभावक की अनुमति के बिना कुंवारी का निकाह अवैध है, या जिनमें यह कहा गया है कि जिसने अपने अभिभावक की अनुमति के बिना अपना निकाह कर लिया तो वह व्यभिचारिणी है'' इन तमाम रिवायतों के प्रमाण की हैसियत को भी सामने रखना चाहिए।

हज़रत ख़ुन्सा बिन्ते ख़जाम रजि0 (1) वाली हदीस में जिसमें जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने निकाह को निरस्त फ़रमा दिया था यह हदीस भी मुर्सल है। इसकी रिवायत अबू-सलमा ने की है। और मुर्सल रिवायतें पूरी तरह दलील नहीं होतीं। (2)

لا نكاح إلا بولى ''ला निकाह इल्ला बि वली'' (अभिभावक के बिना निकाह नहीं) यह रिवायत भी अबू इसहाक़ से और वह अबू बर्दा से मुर्सल है (अर्थात वह हदीस जिसमें सनद का आख़िरी हिस्सा अर्थात ताबई से ऊपर के रावी का नाम ग़ायब हो) सुफ़ियान सूरी के कुछ शार्गिदों ने इसहाक़ के वास्ते से उसे मरफ़ूअ (अर्थात वह हदीस जो रसूलुल्लाह (सल्ल0) तक पहुँचती हो और बीच में कोई रावी ग़ायब न हो) ज़िक्र करने की कोशिश की है जो

1. बुखारी हियल में और अहमद मुसनद में 6/386

2. वल मुरसल लैस बेहुज्जतिन, नस्बुर्राया 3/232

सही नहीं है। उस्मान ज़ैलई कहते हैं: **وأسنده بعض أصحاب سفيان عن أبى إسحاق ولا يصح**" ''सूफ़ियान सूरी के कुछ लोगों ने इसहाक़ के हवाले से इसका प्रमाण मरफ़ूअ बताने की कोशिश की है जो ठीक नहीं है'' हां, आप अबू इसहाक़ से, वह अबू बर्दा से वह अबू मूसा से और वह नबी (सल्ल0) वाली रिवायत को सही और मिली हुई क़रार देते हैं। उनके शब्द हैं:

"وروايـة هـولـاء الـذيـن رووا عـن أبـي إسـحاق عن أبي بردة عن أبي موسى عن النبى ﷺ "لانكاح إلا بولى" عندى أصح" (1)-

इसकी रिवायत उन लोगों ने की है जिन्होंने अबू इस्हाक़ से उन्होंने नबी (सल्ल0) से की है।

इसकी रिवायत अबू-दाऊद, तिर्मिज़ी और इब्ने-माजा ने की है। अर्थात यह प्रमाणित रिवायत है, मगर कमज़ोर होने से इन्कार नहीं किया जा सकता, यद्यपि प्रमाण में मतभेद है। उसी मतभेद का उल्लेख इमाम तिर्मिज़ी ने किया है। इसके अलावा इस हदीस के दो और प्रमाण हैं:

एक, उरवा से और उन्होंने आयशा (रज़ि0) जिसकी रिवायत इब्ने माजा ने की है, इस रिवायत में एक रावी हज्जाज है जो कमज़ोर है दूसरी सनद, हिशाम से उन्होंने ने अपने बाप से उन्होंने आयशा से की (रज़ि0) है, इसमें एक रावी मुहम्मद बिन यज़ीद बिन सनान हैं। इत्तिफ़ाक़ की बात यह है कि दोनों बाप बेटे कमज़ोर हैं। (2) इब्ने हजर ने अबू फ़ज़ल के बेटे अदी के माध्यम से नक़्ल किया है और अदी को कमज़ोर बताया है। (3)

"لاتزوج المرأة نفسها فإن الزانية هى التى تزوج نفسها"

1. नसबुर्राया 3/236
2. देखिए: नसबुर्राया 3/236
3. देखिए: तलखीसुल हबीर 2/162

औरतें अपना निकाह स्वयं न करें क्योंकि व्यभिचारिणी ही अपना निकाह स्वयं करती है। इसकी रिवायत दार-कुतनी ने की है और अबू हुरैरा की नबी (सल्ल0) से रिवायत हैं। इसमें दो रावी हैं। एक जमील और दूसरे मुस्लिम। इन दोनों के बारे में इब्ने जोज़ी कहते है: "وجميل ومسلم هذان لايعرفان" "और जमील और मुस्लिम ऐसे हैं जिनकी पहचान नहीं मालूम" यह रिवायत भी मौकूफ है:

"ورواه بحر بن نضر ...... عن ابن سيرين عن ابى هريرة موقوفا وهو اشبه" (١)۔

"बहर बिन नज़र ...... ने इब्ने सीरीन से उन्होने अबू हुरैरा से रिवायत की है और इसमें सन्देह है"

इस तरह की लगभग तमाम रिवायतों को इब्ने जोज़ी ने "أحاديث واهية ضعيفة" कमज़ोर व बे-हैसियत कहा है। (2)

"أيما امرأة نكحت بغير وذن وليها فنكاحها باطل ...... الخ"۔

हदीस: वह शौहर दीदा औरत जो अपने अभिभावक की अनुमति के बिना निकाह करती है तो उसका निकाह अवैध है....................अन्त तक

इस रिवायत में एक रावी उमर बिन सबीह है जो कमज़ोर है। इस हदीस की एक सनद हज़रत अनस के वास्ते से है, एक हज़रत अली के वास्ते से, दो हज़रत अबू-हुरैरा के वास्ते से, एक हज़रत जाबिर से और इन तमाम सनदों में कोई-न-कोई कमज़ोरी है। हज़रत अबू-हुरैरा वाली दोनों सनदों में से एक में सुलैमान बिन अरक़म जिनको इब्ने अदी ने कमज़ोर क़रार दिया है और

1. नसबुर्राया 3/237

2. हवाला साबिक़

दूसरे में अज़रमी हैं जिनको बुख़ारी, नसाई और इब्ने मुईन ने कमज़ोर क़रार दिया है। उसमान ज़ैलई आख़िर में लिखते हैं:

"وهذه الأحاديث كلها غير محفوظة انتهى"

''ये तमाम हदीसें असुरक्षित है''। (1) मुस्तदरक ने इस रिवायत को बुख़ारी व मुस्लिम की शर्त के मुताबिक़ क़रार दिया है। इमाम तिर्मिज़ी ने हसन कहा है। बावजूद इसके कि इस रिवायत पर आपत्ति की गई है। नसबुर्राया के लेखक आगे लिखते हैं:

"وفيه كلام تقدم، وتقدم ذلک في حديث ابن عباس، وفي حديث جابر، وفي حديث علی، وفي حديث عبد الله بن عمروبن العاص وكلها معلولة"

इसमें पहले आई हुई बात है, यह इब्ने अब्बास की हदीस में आ चुकी है, जाबिर की हदीस में, अली की हदीस में और अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस की हदीसों में और इन सब में कमज़ोरी है। (2)

"لاتنكحوا النساء إلا الأكفاء ولايزوجهن إلا الأولياء ولا مهر دون عشرة دراهم"

''औरतों का निकाह नहीं किया जाता सिवाए कुफ़ू में, उनके निकाह अभिभावक के बिना नहीं होते और मेह्र दस दिरहम के अतिरिक्त नहीं। यह हदीस भी इसी अध्याय से सम्बन्धित है। इसकी रिवायत बैहेक़ी ने सुनन में की है। इसके रावी मुबश्शिर बिन उबैद है जो मतरूकुलहदीस है। उसके ऊपर झूठ और हदीस गढ़ने का आरोप है। इमाम अहमद बिन हंबल ने उनसे रिवायत की हुई हदीसों के बारे में कहा है:

1. नसबुर्राया: 245 2. नसबुर्राया: 246

''أحاديث مبشر بن عبيد موضوعة كذب''

''उनकी रिवायतें गढ़ी हुई हैं।''(1)

यहाँ से यह सन्देह कि अभिभावक को शौहर दीदा पर किसी ज़बरदस्ती का अधिकार नहीं लेकिन कुवांरी पर है, ख़त्म हो जाता है। क्योंकि बैहेक़ी की वह रिवायत जो हज़रत इब्ने अब्बास से की गई है, उसमें विस्तार मौजूद है कि आप (सल्ल0) ने शौहर दीदा और कुवांरी दोनों का निकाह उनकी इच्छा के विरुद्ध किये जाने को निरस्त फ़रमा दिया।

''عن ابن عباس أن النبي ﷺ رد نكاح بكر وثيب أنكحهما أبوهما وهما كارهتان فرد النبي ﷺ نكاحهما'' (٢)۔

हज़रत इब्ने अब्बास नबी (सल्ल0) से रिवायत करतें हैं कि नबी (सल्ल0) ने कुवांरी और शौहर दीदा दोनों का निकाह निरस्त कर दिया, इन दोनों का निकाह उनके बापों ने किया था और वे उन्हें पसन्द नहीं करती थीं।

उपर्युक्त व्याख्याओं से यह बात तो साबित हो ही जाती है कि इस अध्याय की रिवायतों पर आपत्ति है या मुर्सल हैं या कमज़ोर हैं या उनमें कोई-न-कोई कमी है। इसलिए मसला निकालने में उलमा और मुज्तहिदीन को इसे सामने ज़रूर रखना चाहिए।

इमामों के दृष्टिकोण:

उपर्युक्त आयतों व हदीसों से इतना तो स्पष्ट है कि रिवायतें दोनों तरह की हैं। इसी वजह से फ़ुक़्हा के बीच मतभेद पाया जाता है। इमाम मालिक और इमाम शाफ़ई की राय है कि अभिभावक की इजाज़त और

1. नसबुर्राया: 248

2. बैहेक़ी 3/233 हदीस न0 48 नसबुर्राया के हवाले से 3/241

रज़ामंदी शर्त है। समझदार बालिग़ अपनी मर्ज़ी से जहां चाहे शादी नहीं कर सकती और अगर कर ली तो निकाह सही नहीं होगा। चाहे शौहर दीदा हो या कुवांरी। अत: अल्लामा नववी ''मुस्लिम की व्याख्या'' में लिखते हैं:

"واختلف العلماء في اشتراط الولى، فقال مالک والشافعى: يشترط ولايصح نكاح إلا بولى، وقال أبوحنيفة رحمه الله: لاشترط في الثيب ولا في البكر البالغة، بل لها أت تزوج نفسها بغير إذن وليها" (۱)۔

''निकाह में अभिभावक के शर्त क़रार दिए जाने के बारे में उलमा के बीच मतभेद है। इमाम मालिक रह0 और इमाम शाफ़ई रह0 के नज़दीक अभिभावक का होना शर्त है। निकाह अभिभावक के बग़ैर सही नहीं और इमाम अबू-हनीफ़ा रह0 के नज़दीक न तो शौहर दीदा के निकाह में अभिभावक का होना शर्त है और न कुवांरी बालिग़ के। उसे पूरा अधिकार है कि वह अभिभावक की इजाज़त के बग़ैर अपना निकाह कर ले।''

और ''हिदाया'' में है:

"ولايجوز للولى إجبار الكبر البالغة على النكاح خلافا للشافعى رحمه الله لـه الـاعتبار بالصغيرة، وهذا، لأنها جاهلة بأمر النكاح لعدم التجربة، ولهذا يـقبـض الأب صـداقهـا بـغير أمرها، ولنا أنها حرة مخاطبة فلايكون للغير عليها ولـايـة، والـولـايـة عـلى الصغيرة لقصور عقلها، وقد كمل بالبلوغ بدليل توجه الـخـطـاب، فـصـار كـالـغلام وكالتصرف في المال، وإنما يملک الأب قبض الصداق برضاها دلالة، ولهذا لايملک مع نهيها" (۲)۔

''अभिभावक के लिए कुवांरी व बालिग़ पर निकाह में ज़बरदस्ती

1. शरह मुस्लिम लिन्नवी 2/455, प्रकाशन मुख़्तार एंण्ड कम्पनी सहारनपूर

2. अल-हिदाया मअल फ़तह 3/251-256

करना जायज़ नहीं, इसमें इमाम शाफ़ई का मतभेद है। वह कुवांरी बालिग़, को कम उम्र पर कयास करते हैं। वह कहते हैं कि यह इसलिए है कि वह अनुभव न होने के आधार पर निकाह के मामलों से अनजान होती है। यही कारण है कि अभिभावक अपनी नाबालिग़ बच्ची का मेह्र उसकी इजाज़त के बग़ैर भी ले सकता है। हमारी दलील यह है कि समझदार बालिग़ चूंकि आज़ाद है और सीधे शरीअत से सम्बन्धित है। अत: अभिभावक को इस पर किसी क़िस्म का अभिभावकत्व हासिल नहीं होगा। जहाँ तक नाबालिग़ पर अभिभावकत्व का सम्बन्ध है तो वह सिर्फ़ अक़्ल व सूझ बूझ की कमी की वजह से है। यह कमी बालिग़ होने से पूरी हो जाती है जिसकी दलील उसके आदेशों का संबोधित होना और मुकल्लफ़ होना है। अत: वह ऐसे ही हो गई जैसे लड़का कि उसको अपने ऊपर फ़ैसला करने का पूरा अधिकार हासिल होता है। जिस तरह अपने माल में वह पूरी तरह फ़ैसले की हक़दार है (अपने नफ़्स पर भी हक़दार होगी) जहाँ तक बाप के मेह्र वसूल करने के अधिकार का सम्बन्ध है तो वह उसकी रज़ामंदी और इशारा की बुनियाद पर है। यही वजह है कि अगर वह अपने पिता को मेह्र वुसूल करने से मना कर दे तो वह वसूल नहीं कर सकता।''

वरीयता:

इस अध्याय में चूंकि रिवायतें दोनों तरह की है जैसा कि अभी ऊपर उल्लेख हुआ इसलिए ज़ाहिरी तौर पर यह कठिनाई महसूस होती है कि किस पर अमल किया जाये या कोई ऐसी राह अपनायी जाये जिसमें दोनों पर अमल संभव हो सके। अत: उसके लिए वरीयता व समन्वय का रास्ता ही अपनाया जाना ज़्यादा बेहतर मालूम होता है, ताकि रिवायतों पर अकारण अर्थ लेने व

आलोचना और टिप्पणी से बचा जा सके। इमाम शाफई रह0 का इस अध्याय में यद्यपि मतभेद नक़ल है मगर खुद शाफई उलमा के यहाँ इस पर अमल नहीं है। और क़ाजी अयाज़ की राय इससे भिन्न है। जहाँ तक हक़ सिद्ध होने का सम्बन्ध है तो इसमें कोई शक़ नहीं कि हक़ अभिभावक के भी हैं और समझदार लड़की के भी हैं, हां देखना यह है कि शरीअत के अनुसार किसका हक़ बड़ा है? इस बारे में नववी लिखते हैं:

"أن لفظة "أحق" هنا مشاركة، معناه أن لها في نفسها في النكاح حقا، ولوليها حقا، وحقها أو كد من حقه، فإنه لو أراد تزويجها كفوا وامتنعت لم تجبر، ولو أرادت أن تتزوج كفواً فامتنع الولى أجبر، فإن اسر زوجها القاضى، فدل على تاكد حقها" (1)-

शब्द ''अहक़्क़'' (अधिक अधिकार) यहाँ पर दोनों के हक़ को शामिल है। अत: इसका अर्थ यह होगा कि समझदार बालिग़ का भी निकाह में अपने ऊपर हक़ है और वली का भी उस पर हक़ है। समझदार लड़की का हक़ अभिभावक के हक़ पर भारी और मज़बूत है। अत: अभिभावक अगर उसकी शादी कुफ़ू में करना चाहे और समझदार बालिग़ इन्कार करे तो उसको इस शादी पर मजबूर नहीं किया जाएगा। अगर वह ख़ुद कुफ़ू में शादी करना चाहे और अभिभावक को उससे इन्कार हो तो अभिभावक को मजबूर किया जाएगा। अगर वह अपने इन्कार पर अड़ी है तो क़ाज़ी उसकी शादी करायेगा। यह इस बात की दलील है कि उसका हक़ अभिभावक पर भारी है''।

इसलिए हनफ़ी फक़ीहों (माहिरे क़ानून) ने अभिभावकत्व की दो क़िस्में की हैं, और नाबालिग़ पर ज़बरदस्ती का अभिभावकत्व और बालिग़ समझदार

1. इमाम नबवी द्वारा मुस्लिम की व्याख्या 2/255

पर पसंदीदा अभिभावकत्व को साबित किया है। अत: अल्लामा इब्नुलहम्माम हनफ़ी लिखते हैं:

"والـولـاية في النكاح نوعان: ولاية ندب واستحباب وهو الولاية على البالغة العاقلة بكرا كانت أو ثيبا ....." (1)-

''निकाह में अभिभावकत्व दो तरह का होता है: पसंदीदा अभिभावकत्व और वह समझदार बालिग़ पर है, चाहे शौहर दीदा हो या कुवांरी.....।''

दुर्रे-मुख़्तार में है:

"وهـي نـوعـان: ولاية ندب على المكلفة ولو بكرا، وولاية إجبار على الصغيرة ولو ثيبا ومعتوهة"-

अभिभावकत्व की दो क़िस्म हैं: पसंदीदा यह, मुकल्लिफ़ा पर है यद्यपि कुंवारी हो मजबूर करने का,: यह सग़ीरा पर है यद्यपि वह सैइबा हो और कम-अक़्ल हो।''

एक सन्देह और उसका समाधान:

दोनों तरह की रिवायातों को अगर सामने रखा जाये तो विश्लेषण से यह सवाल पैदा होता है कि जब सारे अधिकार स्वयं समझदार बालिग़ के हैं और अभिभावकों को कोई अधिकार उस पर नहीं तो फिर उन रिवायतों का क्या अर्थ समझा जायेगा जिनमें औलिया को आदर की निगाह से देखा गया है और जैसा कि कुछ रिवायतों में कहा गया है कि उनके बिना निकाह ही सही नहीं है। इससे तो ज़ाहिरी तौर पर दोनों रिवायतों में टकराव मालूम होता है? स्पष्ट रहे कि इस सिलसिले में इब्ने हम्माम ने बड़े विस्तार से बहस की है

1. फ़त्हुल क़दीर 3/159

और दोनों के बीच समन्वय की कोशिश भी की है और जवाब भी दिया है। अत: क़ुरआन करीम की इन दो आयतों :

" واذا طلقتم النساء فبلغهن أجلهن فلا تعضلوهن أن ينكحن أزواجهن اذا تراضوا بينهم بالمعروف" (۱) और **"فاذا بلغن أجلهن فلا جناح عليكم فيمافعلن فى أنفسهن بالمعروف والله بما تعملون خبير"** (۲) ۔

''और जब तुमने औरतों को तलाक़ दे दी और वे इद्दत के दिन पूरा कर चुकें तो तुम उनको अपने उन्हीं पूर्व पतियों से निकाह करने से मत रोको जब दोनों आपस में सुखद माहौल में और नियमानुसार निकाह करने पर राज़ी हो''

''तो जब पूरी कर चुकें वे अपनी इद्दत तो तुम पर कोई गुनाह नहीं इस बात में कि वह अपने बारे में कोई फ़ैसला नियमानुसार करे, और अल्लाह खबर रखता है तुम्हारे कामों की जो तुम करते हों।

में यह बात कही गई है कि मात्र अपमान से बचने और सामाजिक रूप से शर्म का कारण होने की बुनियाद पर समझदार बालिग़ और सय्यिबा अर्थात शौहर-दीदा औरत को शरीअत के दिए हुए व्यक्तिगत अधिकारों पर अमल करने से रोकने का अभिभावकों को कोई हक़ नहीं है और न उनको यह इख़्तियार है कि उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ दबाव के ज़रिये जहाँ चाहें निकाह कर दें या उनको अपना निकाह मर्ज़ी के मुताबिक़ करने से रोकें। अत: वह लिखते है:

"فإن له أدلة أخرى سمعية هى المعمول عليها، وهى قوله تعالى: فلا تعضلوهن أن ينكحن أزواجهن" نهى الأولياء عن منعهن من نكاح من أن ينكحن

1. सूर: बक़र: 232

2. सूर बक़र: 234

إذا أريد بالنكاح العقد، هذا بعد تسليم كون الخطاب للأولياء، وإلا فقد قيل للأزواج: فإن الخطاب معهم في أول الآية: "وإذا طلقتم النساء فلا تعضلوهن" أي لاتمنعوهن حسا بعد انقضاء العدة أن يتزوجن" (1)-

''जो लोग ज़बरदस्ती के पक्षधर नहीं उनके पास दूसरी भी सुनी हुई और नक़्ली दलीलें हैं जो उनकी दलीलों को और अधिक भरोसेमन्द बनाती हैं और वह अल्लाह तआला का इर्शाद है:

"فلا تعضلوهن أن ينكحن أزواجهن"-

तो उनको निकाह करने से मत रोको।

इसमें अभिभावकों को समझदार, बालिग़ के अपने निकाह से रोकने से मना किया गया है। जब वह शादी करना चाहें और यह भी इस बात के तस्लीम कर लेने के बाद कि इस आयत में अभिभावकों को सम्बोधित किया गया है। क्योंकि पतियों को तो पहली आयत में मुख़ातिब किया ही गया है:

"فلا جناح عليكم فيما فعلن الخ"-

(जब तुम औरतों को तलाक़ दे दो तो उनको इद्दत के बाद भावनात्मक तौर पर और क़ैद करके निकाह से न रोको)''

इसी तरह दोनों रिवायतों के टकराव के बारे में लिखते हैं:

"أما الحديث المذكور وما بمعناه من الأحاديث فمعارضة بقوله ﷺ: الأيم أحق بنفسها من وليها، رواه مسلم وأبوداؤد والترمذى والنسائى ومالک في المؤطا، والأيم لازوج لها بكرا كانت أو ثيبا، وجه الاستدلال أنه أثبت لكل منها ومن الولي حقا في ضمن قوله "أحق"، ومعلوم أنه ليس للولى سوى مباشرة العقد إذا رضيت، وقد جعلها أحق منه به، فبعد هذا إما أن يجرى بين هذا الحديث وما رواه الحاكم المعارضة والترجيح، أو طريقة الجمع

1. फ़त्हुल क़दीर 3/250

فعلى الأول يترجح هذا بقوة السند وعدم الاختلاف فى صحته بخلاف الحديثين ؐ فإنهما ضعيفان فحديث "لانكاح إلا بولى" مضطرب في أسناده في وصله وانقطاعه وإرساله ؐ قال الترمذى: هذا حديث فيه اختلاف" (1)-

उपर्युक्त हदीस और उनके समान अर्थ वाली रिवायतों, रसूलुल्लाह (सल्ल0) के इस इर्शाद से: **الأيّم أحق بنفسها من وليها** : टकराती हैं। दलील का कारण यह है कि शब्द ''अहक़्क'' के अन्तर्गत अभिभावक के लिए भी हक़ साबित किया गया है। और ''अय्यामी'' के लिए भी। हालांकि यह बात स्पष्ट है कि अभिभावक के लिए सिर्फ़ यह हक़ है कि जब वह (आक़िला) किसी निकाह पर राज़ी हो तो वह उनका निकाह कर दें। अर्थात उसने रज़ामंदी के बाद अभिभावक को निकाह का हक़ सौंपा है। इस व्याख्या के बाद या तो उस हदीस और वे रिवायत जिसे हाकिम ने की है, के बीच टकराव और वरीयता को बाक़ी रखा जाये, या फिर दोनों में समन्वय का रास्ता तलाश किया जाये, अत: पहली स्थिति में प्रमाण की ताक़त और उसके सही होने में अन्तर न होने की बुनियाद पर उसको वरीयता दी जायेगी। इसके विपरीत अभिभावकों की शर्त वाली दोनों हदीसों के, क्योंकि वह दोनों कमज़ोर हैं। हदीस ''अभिभावक के बिना निकाह नहीं'' की सनद में, इन्क़िताअ और इरसाल के सिलसिले में सन्देह पाया जाता है। तिर्मिज़ी कहते हैं कि इस हदीस में मतभेद है।''

निचोड़:

उपर्युक्त तमाम विवरणों और क़ुरआन व हदीस और विश्लेषण से यह बात स्पष्ट होती है कि समझदार बालिग़ लड़की पर अभिभावकों को दबाव का

1. फ़त्हुल क़दीर 3/250

अधिकार हासिल नहीं है। बल्कि अभिभावकत्व पसन्दीदा है। जिन रिवायतों में अभिभावकों की इजाज़त के बग़ैर निकाह को बातिल क़रार दिया गया है, या इजाज़त की बात कही गई है वह पसन्दीदा के तौर पर है, न कि अनिवार्यता के। अतः कोई व्यक्ति अगर लड़की की शादी ज़बरदस्ती कुफ़ू या ग़ैर-कुफ़ू में अपनी पसंद से कर देता है और लड़की उसे नापसंद करती है तो लड़की को क़ाज़ी की अदालत में अपना निकाह निरस्त कराने का अधिकार होगा। या निकाह के समय ऐसा माहौल पैदा कर दिया गया कि शर्म व हया और हालात के दबाव की बुनियाद पर कुछ बोल न सकी या 'हाँ' कह दिया और निकाह हो गया तो निकाह तो लागू हो जाएगा, हां उसे क़ाज़ी की अदालत में निरस्त कराने का अधिकार होगा। इस तरह का माहौल बनाकर ज़बरदस्ती शादी करने का अभिभावक को शरीअत के अनुसार कोई हक़ हासिल नहीं, अभिभावक चाहे बाप ही क्यों न हो।

हां लड़की को चाहिए कि अपनी पसंद की बात अपने मां बाप और अभिभावकों को बताये और अगर कोई रिश्ता पसंद हो तो अभिभावकों को अपना मामला नैतिक रूप से सपुर्द करे ताकि लोग समाज में उसे गिरी नज़रों से न देखें। फ़ुक़्हा ने भी इसकी तरफ़ इशारा किया है। अतः दुर्रे-मुख़्तार में है:

"يستحب للمرأة تفويض أمرها إلى وليها كي لاتنسب إلى الوقاحة"۔

''औरत के लिए बेहतर बात यह है कि वह अपना मामला अपने वली के सुपुर्द कर दे ताकि लोग उसे बेहयाई की तरफ़ मन्सूब न करें।''

☆☆☆

जबरी शादी

मौलाना अब्दुल अहद तारापुरी
दारुल-उलूम, गुजरात

1. समझदार बालिग़ लड़की निकाह में स्वतन्त्र है। उसे कोई भी निकाह पर मजबूर नहीं कर सकता और उसकी इजाज़त के बग़ैर किसी ने उसकी तरफ़ से निकाह कुबूल कर लिया तो निकाह सही नहीं है। अर्थात यह कि समझदार बालिग़ लड़की जब तक ख़ुद कुबूल न करे या किसी को अपना वकील न बनाए उस समय तक उसका निकाह सही नहीं है। उसकी रज़ा के बग़ैर उसके मां-बाप की इजाज़त का कोई भरोसा नहीं है।

"**الأيم أحق بنفسها من وليها**" (1)-

''शौहर-दीदा औरत अपने अभिभावक के मुकाबले में अपने आप की ज़्यादा हक़दार है।''

हदीस: "**ثلاث جدهن جد وهزلهن جد**" (तीन मामलों में संजीदगी भी संजीदगी है और मज़ाक़ करना भी संजीदगी है) को देखते हुए अगर लड़की ने मार-पीट के डर से या मनोवैज्ञानिक दबाव में आकर या पासपोर्ट नष्ट करने की धमकी से बचने के लिए रज़ामंदी ज़ाहिर कर दी, जबकि दिल से उस निकाह पर राज़ी नहीं है तो उसका निकाह हो जाना चाहिए।

1. मुस्लिम, अबु दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, मौवत्ता

2.क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल उस निकाह को निरस्त कर सकते हैं। उसकी दलील एक हदीस शरीफ़ है:

"عن خنساء بنت خذام أن أباها زوجها وهي ثيب فكرهت ذلک فأتت رسول الله ﷺ فرد نكاحها"۔

''हज़रत ख़न्सा बिन्ते ख़ुज़ाम अन्सारिय: से रिवायत है कि उनके पिता ने उनका निकाह कर दिया और वह शौहर दीदा थीं। तो उन्होंने उस निकाह को नापसंद किया। अत: वह रसूले अकरम (सल्ल0) के पास आईं तो आप (सल्ल0) ने उनका निकाह निरस्त कर दिया।'' इब्ने माजा की रिवायत में है: "**نكاح أبيها**" ''आप (सल्ल0) ने उनके पिता के किए हुए निकाह को निरस्त कर दिया)।''

आदरणीय फ़क़ीहों ने बराबरी का भरोसा चार चीज़ों में किया है: 1. नसब,(नस्ल) 2. दीन, 3. माल, 4. पेशा। इसलिए ब्रिटेन के माहौल में रहने वाली लड़की और हिन्दुस्तान में परवरिश पाने वाले लड़के के बीच जो सामाजिक अन्तर है, उसका भरोसा नहीं किया जाएगा। इस बुनियाद पर अगर लड़की यह दावा करे कि मेरा निकाह कुफ़ू में नहीं हुआ और इस बिना पर मुझे अलगाव का अधिकार हासिल है तो उसे इस तरह का दावा करने का हक़ नहीं होगा।

☆☆☆

जबरी शादी

मुफ्ती मु0 अब्दुर्रहीम क़ासमी
जामिया ख़ैरुलउलूम, नूर महल रोड, भोपाल

1. ऐसा निकाह जायज़ नहीं है।(1)

2. अभिभावक अगर धोखा देकर निकाह कर दे तो सच्चाई की ख़बर होने पर समझदार बालिग़ उस निकाह को निरस्त कर सकती है।(2)

निकाह के सिलसिले में समझदार बालिग़ की रज़ामंदी के बारे में अभिभावक का कथन मान्य नहीं है:

"ولايقبل عليها قول وليها بالرضاء، لأنه يقر عليها يثبوت الملك للزوج، وإقراره عليها بالنكاح بعد بلوغها غير صحيح" (٣)-

''उसके विरुद्ध उसकी रज़ामंदी के बारे में उसके अभिभावक का कथन मान्य नहीं है, क्योंकि वह उसके विरुद्ध पति के लिए मिल्कियत के प्रमाण का इक़रार कर रहा है और उसके बालिग़ होने के बाद उसके विरुद्ध उसका इक़रार सही नहीं है।''

3. पति पत्नि के बीच बराबरी साबित न होने की वजह से बालिग़ लड़की को अलगाव कराने का हक़ हासिल रहेगा:

1. फ़तावा आलमगीरी 1/288
2. फ़तावा आलमगीरी 1/288
3. फ़तावा आलमगीरी 1/289

"لو شرطت الكفاء ة بقي حقها (شامی) تعتبر الكفاء ة للزوم النكاح أي على ظاهر الرواية ولصحته على رواية الحسن المختارة للفتوى" (1)-

''अगर बराबरी की शर्त लगाई गई तो औरत का हक़ बाक़ी रहेगा। (शामी) किफ़ाअत का भरोसा होगा, निकाह लागू होने के लिए रिवायत के सामान्य अर्थ के अनुसार और निकाह सही होने के लिए हसन की रिवायत के मुताबिक़ जो फ़तवा के लिए अधिकृत है।''

बालिग़ लड़की को अलगाव का हक़ हासिल रहेगा।

4. शारीरिक सम्बन्ध लड़की को मजबूर करके क़ायम किए हैं तो निकाह को निरस्त करने का बालिग़ लड़की का कथन मान्य होगा। (2)

5. क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को समझदार बालिग़ का कथन शपथ के साथ मान्य मान कर निकाह निरस्त करने का अधिकार है।

☆☆☆

1. शामी 2/318

2. शामी 2/302

दबाव के निकाह की शरओ़ी हैसियत

मौलाना मु. अबू-बक्र क़ासमी
शकरपुर भरवारा, दरभंगा

1–दबाव की स्थिति में निकाह की अनुमति का शरओ़ी आदेश:

इस स्थिति में उसका निकाह शरीअत के अनुसार लागू हो जायेगा।

"**وإن أكره على النكاح جاز العقد**" (١)۔

''अगर निकाह पर मजबूर किया गया तो निकाह लागू माना जायेगा।''

इसी तरह 'फ़तावा हिन्दिया' में है:

"**وإذا أكرهت المرأة على النكاح ففعلت فإنه يجوز العقد ولاضمان على المكره**" (٢)۔

''जब किसी औरत को निकाह पर मजबूर किया गया और उसने निकाह कर लिया तो निकाह हो गया और मजबूर करने वाले पर किसी भी हाल में तावान नहीं है।''

कौन नहीं जानता कि इस्लाम धर्म कु़बूल करने के लिए ज़बरदस्ती जायज़ नहीं है। जैसा कि इर्शादे ख़ुदावंदी है:

"**لا إكراه في الدين**" (٣)۔

---

1. अल जौहरतुन्नयर, अल जुजउस्सानी मिनल मुजल्लदुस्सानी पृ0 130
2. फ़तावा आलमगीरी 1/294
3. सूर: बकर: 256

दीन में ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं:

इसके बावजूद दबाव की स्थिति में इस्लाम को भी फ़क़ीह हज़रात ने भरोसे योग्य माना है।(1)

दबाव की स्थिति में इस्लाम क़ुबूल करने ही की तरह दबाव की स्थिति में निकाह की अनुमति को समझना चाहिए। नबी (सल्ल0) की एक हदीस में साफ़ स्पष्टीकरण मौजूद है:

"ثلاث جدهن جد وهزلهن جد: النكاح والطلاق والرجعة" (٢)-

''तीन चीज़ें पक्के इरादे के साथ हों या मज़ाक़ के साथ हों उन्हें इरादे के साथ ही माना जायेगा--निकाह, तलाक़ और रजअत।''

इस पवित्र हदीस से साफ़ मालूम होता है कि निकाह व तलाक़ और रजअत (तलाक़ के बाद वापस लौटाना) के मामले को इस्लाम धर्म ने हर हाल में यहाँ तक कि दबाव की हालत में भी भरोसे योग्य माना है। क्योंकि निकाह ईजाब व क़बूल से लागू होता है जिसको ज़ुबान से अदा किया जाता है। इसलिए मौखिक अनुमति के कारण दबाव का निकाह भी शरीअत के अनुसार तस्लीम किया जाएगा। (3)

2. दबाव की स्थिति में निकाह की मौखिक व लिखित अनुमति का आदेश:

अगर मौखिक अनुमति के बजाय ज़बरदस्ती उससे काग़ज़ पर लिखवा कर दस्तख़त करवा लिए गए और दबाव की स्थिति में ही लिखित अनुमति

1. अलजवाहिरतुन्नीरा, किताबुल इकराह 3/130

2. अबू दाऊद 1/298 इब्ने माजा 1/148, मिश्कात 2/285, तिर्मिज़ी 1/142, शरह मआनियुल आसार 2/57

3. अल मौसूअतुल फ़िक़्हिया 22/234

हासिल की गई मगर जुबान से उसने कुछ नहीं कहा तो शरीअत के अनुसार दबाव की उस तहरीर को वास्तविक अनुमति नहीं माना जायेगा और उस हालत में किया हुआ निकाह शरीअत के अनुसार मान्य न होगा। (1)

3. औरत के अभिभावक के ग़ैर-कुफू मर्द से दबाव डालकर शादी कर देने के दावा की बुनियाद पर निकाह निरस्त कराने की शरअ़ी हैसियत:

अगर ब्रिटेन के माहौल में रहने वाली लड़की की हिन्दुस्तान में परवरिश पाने वाले लड़के से दबाव डाल कर शादी कर दी जाये फिर शादी के बाद दोनों देशों के रहन सहन, तौर व तरीक़े, परिवारिक जीवन व स्वभाव और भाषा के अन्तर के कारण लड़की पति को अपने लिए बेजोड़ पाकर क़ाज़ी की अदालत में या शरअ़ी पंचायत में निकाह निरस्त करने की मांग करे तो शरीअत के अनुसार औरत की यह मांग सही नहीं है। क्योंकि फक़ीहों ने उपर्युक्त मामलों में किफ़ाअत का भरोसा नहीं किया है। हां अगर वास्तव में पति ग़ैर-कुफू हो। मिसाल के तौर पर गुनहगार हो, फ़क़ीर हो, बिल्कुल ही नीच पेशा वाला हो, या नस्ली तौर से बेजोड़ हो तो औरत को निकाह निरस्त कराने की मांग का हक़ होगा। क़ाज़ी इन परिस्थतियों में निकाह निरस्त कर देगा। अत: 'फ़तावा -ए-आलमगिरी' में है:

"وأما إذا أكرهت على أن تزوج نفسها من غير الكفوء أو بأقل من مهر المثل ثم زال الإكراه فلها الخيار، كذا في المحيط" (٢)۔

''जब किसी औरत को ग़ैर-कुफू मर्द या मेहर मिस्ल से कम पर

1. रद्दुल मुहतार 2/157, फ़तावा ख़ानिया अला हामिश अल हिन्दिया 1/472, क़वाइदुल फ़िक़्ह, क़ाइदा:255 पृ0 107

2. फ़तावा हिन्दिया 1/397

निकाह करने पर मजबूर किया गया तो दबाव समाप्त होने के बाद औरत को निकाह निरस्त कराने का अधिकार होगा।''

4. दबाव की हालत में बेजोड़ पति से शादी होने की स्थिति में औरत को अलगाव का अधिकार हासिल होने में विस्तृत विवरण:

अगर ज़बरदस्ती शादी होने के बाद औरत ने खुद को पति के हवाले कर दिया, या पति से उसने मेह्र की रक़म की मांग कर दी तो शरीअत के अनुसार रज़ामंदी है और उस रज़ामंदी के बाद औरत को निर्धारित मेहर मिलेगा और उसे शरीअत के अनुसार निकाह निरस्त कराने की मांग करने का हक़ हासिल न होगा। अत: 'अस्सिराजुल-वह्हाज' के हवाला से 'फ़तावा आलमगीरी' में है:

"إذا مكنت الزوج بعد ما زوجها الولى فهو رضا وكذا لوطالبت بصداقها بعد العلم فهو رضا" (1)-

''जब औरत ने अभिभावक के शादी करा देने के बाद अपने ऊपर पति को अधिकार दे दिया, इसी तरह निकाह के मालूम होने के बाद औरत ने पति से मेह्र की मांग कर दी तो यह शरीअत के अनुसार रज़ामंदी है।''

हाँ! अगर औरत ने ख़ुशी के साथ पति को अपने ऊपर अधिकार न दिया हो बल्कि पति ने ज़बरदस्ती उससे शारीरिक सम्बन्ध बना लिया हो तो औरत के लिए निकाह निरस्त करने की मांग का हक़ बाक़ी रहेगा। (2)

इसी तरह दम्पति में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न हुए हों तब भी औरत को पति के ग़ैर-कुफ़ू होने की सूरत में निकाह निरस्त करने की मांग का हक़ हासिल होगा और शारीरिक सम्बन्ध से पहले निकाह निरस्त होने की

1. फ़तावा हिन्दिया 1/287

2. फ़तावा हिन्दीया 1/287

सूरत में औरत को मेह्र की रक़म में से कुछ नहीं मिलेगा। (1)

अगर औरत के अभिभावक ने किसी औरत का निकाह समान मेह्र पर कुफ़ू मर्द से ज़बरदस्ती कर दिया हो तो ऐसी सूरत में औरत को हरगिज़-हरगिज़ निकाह की मांग का हक़ हासिल न होगा:

"وإذا أكرهت المرأة على أن تزوج نفسها عن كفء بمهر المثل ثم زال الإكراه فلا خيار لها" (٢)-

''जब औरत को समान मेह्र पर कुफ़ू से शादी करने पर मजबूर किया गया तो दबाव समाप्त होने के बाद औरत को निरस्त करने का अधिकार हासिल न होगा।

5. दबाव की स्थिति में लागू होने वाली शादी का अगर क़ाज़ी को पता हो जाये तो वह क्या करे ?

सिर्फ़ दबाव की बुनियाद पर क़ाज़ी निकाह को निरस्त नहीं कर सकता। हाँ! अगर अभिभावक ने ग़ैर-कुफ़ू मर्द से और समान मेह्र से कम पर दबाव की स्थिति में बेजोड़ निकाह कर दिया हो और निकाह के बाद रज़ामन्दी के साथ पति पत्नी के सम्बन्ध स्थापित न हुए हों या सम्बन्ध स्थापित हो गये हों मगर औरत ने खुशी से पति को अपने ऊपर अधिकार न दिया हो। बल्कि मर्द ने ज़बरदस्ती सम्बन्ध स्थापित किया हो तो उन स्थितियों में क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल औरत के निकाह निरस्त करने की मांग के बाद निकाह को निरस्त कर सकता है, वरना नहीं और औरत को निकाह निरस्त करने की मांग का हक़ बच्चा की पैदाइश से पहले तक रहेगा। (3)

---

1. फ़तावा हिन्दीया 1/287

2. फ़तावा हिन्दीया 1/287

3. अल मौसूअतुल फ़िक़्हिया 34/283

ज़बरदस्ती की शादी

मौलाना मु0 इक़बाल क़ासमी
मदरसा इस्लामिया, शकरपुर भरवारा, दरभंगा

समझदार बालिग़ लड़की का निकाहः

शरीअत में समझदार और बालिग़ होने पर बुनियादी और साधारण आदेश का मदार है, जब तक ये दोनों चीज़ें इन्सान में मौजूद न हों वह शरअ़ी आदेशों का ज़िम्मेदार नहीं होता। इसीलिए बच्चा और पागल ग़ैर ज़िम्मेदार हैं। जब आदमी समझदार, बालिग़ हो जाये तो वह शरअ़ी आदेशों का ज़िम्मेदार हो जाता है, मर्द हो या औरत और बंदा मजबूर महज़ नहीं है, इसलिए शरअ़ी आदेशों पर अमल करने की सूरत में सवाब का और अमल न करने की स्थिति में पाप का अधिकारी होता है और जब मात्र मजबूर नहीं है तो उसको किसी काम पर मजबूर करना और उस पर दबाव डालना या मार-पीट करना शरीअत के स्वभाव के ख़िलाफ़ है, अल्लाह तआला का इरशाद है:

"إنا هديناه السبيل إما شاكرا و إما كفورا" (۱)-

''हमने इन्सान को रास्ता बता दिया। अब उसको अधिकार है कि वह शुक्रगुज़ार बने या नाशुक्रा।''

1. सूरः हूदः 3

लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि वह बिल्कुल आज़ाद है। वह जो चाहे करे और जैसी चाहे ज़िन्दगी गुज़ारे बल्कि उसको एक क़ानून दिया गया है। उसी क़ानून में शादी और निकाह है। शादी और निकाह के जो उसूल व नियम है उनका मक़सद यह है कि पति भर में सम्बन्ध सद्भाव और स्नेह और प्यार के साथ जीवन पर्यन्त बरक़रार रहे। इसी मक़सद को ध्यान में रखते हुए जहां औरत को जब वह समझदार बालिग़ हो जाये अपनी इच्छा और पसन्द और चाहत से निकाह करने की इजाज़त दी है। उसके पसंदीदा पति से निकाह को शरीअत ने लागू माना है:

"وينعقد نكاح الحرة العاقلة البالغة برضائها وإن لم يعقد عليها ولي" (١)-

''आज़ाद, समझदार बालिग़ लड़की का निकाह उसकी रज़ामंदी से लागू हो जाता है। यद्यपि अभिभावक ने निकाह न कराया हो।''

और अभिभावकों पर पाबंदी लगा दी है कि वह उसको निकाह पर मजबूर न करें:

"ولايجوز للولي إجبار البكر البالغة على النكاح" (٢)-

''बालिग़, कुवांरी लड़की को निकाह पर मजबूर करना अभिभावक के लिए जायज़ नहीं है।'' वहीं औरत पर यह पाबंदी भी लगा दी है कि वह अपनी शादी ग़ैर-कुफ़ू में न करें। अगर कर लेती है तो हसन बिन ज़ियाद के कथन के अनुसार निकाह सही नहीं होगा। अधिकतर उलमा के कथनानुसार निकाह अनिवार्य नहीं होगा। अभिभावकों को अधिकार है कि वह शरीअत के क़ाज़ी से निकाह को खत्म करवा ले:

1. अल हिदाया 2/313

2. अल हिदाया 2/314

''बराबरी न होने के समय अभिभावक के लिए निकाह निरस्त कराना जायज़ है, और यह आधारित है रिवायत के साधारण अर्थ पर कि निकाह सही है और अभिभावक को आपत्ति का अधिकार हासिल है और हज़रत हसन रह0 की रिवायत के अनुसार निकाह सही नहीं है। यही कथन फ़तवा के लिए पसंदीदा है''(1)

औरत चूंकि नाक़िसुल-अक़्ल होती है वह निकाह के उतार चढ़ाव और उसके हितों से जानकार नहीं होती है। इसलिए औरत के लिए समझदार बालिग़ होने के बावजूद पसंदीदा यही क़रार दिया गया है कि वह खुद से अपना निकाह न करे बल्कि निकाह के मामले को अभिभावक के सुपुर्द कर दे:

"يستحب للمرأة تفويض أمرها إلى وليها كيلا تنسب إلى الوقاحة" (٢).

''औरत के लिए पसंदीदा यह है कि वह अपने मामले को अपने अभिभावक के सुपुर्द कर दे ताकि उसकी तरफ़ बेहयाई सम्बन्धित न हो।''

जब शरीअत ने औरत के समझदार, बालिग़ होने की हालत में उसके किए हुये निकाह को जायज़ और सही माना है और उसे खुद अपना निकाह करने का अधिकार दिया है लेकिन इसी के साथ उसके लिए पसन्दीदा यही क़रार दिया है कि वह निकाह खुद से न करे बल्कि अभिभावक से कराये। तो अब अभिभावक का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह लड़की का निकाह उसके अनुरूप लड़के से कराये। किसी ऐसे लड़के का चुनाव न करे जो लड़की के मेल और जोड़ का न हो। जब लड़की का निकाह उसके अनुरूप लड़के से

1. रद्दुल मुहतार 2/344

2. रद्दुल मुहतार 2/321

होगा तो ऐसी स्थिति में लड़की और अभिभावक दोनों की रज़ामंदी पाई जायेगी और निकाह अनिवार्य होगा। यह मुनासिब नहीं है कि बेजोड़ लड़के से उसको निकाह पर अकारण मजबूर करे और लड़की को डरा धमका कर या मार-पीट करके या मनोवैज्ञानिक दबाव डाल करके निकाह करा दे। हालांकि वह लड़की उससे निकाह करने के लिए बिल्कुल आमादा न हो। क्योंकि अभिभावक के अभिभावकत्व का उद्देश्य यह है कि सही जगह निकाह हो अन्यथा इस तरह बेजोड़ शादी तो वह स्वयं भी कर सकती थी। लेकिन अगर अभिभावक उसका रिश्ता उसके मेल और कुफ़ू में कराये या ग़ैर-कुफ़ू में कराये और लड़की जुबान से 'हाँ' न कहे तो उस स्थिति में निकाह ही सही न होगा। रद्दुलमुहतार में अल्लामा शामी तहरीर फ़रमाते हैं:

"ليس للولي إلا مباشرة العقد إذا رضيت" (١)۔

''अभिभावक को हक़ नहीं है मगर निकाह को अंजाम देना जबकि लड़की राज़ी हो।''

अभिभावक ने लड़की को डरा धमका कर या मार-पीट करके या मनोवैज्ञानिक दबाव में लाकर या ग़ैर-मुल्की लड़की को पासपोर्ट नष्ट कर देने की सख़्त धमकी देकर उससे निकाह के लिए 'हां' कहलवा ली जबकि दिल से वह उस पर राज़ी नहीं है, और उसका निकाह करा दिया तो यह निकाह शरीअत के अनुसार सही है:

"وإذا أكرهت المرأة على النكاح ففعلت فإنه يجوز العقد" (٢)۔

''जब औरत को निकाह पर मजबूर किया गया और उसने कर लिया

1. रद्दुल मुहतार 2/322

2. अल फ़तावा अल-हिन्दीया 1/294

तो इसमें सन्देह नहीं कि निकाह सही है।''

यह स्थिति रज़ामंदी में शामिल नहीं होगी। क्योंकि लड़की उस निकाह से राज़ी नहीं है। उसने तो अभिभावक के दबाव में आकर निकाह की इजाज़त दी है। रज़ामंदी के लिए तो ज़रूरी है कि वह खुश होकर क़ुबूल करे। दबाव में आकर नहीं। अत: मुफ़्ती अमीमुलएहसान साहब मुजद्दिदी ''अत्तारीफ़ातुल फ़िक़्हिया'' में रज़ा की तारीफ़ इन शब्दों में करते हैं:

"**الرضاء الاختيار والقبول ..... وهو اسم من رضى ضد سخط**" (۱)-

''रज़ा' का अर्थ पसंद करना और क़ुबूल करना....और यह 'रज़ी' की संज्ञा है जो नाराज़गी का विलोम है।''

हाँ! यह ज़बरदस्ती है, क्योंकि इसको धमकी देकर 'हां' कहने पर मजबूर किया जा रहा है। इकराह का भाव भी यही है कि किसी व्यक्ति को बिना उसकी रज़ामंदी के धमकी देकर किसी काम पर मजबूर किया जाये।

"**الإكراه هو إجبار أحد على أن يعمل عملا بغير حق من دون رضاه بالإخافة**" (۲)-

''इकराह किसी व्यक्ति को अकारण बग़ैर उसकी रज़ा के, डरा कर किसी काम के करने पर मजबूर करना है।'' जब उस पर इकराह की परिभाषा सच आती है तो फिर 'रज़ा' की परिभाषा सच नहीं आ सकती, क्योंकि दोनों एक दूसरे का विलोम हैं। जैसा कि शब्द 'दून रिज़ाही' दलालत कर रहा है।

रज़ामंदी और अनुमति की हक़ीक़त और लड़की से ज़बरदस्ती दस्तख़त कराना:

आदरणीय फक़ीहों ने समझदार बालिग़ लड़की के निकाह की वैधता

1. अत्तारीफातुल फ़िक़्हीया पृ0 308

2. अत्तारीफ़ातुल फ़िक़्हीया पृ0 188

के लिए अनुमति को अनिवार्य क़रार दिया है। रज़ा और खुशी को नहीं। 'फ़तावा हिन्दिया' में है:

"لـايـجوز نكاح أحد على بالغة صحيحة العقل من أب أو سلطان بغير إذنها بكراً كانت أو ثيباً فإن فعل ذلک فالنكاح موقوف على إجازتها" (۱)-

''किसी व्यक्ति का निकाह समझदार बालिग़ पर बग़ैर उसकी अनुमति के लागू नहीं होगा, चाहे बाप हो या बादशाह, लड़की कुँवारी हो या ब्याही, तो अगर ऐसा किया तो लड़की की अनुमति पर आधारित होगा।'' अनुमति की हक़ीक़त किसी चीज़ को लागू क़रार देने की सूचना और छूट देना है, 'अलमुअ़जमुलवसीत' में है:

"الإذن الإعلام بإجازة الشئ والرصخة فيه" (۲)-

'इज़्न' किसी चीज़ को जायज़ क़रार देने से बाख़बर करना और इजाज़त देना है।''

और 'रज़ा' की हक़ीक़त है किसी चीज़ को पसंद करना, दिल से क़ुबूल करना और उसका विलोम 'नाराज़गी' आता है। (3)

इन दोनों के बीच सामान्य व विशेष का सम्बन्ध है। कभी सिर्फ़ 'इज़्न' (अनुमति) पाया जाएगा, रज़ा नहीं। जैसे ज़ुबान से किसी व्यक्ति को अपना कोई सामान लेने की इजाज़त देना और दिल से उस पर नापसंदीदगी प्रकट करना। और कभी रज़ामंदी पाई जाएगी, 'इज़्न' नहीं। जैसे दिल से किसी व्यक्ति को कोई सामान देने के लिए तैयार और आमादा रहना। लेकिन न खुलकर इजाज़त देना और न परोक्ष रूप से और कभी दोनों पाये जायेंगे --

1. अल-हिन्दिया 1/287

2. मोअजमुल वसीत 1/12

3. अत्तारीफ़ातुल फ़िक़्हीय पृ0 308

जैसे बख़ुशी इजाज़त देना। फिर 'इज़्न' की दो क़िस्में हैं: एक स्पष्ट इजाज़त देना और दूसरे परोक्ष इजाज़त देना। जैसे कुँवारी लड़की की ख़ामोशी अनुमति लेते समय 'परोक्ष इज़्न' है।

"وإن استأذن الولي البكر البالغة فسكتت فذلک إذن منها" (۱)۔

''अगर अभिभावक ने कुँवारी बालिग़ लड़की से इजाज़त ली और वह चुप रही तो यह उसकी तरफ़ से इजाज़त है।'' जिस समस्या पर बात चल रही है उस में जब लड़की ने 'हाँ' कह दिया तो कैसे उसका अर्थ यह लिया जाए कि उसने इजाज़त नहीं दी है। उसने इजाज़त दी है और वह भी ज़ुबान से दी है यद्यपि दलील के रूप में लड़की की तरफ़ से इजाज़त नहीं है और उसूली फ़क़ीहों के विचार में स्पष्ट के मुक़ाबले में परोक्ष का कोई भरोसा नहीं। 'क़वाइदुल-फ़िक़्ह' में है:

"لاعبرة بالدلالة في مقابلة الصريح" (۲)۔

''स्पष्ट के मुक़ाबले में परोक्ष का कोई भरोसा नहीं।''

दूसरी जगह है:

"يسقط اعتبار دلالة الحال إذا جاء التصريح بخلافها" (۳)۔

''परिस्थिति के हिसाब से परोक्ष अनुमति समाप्त हो जायेगी यदि इसके विपरीत स्पष्ट अनुमति मिल जाये''

अत: ज़बरदस्ती 'हाँ' कहलवा लेना स्पष्ट अनुमति है और दस्तख़त करा लेना न स्पष्ट अनुमति है न परोक्ष इसलिए पहली स्थिति में निकाह लागू हो जाएगा, दूसरी स्थिति में नहीं।

1. अल हिन्दिया 1/287

2. क़वाइदुल फ़िक़्ह (क़ायदा 255) मुफ़्ती अमीमुल एहसान साहब 107

3. क़वाइदुल फ़िक़्ह (कायदा 408) 141

लड़की की तरफ़ से बराबरी न होने का दावा:

ब्रिटेन के माहौल में रहने वाली लड़की और हिन्दुस्तान में परवरिश पाने वाले लड़के के बीच यद्यपि सामाजिक अन्तर है लेकिन उसका यह अर्थ नहीं है कि दोनों एक दूसरे के कुफ़ू नहीं हो सकते। कुफ़ू के लिए शरीअत ने जिन चीज़ों में बराबरी को भरोसे योग्य माना है, वह स्वतन्त्र होना, इस्लाम, नस्ल, दयानत व परहेज़गारी, मालदारी और पेशा व व्यवसाय हैं। 'फ़तावा हिन्दिया' में है:

"الكفاءة تعتبر في أشياء، منها النسب ومنها الإسلام ومنها الحرية ومنها الكفاءة في المال ومنها الديانة ومنها الحرفة" (1)-

"किफ़ाअत कुछ चीज़ों में भरोसे योग्य है -- नसब(नस्ल) में, इस्लाम में, आज़ादी में, माल में, दयानत में, पेशा में।"

कुछ फ़ुक़्हा ने अक़्ल, ख़ानदान और कमियों से पाक होने को, भी बराबरी के मामलों में गिना है। लेकिन मौलिक आयतों और हदीसों को ही मानने वालों ने उन सबको भरोसा योग्य नहीं माना है और मात्र उपर्युक्त ही को बयान किया है।(2)

अब अगर मां-बाप या अन्य अभिभावकों ने लड़की का निकाह ऐसे लड़के से कराया है जिसमें किफ़ाअत के उपर्युक्त मामले मौजूद हैं और लड़का, लड़की के जोड़ और मेल का है तो ऐसी स्थिति में लड़की को यह दावा करने का हक़ नहीं है कि जिस व्यक्ति से मेरी शादी की जा रही है वह मेरा कुफ़ू नहीं है। 'फ़तावा हिन्दिया' में है:

1. अल हिन्दिया 1/290,291, कन्जुद्दक़ाइक़ अला हामिश, अलबहरुर्राइक़ 3/139

2. अल बहरुर्राइक़ 3/143

"وإذا أكرهت المرأة على أن تزوج نفسها من كفء بمهر المثل ثم زال الإكراه فلا خيار لها" (۱)۔

''जब औरत को इस पर मजबूर किया जाये कि वह अपनी शादी कुफू से मेह्रे मिस्ल में कर ले फिर दबाव समाप्त हो जाए तो औरत के लिए कोई अधिकार नहीं होगा।''

अगर लड़का, लड़की का कुफू नहीं है तो ऐसी स्थिति में लड़की बराबरी न होने का दावा करके निकाह निरस्त करा सकती है या नहीं? तो इसका जवाब निर्भर है इस बात पर कि बराबरी औरत का हक़ है, या अभिभावक का या दोनों का, तो फ़ुक़्हा के कथन इस सिलसिले में भिन्न है।' दुर्रे मुख़्तार के रचयिता लिखते हैं:

"والكفاء ة هى حق الولي لاحقها فلو نكحت رجلا ولم تعلم حاله فإذا هو عبد لاخيار لها بل للأولياء" (۲)۔

''बराबरी अभिभावक का हक़ है औरत का नहीं। अत: अगर औरत ने किसी व्यक्ति से निकाह किया और उसका हाल न जान सकी फिर अचानक मालूम हुआ कि वह ग़ुलाम है तो औरत को कोई अधिकार नहीं है बल्कि अभिभावकों को है।

इस कथन के अनुसार जब किफ़ाअत औरत का हक़ है ही नहीं तो फिर उसको अभिभावक के विरुद्ध कुफू न होने का दावा करने का हक़ भी नहीं होगा? और जब दावा का अधिकार नहीं तो अलगाव का अधिकार कहाँ से हासिल होगा? लेकिन अल्लामा इब्ने आबिदीन शामी की राय यह है कि

1. आलमगीरी 1/294

2. दुर्रे मुख़्तार अला हामिश रद्दुल मुहतार 2/344

किफ़ाअत औरत और अभिभावक दोनों का हक़ है। दलील यह है कि बाप और दादा के अलावा अगर कोई दूसरा अभिभावक नाबालिग़ लड़की का निकाह ग़ैर-कुफू से कर दे तो यह सही नहीं है।(1)

यही बात ज़्यादा सही मालूम होती है कि किफ़ाअत दोनों का हक़ है। इसलिए कि लड़के का ग़ैर-कुफू होना जिस तरह मां - बाप और ख़ानदान वालों के लिए शर्म व अपमान की बात है, उससे कहीं ज़्यादा लड़की के लिए अपमान का कारण है। इसीलिए शरीअत ने लड़की के लिए लड़के का कुफू होना भरोसे योग्य माना है, न कि लड़के के लिए लड़की का कुफू होना। जब कुफू औरत का भी हक़ है, तो ग़ैर-कुफू से शादी करने की स्थिति में लड़की को यह दावा करने का हक़ है, कि मेरी जिस व्यक्ति से शादी की गई है वह मेरा कुफू नहीं है, इसलिए किफ़ाअत के आधार पर मुझे अलग होने का अधिकार हासिल है। (2)

दबाव की शादी के बाद शारीरिक सम्बन्ध:

इस तरह दबाव की शादी के बाद अगर पति-पत्नी में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं और लड़की ने रज़ामंदी व चाहत से लड़के को अपने ऊपर अधिकार दे दिया है तो यह रज़ामंदी समझी जायेगी। इसलिए कि ख़ुशी से अपने ऊपर अधिकार देना निकाह को वैध क़रार देना है। इसी तरह अगर लड़की शादी के बाद लड़के से मेह्र की मांग करे तो वह भी रज़ामंदी है। आलमगीरी में है:

"وكذا إذا مكنت الزوج من نفسها بعد مازوجها الولي فهو رضا وكذا

1. रद्दुल मुहतार 2/344

2. अल फ़तावा हिन्दिया 1/294

لو طالبت بصداقها بعد العلم فهو رضا كذا في السراج الوهاج" (۱)۔

''इसी तरह जब वह पति को अपने ऊपर अधिकार दे दे, अभिभावक के शादी करा देने के बाद तो यह रज़ामंदी है। इसी तरह अगर वह शादी का पता होने के बाद, अपने मेह्र की मांग करे तो यह भी रज़ामंदी है।''

इस स्थिति में लड़की को अलगाव का अधिकार हासिल नहीं होगा यद्यपि लड़का ग़ैर-कुफ़ू हो।

"وإن دخل بها طائعة يلزمه المسمى ولايزاد عليه ويكون هذا رضا منها بالنكاح لأن تمكينها من نفسها إجازة للعقد كقولها: رضيت ويسقط الخياران الثابتان لها: التفريق لعدم الكفاءة وإتمام مهر المثل" (۲)۔

''अगर उसने औरत से रज़ामंदी के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित किया तो पति पर निर्धारित मेह्र अनिवार्य होगा। उस को बढ़ाया नहीं जायेगा। यह औरत की तरफ़ से निकाह पर रज़ामंदी होगी। इसलिए कि औरत का अपने ऊपर अधिकार देना निकाह को जायज़ क़रार देना है। जैसे यह कहना कि मैं राज़ी हूँ और वे दोनों अधिकार निरस्त हो जाएँगे, जो औरत के लिए साबित थे, बराबरी न होने के आधार पर अलगाव, और समान मेह्र की अदायगी।''

अगर लड़की ने ख़ुशी से शारीरिक सम्बन्ध की इजाज़त नहीं दी और उसने उससे ज़बरदस्ती शारीरिक सम्बन्ध बना लिया तो यह रज़ामंदी शुमार नहीं होगी और लड़की को अलगाव का अधिकार हासिल होगा।

"فإن دخل بها إن كانت مكرهة لزمه مهر المثل، وحق الاعتراض

1. अल फ़तावा हिन्दिया 1/287

2. अल फ़तावा हिन्दिया 1/294

لعدم الكفاء ة باقٍ" (۱)-

''अगर उसने उससे शारीरिक सम्बन्ध स्थापित किया तो अगर ज़बरदस्ती किया हो तो पति पर समान मेह्र अनिवार्य हो जाएगा और बराबरी न होने के आधार पर आपत्ति का अधिकार बाक़ी रहेगा।''

इसी तरह अगर दम्पति के बीच शारीरिक सम्बन्ध स्थापित नहीं हुए हैं तो औरत को बराबरी न होने या मेह्र के समान से कम होने के आधार पर अलगाव का अधिकार हासिल है वह चाहे तो क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को निकाह को निरस्त करने की प्रार्थना दे सकती है जैसा कि ऊपर आ चुका है।(2)

अगर क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल निकाह निरस्त कर दे तो पति पर न समान मेह्र अनिवार्य होगा और न निर्धारित मेह्र इसलिए कि अलगाव की मांग औरत की ओर से आई है और वह भी शारीरिक सम्बन्ध से पहले है।

"ولو فرق بينهما قبل الدخول لايلزمه شئ كذا في السراج الوهاج" (۳)-

''अगर दोनों में शारीरिक सम्बन्ध से पहले अलगाव हो गया तो पति पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा।

यह तमाम विवरण उस समय हैं जबकि पति लड़की का कुफ़ू न हो, अगर कुफ़ू है और मेह्र समान है या मेह्र पर उसको कोई आपत्ति नहीं है तो फिर लड़की को अलगाव का अधिकार हासिल नहीं है न शारीरिक सम्बन्ध से पहले, न शारीरिक सम्बन्ध के बाद। (4)

---

1. अल हिन्दिया 1/294
2. अल मुहीत, फ़तावा हिन्दिया के हवाले से 1/294
3. अल हिन्दिया 1/294
4. अल हिन्दिया 1/294

क़ाज़ी शरीअत या शरअ़ी कौंसिल का निकाह निरस्त करना:

क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल उस निकाह को मात्र दबाव की बुनियाद पर निरस्त नहीं कर सकते हैं। क्योंकि दबाव निरस्तीकरण के कारणों में से नहीं है। हाँ! लड़का, लड़की के मेल और जोड़ का न हो और दोनों के बीच शरीअत के अनुसार बराबरी न पाई जाती हो या मेह्र समान से कम हो, और दोनों में आपसी चाहत से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न हुए हों, तो ऐसी स्थिति में अगर लड़की निकाह निरस्त करने का दावा करती है तो फिर क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल दोनों पक्षों के बयान और गवाही के बाद दलीलों की बुनियाद पर निकाह को निरस्त कर सकते हैं। अगर दोनों में बराबरी पाई जाती हो और मेह्र पर लड़की को कोई आपत्ति न हो तो फिर दबाव के बावजूद उनको निकाह निरस्त करने का अधिकार नहीं है।

☆☆☆

दबाव की शादी

मुफ़्ती अब्दुर्रहीम
दारुलउलूम-मुस्तफ़वी, मुहल्ला
तौहीदगंज, बारामूला (कश्मीर)

1–समझदार बालिग़, आज़ाद औरत के अधिकार और सीमायें फ़क़ीहों की नज़र में:

बालिग़, समझदार और आज़ाद औरत का निकाह अभिभावक की इजाज़त के बग़ैर सही हो जाता है, चाहे वह कुँवारी हो या ग़ैर-कुँवारी (बेवा, तलाक़ शुदा आदि)। यह इमाम अबू-हनीफ़ा (रह0) और इमाम अबू-यूसुफ रह0 का प्रसिद्ध मत है। इमाम यूसुफ़ से एक रिवायत यह है कि ऐसी औरत का निकाह अभिभावक के बिना सही नहीं। इमाम मुहम्मद (रह0) के विचार में अभिभावक की इजाज़त पर आधारित है। (1)

यहाँ जो मत इमाम मुहम्मद (रह0) का बयान हुआ है। बाद में उन्होंने इस राय से पलट कर वही कथन अपना लिया था जो ऊपर इमाम यूसुफ व इमाम मुहम्मद का बयान हुआ है, जैसा कि खुद हिदाया के लेखक ने इसका स्पष्टीकरण किया है, और हिदाया में ही आगे चल कर (301/2) पर "وقد صح ذلک" 'उसे ठीक कर लिया' से उस पलटने का अतिरिक्त समर्थन होता है।

1. हिदाया 2/293,294

इमाम मालिक (रह0) और इमाम शाफ़ई (रह0) के विचार में अभिभावक की इजाज़त के बग़ैर औरत का निकाह ही सही नहीं। 'बिदायतुल-मुज्तहिद' के लेखक अल्लामा इब्ने रुश्दुलहफ़ीद मालिकी (रह0) ने ''बिदायतुल मुज्तहिद'' में इस विषय पर विस्तार से लिखा है दोनों पक्षों की दलीलें प्रस्तुत करने के बाद मालिकी होने के बावजूद उन्होंने हनफ़ी उलमा का खुल कर समर्थन किया है विरोधी पक्ष की प्रस्तुत की हुई तमाम आयतों व रिवायतों को उनके दावे के लिए अपर्याप्त क़रार दिया है।

पूरी बहस के बाद वह इस तरह टिप्पणी करते हैं:

जो बात दिल को ज़्यादा लगती है वह यह है कि विधाता ने (निकाह में) अभिभावकत्व की शर्त नहीं लगाई है, क्योंकि अगर नबी (सल्ल0) (समझदार बालिग़ के लिए) अभिभावकत्व की शर्त लगाते तो अनिवार्यत: अभिभावकों की क़िस्में और उनके स्तर बयान फ़रमाते, कारण यह है कि अभिभावकत्व की समस्या साधारणत: आई है, इस तरह अधिकता से पेश आने वाली महत्वपूर्ण समस्या में स्पष्टीकरण की आवश्यकता है, उनमें देरी समझ से बाहर है और यह बात हुज़ूर (सल्ल0) के नुबूवत के पद के विरुद्ध है। अत: यही मानना पड़ेगा कि वास्तव में अभिभावकत्व की शर्त लगाना विधाता का उद्देश्य ही नहीं है।

इसके बाद हिदाया के लेखक फ़रमाते हैं: ज़ाहिर रिवायत में है कि अभिभावक को इस स्थिति में आपत्ति का हक़ होगा जबकि बालिग़, समझदार औरत ग़ैर-कुफ़ू में निकाह कर ले और इमाम अबू-हनीफ़ा व अबू-यूसुफ़ रह0 के नज़दीक ग़ैर-कुफ़ू में निकाह जायज़ ही नहीं। इसलिए कि बहुत-से अभिभावक नापसंदीदगी के बावजूद ग़ैर-कुफ़ू में निकाह होने की स्थिति में

विभिन्न कारणों से क़ाज़ी शरीअत के पास आपत्ति व निरस्त करने का दावा पेश नहीं कर सकते। अगर पेश कर भी दें तो क़ाज़ी इन्साफ़ की मांगों को पूरा करे, इसकी कोई ज़मानत नहीं।

इसी कारण से अब फ़तवा यह है कि बेजोड़ निकाह लागू ही न होगा। अत: हनफ़ी फ़िक़्ह की प्रमाणित किताब ''मजमउल-अनहर'' में फ़तावा क़ाज़ी ख़ान (रह0) से यह फ़तवा नक़्ल किया गया है। ''आज़ाद और मुकल्लफ़ लड़की का निकाह लागू हो जाता है, और उसके लिए आपत्ति का अधिकार है अगर कुफ़ू में न हुआ और हसन ने इमाम से इसके जायज़ न होने की रिवायत की है और इसी पर फ़तवा है।–यही ज़्यादा सही और सावधानी पूर्ण है और हमारे ज़माने में फ़तवा के लिये लिया गया है।

"نفذ نكاح حرة مكلفة بلا ولي وله الاعتراض في غير الكفوء وروى الحسن عن الإمام عدم جوازه وعليه الفتوى""نفذ نكاح حرة مكلفة بلا ولي وله الاعتراض في غير الكفوء وروى الحسن عن الإمام عدم جوازه وعليه الفتوى"

फिर मुसन्निफ़ फ़रमाते हैं:

"وهذا أصح وأحوط والمختار للفتوى في زماننا" (1)-

2. समझदार बालिग़ आज़ाद लड़की का निकाह दबाव से करना नाजायज़ है:

ا – "ولايجوز للولي إجبار البكر البالغة على النكاح (إلى قوله) ولنا أنها حرة فلا يكون للغير عليه ولاية الاجبار والولاية على الصغيرة لقصور عقلها وقد

1. मजमउल-अनहर 1/332

كمل بالبلوغ بدليل توجه الخطاب" (١).

''कुँवारी बालिग़ लड़की के अभिभावक को शरीअत के अनुसार इसकी इजाज़त नहीं है कि वह उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ उसका निकाह करे, क्योंकि यह बालिग़ है, आज़ाद है, शरीअत के अनुसार ज़िम्मेदार है और बालिग़ हो जाने के कारण, सूझ बूझ की वह कमी जिसके कारण अभिभावकों को उस पर दबाव डालने का अधिकार और बालादस्ती हासिल थी, अब बाक़ी नहीं रही। जिसका प्रमाण यह है कि अब यह सीधे अल्लाह के आदेशों से सम्बोधित व ज़िम्मेदार बन चुकी है। अत: किसी को भी उस पर दबाव डालने का अधिकार नहीं है।''

(قوله وهو السنة) بان يقول له قبل النكاح فلان يخطبک أو بذکرک فسکتت وإن زوجها بغير استئمار فقد أخطأ السنة وتوقف على رضاها. بحر عن المحيط. واستحسن الرحمتي ماذکره الشافعية من أن السنة في الاستئذان أن يرسل إليها نسوة ثقات ينظرن ما في نفسها والأم بذلک أولىٰ لأنها تطلع على مالا يطلع عليه غيرها" (٢).

''सुन्नत यह है कि निकाह से पहले अभिभावक बालिग़ लड़की से नियमानुसार परामर्श करे और उससे इजाज़त ले। मिसाल के तौर पर अमुक व्यक्ति ने तुम्हारे लिए निकाह का पैग़ाम भेजा है या अमुक व्यक्ति तुमसे निकाह करना चाहता है आदि। तो अगर यह सुनकर बालिग़ ख़ामोश रहे तो यह निकाह सही है, लेकिन अभिभावक का बालिग़ लड़की से पूछे बग़ैर ही निकाह कर देना सुन्नत के बिल्कुल विरुद्ध है। ऐसा निकाह लागू न होगा।

1. अल-हिदाया: 2/294

2. शामी: 2/298,299 प्रकाशन नोमानिया

जब तक बालिग़ अपनी आज़ादाना रज़ामंदी से उसे कुबूल न करे। यह बहर के लेखक ने ''अलमुहीत'' से नक़ल किया है और रहमती ने इस सिलसिले में शाफ़ई उलमा का बयान किया हुआ तरीक़ा पसंद किया है कि अभिभावक को चाहिए कि बालिग़ लड़की की आज़ादाना राय व वास्तविक रज़ामंदी मालूम करने के लिए कुछ भरोसेमंद औरतों को उसके पास भेज दे। सबसे बेहतर इस मामले में उसकी मां रहेगी। क्योंकि मां उसके सम्बन्ध में बहुत-से उन हालात से भी आवश्यक जानकारी रखती होगी जिनकी दूसरों को हवा तक न लगी हो। अत: दिल की हालत को सही ढंग से व्यक्त भी जैसा की हक़ है मां ही कर पायेगी।''

दुर्रे मुख़्तार ही में है:

अगर किसी औरत के पति का देहावसान हो जाये। और पति के रिश्तेदार पति की विरासत से वंचित करने के लिए उस औरत से यह कहें कि तुम्हारा निकाह मृत पति से सही नहीं था, अत: तुम उसकी वारिस नहीं बन सकतीं। उधर औरत का दावा उनके विपरीत हो और यह मामला शरअ़ी अदालत तक पहुँच जाए तो क़ाज़ी-ए-शरअ़ी उस औरत से सवाल करेगा कि बताओ तुम्हारा निकाह तुम्हारे बाप ने तुम्हारी इजाज़त से किया था या नहीं? इस पर औरत अगर जवाब में यह कह दे कि मेरा निकाह मेरे बाप ने मेरी इजाज़त से किया था, और पति के रिश्तेदार उसकी बात से इन्कार कर दें जब भी यह निकाह सही ही समझा जाएगा और मृत पति के रिश्तेदारों के विपरीत वह अपने पति की वारिस क़रार पाएगी। और इद्दत गुज़ारेगी। (लेकिन अगर औरत का जवाब इस तरह हो कि) हालांकि मेरा निकाह मेरे बाप ने मुझसे पूछे बग़ैर ही कर दिया था मगर जब मुझे उसकी ख़बर मिली तो मैं उस

निकाह पर रज़ामंद हो गई थी, तो अब इस स्थिति में क़ाज़ी का फ़ैसला उस औरत के विरुद्ध और उसके विरोधी पति के रिश्तेदारों के हक़ में जायेगा। इसका कारण यह है कि अभिभावक ने पहली स्थिति में निकाह से पहले ही बालिग़ औरत से इजाज़त ली थी, अतः बिना किसी सन्देह के वह निकाह सही क़रार दिया गया। लेकिन दूसरी सूरत में बग़ैर इजाज़त जो निकाह हुआ वह निकाह के समय सही नहीं हुआ अलबत्ता बाद में बालिग़ औरत अपनी रज़ामंदी का इक़रार कर रही है जिसके कारण निकाह सही हो जाता है मगर चूंकि ख़ास तौर पर यह जगह आक्षेप से ख़ाली नहीं, अतः क़ाज़ी निकाह के सही न होने का फ़ैसला करेगा।(1)

सोचिए कि बालिग़ की इजाज़त पर निकाह के सही और अवैध होने का किस सीमा तक -मदार है जैसा कि इस समस्या से स्पष्ट है।

3. बालिग़ औरत की इजाज़त व इन्कार की कुछ स्थितियां और उनका आदेशः

1. अभिभावक ने सुन्नत तरीक़े पर स्वयं बालिग़ औरत से निकाह की इजाज़त मांगी। जैसे अमुक तुमसे निकाह करना चाहता है। क्या तुम्हें यह रिश्ता स्वीकार है? या अभिभावक के वकील ने बालिग़ लड़की से इजाज़त ली और उसने अपनी प्राकृतिक लज्जा के कारण स्पष्ट उत्तर देने के बजाय खामोश हो गई तो यह शरीअत के अनुसार उसकी तरफ़ से इजाज़त है और यह निकाह लागू हो जाएगा। (2)

2. अभिभावक ने बालिग़ लड़की की इजाज़त के बग़ैर उसका निकाह

1. दुर्रे मुख्तार रद्दुल मुहतार के साथ 2/299

2. दुर्रे मुख्तार, अला शामी 2/298,299

कर दिया और बाद में स्वयं या अपने सन्देशवाहक के द्वारा बालिग़ को उस निकाह की सूचना दी जिसको सुनकर बालिग़ शर्म के कारण खामोश हो गई तो निकाह सही हो गया। (1)

3. अभिभावक ने बालिग़ लड़की की इजाज़त के बग़ैर उसका निकाह कर दिया और किसी भरोसेमंद आदमी ने बालिग़ को उस निकाह की सूचना दी जिसपर उसने शर्म के कारण ख़ामोशी को अपना लिया तो यह निकाह भी सही हो गया। (2)

4. उपर्युक्त तीनों स्थितियों में बालिग़ लड़की ख़ामोश नहीं बल्कि जिस समय उससे इजाज़त ली जा रही थी या सूचना दी जा रही थी तो वह हँस पड़ी या मुस्कुराने लगी (या अपने मां-बाप, भाई-बहनों और सम्बन्धियों की जुदाई सोच कर के) चुपके-चुपके रोने लगी तो उन स्थितियों में भी निकाह लागू हो गया। (3)

5. अभिभावक ने किसी व्यक्ति का नाम व पता आदि बयान करके बालिग़ लड़की से उसके साथ निकाह करने की इजाज़त मांगी जिस पर पहले तो उसने अस्वीकार कर दिया मगर कुछ समय के बाद (जबकि उस व्यक्ति के बारे में लड़की को पूरा भरोसा हो चुका था) अभिभावक ने बग़ैर पूछे उसी से बालिग़ लड़की का निकाह कर दिया और मालूम होने पर अबकी बार शर्म की वजह से बालिग़ लड़की ने ख़ामोशी अपना ली तो निकाह सही हो गया। फ़तहुल क़दीर के लेखक और बहरुर्राइक़ के लेखक के विचार में इस स्थिति में निकाह सही नहीं लेकिन भरोसे योग्य कथन निकाह सही होने का ही

1. दुर्रे मुख्तार, अला शामी 2/299

2. दुर्रे मुख्तार, अला हामिशुश्शामी 2/299

3. दुर्रे मुख़्तार, अला हामिशुश्शामी 2/299

है।(1)

6. अभिभावक ने बालिग़ लड़की की मौजूदगी में उसकी इजाज़त के बिना उसका निकाह कर दिया और वह शर्म के कारण ख़ामोश रही तो निकाह सही हो गया। शर्त यह है कि निकाह के समय ही अपने होने वाले पति को पहचान रही हो।(2)

ऊपर उन स्थितियों का उल्लेख किया गया हैं जिनमें निकाह सही हो जाता है। इसके बाद उन स्थितियों का हवाला के साथ उल्लेख किया जाता है जिनमें निकाह सही नहीं होता:

1. जिस समय बालिग़ लड़की से निकाह की इजाज़त मांगी जा रही थी उसने उसी समय रिश्ते को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। मिसाल के तौर पर यह कहा कि वह तो दब्बाग़ (चमड़े का काम करने वाला) है या दूसरा व्यक्ति उससे अच्छा है आदि आदि तो निकाह ही सही नहीं हुआ। (3)

2. जब बालिग़ लड़की से इजाज़त ली गई या उसको निकाह की सूचना दी गई तो वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी या व्यंग व हंसी उड़ाने जैसा हँसने लगी (जो कि उपस्थित लोगों को महसूस हो जाता है) तो उस स्थिति में भी निकाह नहीं होगा। (4)

3. बालिग़ लड़की से निकाह की इजाज़त अभिभावक, उसके वकील या उसके सन्देशवाहक ने नहीं ली बल्कि किसी अजनबी या दूरदराज़ के रिश्तेदार या दूसरे व तीसरे दर्जे के अभिभावक ने वास्तविक अभिभावक की

1. दुर्रे मुख्तार मअश्शमी 2/300

2. दुर्रे मुख़्तार मुख्तार मअश्शमी 2/300

3. दुर्रे मुख़्तार, अलश्शामी 2/299

4. दुर्रे मुख़्तार, 2/198 बहिश्ती ज़ेवर अख़्तरी हाशिया 4/258

मौजूदगी के बावजूद निकाह की इजाज़त चाही और बालिग़ लड़की ख़ामोश रही तो निकाह सही नहीं जब तक कि वह ज़ुबाने क़ाल या ज़ुबाने हाल से इस रिश्ते पर रज़ामंद न हो। उदाहरण के लिए साफ़-साफ़ क़ुबूल या इन्कार करे या ज़ुबान से कुछ न कहे बल्कि मेह्र मांगे या पति के साथ सम्बन्ध पर राज़ी हो तो इन शर्तो के साथ निकाह सही हो जाएगा। (1)

4. अभिभावक ने बालिग़ लड़की की इजाज़त के बग़ैर उसका निकाह कर दिया और बालिग़ लड़की को उस निकाह की सूचना न अभिभावक के द्वारा मिली न उसके वकील या सन्देशवाहक ने उसे सूचित किया बल्कि किसी संदिग्ध आदमी ने बालिग़ लड़की को उस निकाह की ख़बर दी और वह यह ख़बर सुन कर ख़ामोश हो गई तो उस सूरत में भी निकाह लागू नहीं हुआ। हां उपर्युक्त (3) में लिखी शर्तो के साथ यहां भी निकाह सही हो जाएगा।

5. अभिभावक ने बालिग़ लड़की से निकाह की इजाज़त लेते समय निकाह करने वाले का नाम नहीं लिया। न बालिग़ लड़की को वह निकाह करने वाला पहले से मालूम है तो ऐसे समय बालिग़ लड़की के चुप रहने से रज़ामंदी साबित न होगी और इजाज़त न समझेंगे बल्कि नाम व पता बतलाना ज़रूरी है। जिससे बालिग़ इतना समझ जाए कि यह अमुक व्यक्ति है। इसी तरह अगर मेह्र नहीं बतलाया और समान मेह्र से बहुत कम पर निकाह कर दिया तब भी बालिग़ की इजाज़त के बिना निकाह न होगा बल्कि उससे नये सिरे से इजाज़त लेना ज़रूरी है। बाद के फ़क़ीहों की राय यही है। "फ़त्हुलक़दीर" में इसी को बेहतर क़रार दिया है। (2)

6. इजाज़त माँगने पर बालिग़ लड़की की प्रतिक्रिया कुछ ऐसी थी कि

1. फ़तावा हिन्दिया 1/287, अख़्तरी बहिश्ती ज़ेवर हाशिया 40/286

2. आलमगीरी संक्षिप्त 1/388 हाशिया बहिश्ती ज़ेवर संक्षिप्त 4/285

जिसमें रज़ामंदी का भी सन्देह है और इन्कार व नापसंद का भी। तो ऐसी स्थिति में उसकी तरफ़ से इन्कार ही समझा जाएगा और निकाह लागू न होगा।(1)

7. अभिभावक ने किसी व्यक्ति का नाम व पता बतला कर जब बालिग़ लड़की से निकाह की इजाज़त चाही तो उसने रिश्ता रद्द कर दिया। फिर कुछ समय गुज़रने के बाद अभिभावक ने लड़की से पूछे बिना ही उस व्यक्ति से उसका निकाह कर दिया। जब बालिग़ लड़की को उस निकाह का ज्ञान हुआ तो उसने दोबारा फिर इन्कार कर दिया या सिर्फ़ इतना कहा कि ''मै पहले ही कह चुकी हूँ कि मुझे वह पसंद नहीं'' तो ऐसा निकाह लागू नहीं होगा। यहां तक कि अगर बालिग़ लड़की उस लगातार इन्कार के बाद उस रिश्ते पर राज़ी भी हो जाए जब भी निकाह सही न होगा। (2)

8. जब बालिग़ लड़की से निकाह की इजाज़त ली जा रही थी तो उसे खांसी या छींक आने लगी और खांसी व छींक बंद होते ही उसने कहा: ''मुझे यह रिश्ता स्वीकार नहीं'' या जिस समय वह कुछ जवाब देना चाहती थी तो ज़बरदस्ती उसका मुंह बंद कर दिया गया और ज्यों ही उसका मुंह आज़ाद हुआ उसने फ़ौरन रिश्ता अस्वीकार कर दियाइन सब स्थितियों में भी निकाह सही नहीं होगा। बालिग़ लड़की के इन्कार को सही माना जायेगा। क्योंकि खांसी, छींक या मुंह बंद हो जाने के कारण से बालिग़ लड़की की थोड़ी देर की या ज़बरदस्ती की ख़ामोशी वास्तव में वह ख़ामोशी ही नहीं है जिसको पवित्र शरीअत ने स्वीकार व रज़ामंदी का बदल क़रार दिया है। अत: इस मनचाही ख़ामोशी और उस मजबूरी की खामोशी का अन्तर अनिवार्य है।(3)

---

1. शामी 2/300

2. दुर्रे मुख़्तार मअश्शामी 2/300

3. शामी 2/299

4. निकाह के लागू होने या न होने के बारे में दम्पति के मतभेद का शरअ़ी आदेश:

अल्लामा शामी रह0 ने अपने हाशिया में फ़रमाया: (जिस स्थिति में दम्पति के परस्पर विरोधी दावों और शरअ़ी सुबूत न होने पर पत्नी के पक्ष में उसके क़सम खाने के आधार पर फ़ैसले का हुक्म है जबकि दम्पति में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न हुआ) तो वहाँ शारीरिक सम्बन्ध न होने से तात्पर्य यह है कि या तो बिल्कुल सम्बन्ध न हुआ हो, या सम्बन्ध तो हुआ लेकिन उसमें औरत की रज़ा शामिल न हो। अत: अगर यह साबित हो जाये कि पत्नी शारीरिक सम्बन्ध पर रज़ामंद थी तो फिर उसका निकाह लागू होने से इन्कार करना निरर्थक हो कर रह जायेगा और पति के पक्ष में ही फ़ैसला कर दिया जाएगा। 'हाशियतुलग़ज़ी अललइश्बाह' में शारीरिक सम्बन्ध हो जाने के बाद औरत के इन्कार के सम्बन्ध में आदरणीय फ़क़ीहों के मतभेद का उल्लेख करने के बाद यह फ़ैसला किया गया है कि शारीरिक सम्बन्ध हो जाने के बावजूद भी अगर औरत सिरे से ही निकाह लागू होने का इन्कार कर रही हो तो इन्कार सही और मान्य है, क्योंकि यह शर्मगाह की हुरमत का मामला है जो अत्यन्त अनुशासन व सावधानी चाहता है। बल्कि उपरोक्त लेखक अल्लामा ग़ज़ी रह0 ने अपने शैख अल्लामा मुक़द्दसी रह0 के बारे में लिखा है कि उन्होंने इस विषय पर एक सम्पूर्ण लेख लिख कर उसमें दम्पति के शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने के बावजूद सिरे से ही निकाह के लागू होने के बारे में औरत के इन्कार को मान्य और वरीयता योग्य क़रार दिया है।(1)

फिर इस समस्या में औरत के कथन पर भरोसा करने के सम्बन्ध में अल्लामा शामी रह. ने यह दलील पेश की है कि चूंकि औरत मर्द के

1. शामी 2/302

कथनानुसार निकाह होने के अनिवार्य होने और उसके नतीजे में उसके साथ सोने का अधिकार हासिल होने का इन्कार कर रही है। पवित्र शरीअत के निर्धारित नियमों की रौशनी में उसके इन्कार करने और क़सम खाने के कारण फ़ैसला उसी के पक्ष में किया जाएगा। क्योंकि नियम ''क़सम उसपर है जिसने इन्कार किया''। (1)

इसके बाद फ़त्हुलक़दीर के लेखक और 'अलकाफ़ी लिलहाकिमुश्शहीद' रह0 के हवाले से लिखते हैं कि अगर इस मामले में औरत का अभिभावक (बाप, दादा और भाई आदि) भी पति के पक्ष में गवाही दे तो उसके बावजूद फ़ैसला औरत के ही पक्ष में होगा और निकाह बातिल क़रार दिया जाएगा। (2) स्पष्ट रहे कि इस स्थिति में औरत के क़सम खाने का मामला इमाम यूसुफ व मुहम्मद की राय पर है और उसी पर फ़तवा है अन्यथा इमाम आज़म रह0 के विचार में औरत का कथन बिना क़सम के ही मान्य है। अर्थात निकाह लागू होने के बारे में उसके इन्कार पर बिना क़सम लिए ही फ़ैसला कर दिया जाएगा। (3)

अधिक स्पष्टीकरण के लिए देखें 'फ़तावा महमूदिया' 3-240

6-चर्चा का निचोड़:

1. उर्प्युक्त स्थितियों में हरगिज़ निकाह लागू नहीं होगा।

2. ज़बरदस्ती और मनोवैज्ञानिक दबाव के तहत अगर बालिग़ लड़की ज़ाहिरी तौर पर निकाह के लिए 'हाँ' कह दे या निकाहनामा आदि पर दस्तख़त भी कर दे तब भी वास्तविक अनुमति और आज़ादाना रज़ामंदी के मौजूद न

1. हिदाया, 2/295

2. शामी 2/302,303

3. शामी 2/303, हिदाया 2/296

होने के कारण निकाह न होगा और शरीअत के अनुसार इसे अनुमति और रज़ा तस्लीम न किया जाएगा।

3. पवित्र शरीअत में निकाह के सिलसिले में बराबरी और किफ़ाअत का भरोसा एक मान्य हक़ीक़त है। आप (सल्ल0) का इर्शाद है:

"ولا يزوجن إلا من الأكفاء" (1)-

''औरतों के निकाह कुफू में किए जाएँ।''

चूँकि चर्चित समस्या में दूसरे कारणों से निकाह अवैध हो चुका है, अत: बालिग़ लड़की को यह बराबरी का दावा पेश करने की ज़रूरत नहीं रही।

4. जैसा कि शामी, दुर्रे मुख़्तार, हिदाया: और फ़तावा महमूदिया के स्पष्टीकरण से पहले ही सिद्ध हो चुका है कि शरअ़ी कारणों से जिस तरह शारीरिक सम्बन्ध से पहले अलगाव करा दिया जायेगा, उसी तरह क़ाज़ी-ए-शरअ़ी, आलिम व मुफ़्ती और मुसलमान हाकिम शारीरिक सम्बन्ध व निकाह लागू होने के बाद भी अलगाव का अधिकार रखते है। अत: दोनों स्थितियों का आदेश एक जैसा है।

5. इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल पर यह बात स्प्ष्ट हो जाएगी कि दबाव के विभिन्न तरीक़े अपना कर बालिग़ लड़की को निकाह पर मजबूर किया गया है तो वह उस निकाह को निरस्त कर सकते हैं। बल्कि सही बात तो यह है कि क़ाज़ी साहब शरअ़ी कौंसिल आदि नाम मात्र के लिए निरस्तीकरण की खानापुरी करेंगे। क्योंकि पिछली बहस से यह बात स्पष्ट हो गई है कि ऐसा निकाह सिरे से लागू ही नहीं हुआ था।

☆☆☆

1. हिदाया 2/296

दबाव का निकाह

मौलाना अबुल आस वहीदी
सिद्धार्थ नगर

भूमिका:

इस्लाम धर्म तमाम इन्सानों का अत्यन्त सहानुभूति रखने वाला धर्म है। इसने इंसानों के तमाम वर्गो के साथ बड़ी मुहब्बत व शान्ति और सन्तुलन का मामला किया है। महिला वर्ग पर एक नज़र डालिए तो यह हक़ीक़त दिन के उजालों की तरह स्पष्ट हो जाती है कि औरतें विभिन्न धर्मो और ऐतिहासिक युगों में अत्यन्त पीड़ित रही हैं। उन्हें सिर्फ़ इस्लाम के रहमत की दामन में पनाह मिली है।

इस्लाम धर्म ने एक तरफ़ औरतों की शर्म व हया का ध्यान रखा है और सुरक्षा उपलब्ध की है तो दूसरी तरफ़ उसकी चेतना की आज़ादी और पसंद व नापसंद को भी ओझल नहीं किया है। अत: औरतों की हया की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए और इस अंदेशे को देखते हुए और उनके अंदर अत्यन्त सौन्दर्य प्रदर्शन और निर्लज्जता न पैदा हो जाए, इस्लामी शरीअत ने कहा कि औरत के लिए 'अभिभावक' ज़रूरी है, चाहे वह नाबालिग़ हो या बालिग़, इस बुनियाद पर न वह अपना निकाह कर सकती है और न दूसरे का

निकाह करा सकती है। लेकिन मर्दो के अभिभावकत्व के अधिकार का यह मतलब नहीं कि वह औरतों के साथ ज़बरदस्ती का मामला करें। इसलिए शरीअत ने निकाह आदि में ज़बरदस्ती से रोक दिया है और यह स्पष्ट फ़ैसला कर दिया है कि "**الثيب أحق بنفسها من وليها**" ''शौहर दीदा अपने आप की अपने आभिभावक के मुक़ाबले अधिक हक़दार है''

मगर यहाँ "**احق**" इस्म तफ़ज़ील (Superlative noun) इस्तेमाल किया गया है जिससे लतीफ़ अंदाज़ में अभिभावकत्व का अधिकार सिद्ध भी हो रहा है। फिर भी किसी मर्द को समझदार बालिग़ के मामले में दबाव का हक़ नहीं है। नाबालिग़ लड़की के साथ उसका वली (अभिभावक) ज़बरदस्ती का मामला कर सकता है, मगर बालिग़ होने के बाद उसे शरीअत ने बालिग़ होने पर अपने लिए भला रास्ता चुनने का अधिकार दे कर उसके विचारों की आज़ादी का पूरा ध्यान रखा है। औरतों की चेतना की आज़ादी का ध्यान इस्लाम धर्म ने यहाँ तक रखा है कि अगर किसी अभिभावक ने किसी औरत की शादी उसकी इच्छा के विरुद्ध कहीं कर दी, तो उसे अदालत में जाकर आपत्ति और तीखी प्रतिक्रिया का पूरा हक़ दिया है।

एक और दृष्टिकोण से महिला वर्ग के मामले में इस्लाम का न्याय व सन्तुलन देखिए कि उसने अगर एक तरफ़ मर्द को तलाक़ का अधिकार दिया है तो दूसरी तरफ़ औरत को ख़ुलअ़ का अधिकार दिया है ताकि नाख़ुशगवार माहौल में वह घुट-घुट कर ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर न हो। मैंने उपरोक्त मामले किताब व सुन्नत की रूह और फ़क़ीहों और इमामों के दृष्टिकोण के मुताबिक़ लिखे हैं। यद्यपि हनफ़ी उलमा ने अभिभावकत्व और ख़ुलअ़ आदि की कुछ आंशिक बातों से मतभेद व्यक्त किया है। बहरहाल ज़रूरी है कि औरतों

के बारे में उपर्युक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाए ताकि, आज़ादी-ए-निस्वाँ (नारी-स्वन्त्रता) और हूकूक़ इन्सानी (मानवाधिकार) की पुरफ़रेब तंज़ीमों, धोखा देने वाले संगठनों को, यह कहने का मौक़ा न मिले कि इस्लाम धर्म में वैचारिक स्वतन्तत्रा और औरतों के अधिकारों को पामाल किया गया है।

इस्लाम धर्म में औलाद की सही शिक्षा व दीक्षा पर भी बहुत ज़ोर दिया गया है। अगर उनकी सही तालीम व तरबीयत हो तो मुसलमान लड़के या लड़कियां पूर्बी माहौल में हों या पश्चिमी माहौल में — उनके क़दम ग़लत दिशा में नहीं बढ़ सकते। इस भूमिका के बाद अब प्रश्नों के उत्तर प्रस्तुत हैं।

1. इस स्थिति को उसकी रज़ामंदी हरगिज़ नहीं माना जाएगा जबकि वह दिल से उस निकाह पर राज़ी नहीं है।

असल में दबाव के नतीजे में निकाह, तलाक़ और इताक़ लागू नहीं होते। इसलिए कि दबाव के नतीजे में जो फ़ैसला आदमी करता है उसे मजबूरी की वरीयता तो कहा जा सकता है मगर उसे अधिकृत फ़ैसला नहीं कहा जा सकता अधिकृत फ़ैसले का सम्बन्ध तो आन्तरिक भावना व चेतना से होता है जो दबाव की स्थिति में नहीं पाई जाती है।

2. अगर दबाव के नतीजे में किसी समझदार बालिग़ ने निकाह के लिए 'हाँ' कर ली तो उसे उसकी रज़ा और वास्तविक अनुमति कभी नहीं माना जाएगा। नबी (सल्ल0) के ज़माने की यह घटना देखें कि एक औरत रसूलुल्लाह सल्ल0 के पास आई और कहा कि मेरे पिता ने मेरी शादी अपने भतीजे से कर दी है जो मुझे नापसंद है तो आपने उस औरत को अधिकार दे दिया। मगर उस दानिशमंद औरत ने बाद में कहा:

"قد أجزت ما صنع أبي ولكن أردت أن اعلم النساء أن ليس إلى الآباء من الأمر شئ" (1)-

अर्थात मेरे बाप ने जो किया मै उसे सही क़रार देती हूँ, लेकिन मैंने यह चाहा कि दूसरी औरतों को बता दूँ कि बाप को औरत के मामले में कुछ भी ज़बरदस्ती (दबाव) हक़ नहीं है। (1) इस तरह की एक दूसरी घटना मुसनद अहमद, सुनन अबी-दाऊद, सुनन इब्ने-माजा और दारक़ुतनी में भी आई है।

और तलाक़ व इताक़ में भी दबाव मान्य नहीं। रसूलुल्लाह (सल्ल0) का इर्शादे गिरामी है:

"لا طلاق ولا عتاق فى إغلاق" (ابو داؤد، ابن ماجه)

दबाव की तलाक़ व अताक़ का कोई भरोसा नहीं। (2)

3. ब्रिटेन के माहौल में रहने वाली लड़की और हिन्दुस्तान में परवरिश पाने वाले लड़के के बीच अवश्य बड़ा सामाजिक अन्तर होता है। मगर इस अन्तर के कारण लड़की को दावा करने का कोई हक़ नहीं कि मेरी शादी जिस व्यक्ति से की जा रही है वह मेरा कुफ़ू नहीं है। इसलिए कि इस्लाम और दीनदारी में किफ़ाअत का भरोसा है, अन्य मामलों में नहीं।

4. अगर ज़बरदस्ती से निकाह हुआ है और किसी तरह शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो गए तो चूंकि वह निकाह हुआ ही नहीं, इसलिए दोनों में अलगाव करा दिया जायेगा। औरत मेह्र की हक़दार होगी जैसा कि सुनन अबी-दाऊद में बसरा बिन अकसम की घटना आई है कि एक औरत से उनकी शादी हुई मगर वह गर्भवती थी तो उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्ल0) से ज़िक्र

1. फ़िक़्हुस्सुन्ना 2/266

2. मिशकातुल मसाबीह 2, बाबुल ख़ुलाअ़ वत्तलाक़

किया तो आप सल0 ने फ़रमाया:

"**لها الصداق بما استحللت من فرجها ..... وفرق بينهما**" (1)-

''वह शारीरिक सम्बन्ध के कारण मेह्र की हक़दार होगी।'' उसके बाद आप (सल्ल0) ने दोनों को अलग कर दिया।

अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित नहीं हुए तो अलगाव करा दिया जायेगा।

5. अगर लड़की को दबाव के माध्यम से निकाह पर मजबूर किया गया था तो दो पक्षों के बयान लेने के बाद क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को चाहिए कि निकाह निरस्त कर दे, चूँकि वह निकाह लागू नहीं हुआ जैसा कि ऊपर ज़िक्र किया गया।

☆☆☆

1. फ़िक़्हुस्सुन्ना 2/298 बहसुल मेहर

जबरी शादी

मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान बिजनौरी
मदनी दारुलइफ़्ता, मदरसा अरबी
मदीनतुल-उलूम, बिजनौर

अल्लाह तआला ने इन्सानों ही में नहीं बल्कि जानवरों और हैवानों में भी जोड़े पैदा फ़रमाए हैं। इससे मक़सद जहां नस्ल को बढ़ाना है वहीं एक दूसरे के लिए राहत और सुकून का माध्यम होना भी है।

"ومن آياته أن خلق لكم من أنفسكم أزواجاً لتسكنوا إليها وجعل بينكم مودة ورحمة" (۱)-

''और अल्लाह की निशानियों में से यह भी है कि उसने तुम्हारे नुफूस (Self) से जोड़े पैदा किये ताकि तुमको सुकून हासिल हो, और तुम्हारे बीच मुहब्बत और रहमत क़ायम कर दी है''।

मालूम हुआ कि जोड़ा और बराबरी होना सुकून और राहत का कारण है। अगर यह न हो तो संसार की व्यवस्था दरहम-बरहम हो जायेगी। जनाब रसूलुल्लाह (सल्ल0) ने इर्शाद फ़रमाया:

"ولا يزوجن إلا من الأكفاء" (۲)-

''औरतों की शादी उनके कुफ़ू ही से की जाये।''

---

1. सूरा रूम
2. अल हिदाया

इसी वजह से हमारे फ़क़ीहों और बुज़ुर्गों ने इर्शाद फ़रमाया है:

١ – "الكفاء ة معتبرة في ابتداء النكاح لزومه وصحته" (١).

1. निकाह के प्रारम्भ में उसके अनिवार्य होने और उसके सही होने के लिए किफ़ाअत मान्य है:

٢ – "إن الولي لو زوج الصغيرة غير الكفوة لايصح مالم يكن أبا وجدا (٢).

2. अभिभावक अगर नाबालिग़ लड़की का निकाह ग़ैर-कुफ़ू में कर दे तो निकाह सही नहीं होगा बशर्ते कि बाप और दादा न हो।

٣ – "والمختار للفتوى أنه لا يصح العقد" (٣).

3. फ़तवा योग्य कथन यह है कि अक़्द सही नहीं होगा।

4. इमाम मुहम्मद (रह0) फ़रमाते हैं: ग़ैर-कुफ़ू में निकाह मुन्अक़िद (स्थपित) ही नहीं होता। (4)

٥ – 'ةالعجمي لايكون الكفوء للعربية ولو كان عالما أو سلطانا"

5. ग़ैर अरब मर्द अरबी औरत का कुफ़ू नहीं हो सकता है यद्यपि वह आलिम हो या बादशाह। उपर्युक्त स्प्ष्टीकरण से कुछ बातें साबित हैं:

1. ग़ैर-कुफ़ू में निकाह जायज़ नहीं है। अगर होगा तो लागू नहीं होगा।

2. ग़ैर अरबी, अरबी का कुफ़ू नहीं होता यद्यपि वह आलिम हो या सुल्तान हो। इन तमाम स्थितियों में कारण सुकून न मिलना संसार की व्यवस्था में बिगाड़ पैदा होने का सन्देह है।

लिहाज़ा वे लड़कियाँ जो दूसरे मुल्कों में पैदा हुई हैं; वहाँ का माहौल पाया और प्रशिक्षण पाई। वे अगर किसी दूसरे मुल्क में ज़बरदस्ती या

1. दुर्रे मुख़्तार
2. हवाला बाला
3. रद्दुल मुहतार 2/344
4. दुर्रे मुख़्तार

बिना-रज़ामंदी के ब्याह दी जाएँ तो ऐसे निकाह लागू न होंगे। जबकि समझदार बालिग़ का निकाह किसी दबाव से नहीं किया जा सकता है। इन हालात में ज़बरदस्ती की शादियाँ न होंगी, बल्कि वें स्थापित ही न होगी और क़ाज़ी-ए-शरअ़ी या शरअ़ी पंचायत को बिना-झिझक निकाह निरस्त कर देना चाहिए। यह सावधानी के लिए है जब निकाह का वुजूद ही तस्लीम नहीं तो निरस्त करवाने की भी ज़रूरत नहीं है।

☆☆☆

जबरी निकाह

मौलाना मुहम्मद अंज़ार आलम क़ासमी
मर्कज़ी दारुलक़ज़ा, इमारते शरईया, पटना

इकराह (ज़बरदस्ती) की शब्दकोशीय परिभाषा:

इन्सान का किसी ऐसी चीज़ के करने पर मजबूर होना जिसको वह नापसंद करता है, इकराह है।

"حمل الإنسان على شئ يكره" (۱)۔

इकराह रज़ा और मुहब्बत का विलोम है। दोनों को एक दूसरे के विलोम के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इर्शाद रब्बानी है:

"وعسى أن تكرهوا شيئا وهو خير لكم وعسى أن تحبوا شيئا وهو شرلكم" (۲)۔

हो सकता है तुम किसी चीज़ को नापसन्द करते हो हालांकि वह तुम्हारे लिए भली हो और हो सकता है तुम किसी चीज़ को पसन्द करते हो और वह तुम्हारे लिए बुरी हो

1. अल बहरुर्राइक़ 8/127, अदुर्रुल मुख़्तार अला हामिश रद्दुल मुहतार 9/177, अल्लुबाब फी शरहिल किताब 4/107

2. सूरः बक़रा 216

इकराह की शरअ़ी परिभाषा:

अवैध रूप से किसी व्यक्ति को उसकी रज़ामंदी के बिना किसी काम के करने पर डरा कर मजबूर करना इकराह है।

"هو إجبار أحد على أن يعمل عملا بغير حق من دون رضاه بالإخافة" (١)۔

कुछ आदरणीय फ़क़ीहों ने इकराह की शरअ़ी परिभाषा इस तरह की है:

" وشرعاً حمل الغير على فعل بما يعدم الرضا دون اختياره لكنه قد يفسد وقد لا يفسد" (٢)۔

किसी को भी ऐसे काम पर आमादा करना जिसमें उसकी रज़ामंदी न हो और उसको कोई अधिकार भी प्राप्त न हो लेकिन वह कभी फ़ासिद होगी कभी फ़ासिद न होगी।

दबाव की क़िस्में:

आदरणीय फ़क़ीहों ने इकराह की दो क़िस्में बयान की हैं:

1. मुलजई 2. ग़ैर-मुलजई।

इकराहे मुलजई: जिसमें रज़ामंदी नहीं होती और अधिकार ख़राब होता है। जैसे किसी इन्सान को अवैध रूप से मजबूर करना कि अगर तुम अमुक काम नहीं करोगे तो तुमको क़त्ल कर देंगे, या यह कि अमुक अंग काट देंगे।

इकराह ग़ैर-मुलजई: ऐसा इकराह जिसमें रज़ामंदी समाप्त हो जाती

1. अत्तारीफ़ातुल फ़िक़्हिय: अला क़वाइदुल फ़िक़्ह, पृ0 188, अल बहरुर्राइक़ 8/188

2. अललुबाब फ़ी शरहिल किताब 4/107

है और अधिकार में खराबी पैदा करने वाला नहीं होता है। अर्थात किसी इन्सान को पिटाई या क़ैद की धमकी देकर किसी काम के करने पर अवैध रूप से मजबूर करना।

"هـو أن الإكـراه نـوعان: نوع يعدم الرضا ويفسد الاختيار ...... ونوع يعدم الرضا ولايفسد الاختيار ......" (١).

निचोड़ यह है कि इकराह की तमाम स्थितियों में रज़ामंदी समाप्त हो जाती है, और वास्तविक अधिकार सभी स्थितियों में सिद्ध है। हाँ! इकराह की कुछ स्थितियों में अधिकार ख़राबी पैदा करने वाला होता है और कुछ स्थितियों में अधिकार ख़राबी पैदा करने वाला नही होता है जैसा कि नियम और फ़रोअ़ की तमाम किताबों में है।

"فـالـحـاصـل أن عـدم الـرضـا مـعتبـر في جميع صور الإكراه وأصل الاختيار ثابت في جميع صوره لكن في بعض الصور يفسد الاختيار وفي بعضها لايفسد" (٢).

इकराह मुकरह की योग्यता के विपरीत नहीं है और न ही हालते इकराह की हालत में मुकरह से सम्बोधन साक़ित होता है। क्योंकि असल में मुकरह परीक्षा में होता है और आज़माइश से योग्यता और सम्बोधन साक़ित नहीं होता है। यही वजह है कि मुकरह इकराह की हालत में फ़र्ज, हिज़्र, वैधता और छूट के बीच संकोच में होता है।

"ثـم اعـلـم أن الإكراه لاينا في أهلية المكره ولايوجب وضع الخطاب

1. शरह बिदायतुल मुब्तदी अला हामिशुल हिदाया 6/414,415 अल्लुबाब फ़ी शरहिल किताब 4/107, अल बहरुर्रायिक 8/70, दुररुल हुक्काम फ़ी शरह ग़ररुल अहकाम, अल जुज़उस्सानी, किताबुल इकराह पृ0 269

2. दुररूल हुक्काम, ग़ररुल अहकाम की व्याख्या में 2/269

عـنـه بحال؛ لأن المكره مبتلى والابتلاء يحقق الخطاب والدليل عليه أن أفعاله تتردد بين فرض وحضر وإباحة ورخصة ويأثم تارة ويؤجر أخرى"۔

रज़ा की शब्दकोशीय परिभाषा:

"رضا، رضى يرضى رضىً ورضواناً مرضاة"

''रज़ा, रज़ी यर्ज़ा, रिज़न व रिज़वानन मरज़ातिन'' से लिया गया है। जिसके अर्थ राज़ी होना, पसंद करना, खुश होना आदि हैं। रज़ा सख़्त (मजबूरी के मामलों) का विलोम है और सूफ़िया के यहाँ रज़ा से तात्पर्य दिल की खुशी है।

रज़ा की परिभाषिक परिभाषा:

हनफ़ी उलमा ने रज़ा की परिभाषिक परिभाषा तारीफ़ यह की है कि वह अधिकार का ऐसा पूरा होना है जिसका प्रभाव चेहरे के ज़ाहिर से जाना जाता हो।

"في الـاصـطـلاح عـرفه الحنفية بأنه امتلاء الاختيار أي بلوغه ونهايته بحيث يفضي أثره إلى الظاهر من ظهور البشاشة في الوجه ونحوها" (1)۔

और अधिकांश फ़क़ीहों ने रज़ामंदी की परिभाषा **"أنـه قـصـد الـفعل دون أن يشـوبـه إكراه"** ''किसी काम का ऐसा इरादा करना है जिसमें मजबूरी और सन्देह हो'' से की है। (2)

हनफ़ी फ़क़ीहों और अधिकांश फ़क़ीहों में मतभेद इस बात में है कि रज़ा और अधिकार दोनों एक हैं, या दो अलग-अलग चीज़ें हैं। तो इस

1. अत्तलवीह अलत्तौज़ीह 2/195

2. अलहवाशी अला मुख़्तसरुल ख़लील 5/9

सिलसिले में हनफ़ी फ़क़ीहों की राय यह है कि रज़ा और अधिकार दो अलग-अलग चीज़ें हैं। जबकि अधिकांश उलमा का कहना है कि दोनों एक ही हैं, अर्थात दोनों समानर्थी शब्द हैं।

"ذهب الحنفية إلى أن الرضا والاختيار شيآن مختلفان من حيث المعنى الاصطلاحى والآثار في حين الجهمور إلى أنهما مترادفان" (1)-

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट होता है कि मजबूरी की घोषणाओं के सिलसिले में हनफ़ी उलमा और अधिकांश उलमा के बीच मतभेद की बुनियाद रज़ा और इख़्तियार पर ही है। अधिकांश उलमा के विचार में मजबूर से रज़ा और इख़्तियार दोनों समाप्त हो जाते है और हनफ़ी उलमा के विचार में मजबूर से मजबूरी की हालत में सिर्फ़ रज़ा समाप्त होती है न कि अधिकार। बल्कि हनफ़ी उलमा के विचार में मजबूरी की कुछ स्थितियों में अधिकार बिगाड़ पैदा करने वाला होता है और कुछ सूरतों में तो अधिकार में भी बिगाड़ नहीं होता बल्कि वास्तविक अधिकार बाक़ी रहता है, जैसा कि ऊपर गुज़रा।

रज़ामंदी की वास्तविकता:

अब विचारणीय मामला यह है कि शरअ़ी आदेशों में रज़ा की क्या वास्तविकता और महत्व है? क्या रज़ा शरअ़ी आदेशों के लिए सही होने की शर्त है या नहीं, तो इस सिलसिले में अधिकतर उलमा ने तमाम शरअ़ी आदेशों में रज़ा को सही होने की शर्त क़रार दिया है, सिवाय उन आदेशों के, जिनमें कोई स्पष्ट क़ुरआ़न व सुन्नत का आदेश आया हो। जैसे हुज़ूर (सल्ल0) ने इर्शाद फ़रमाया:

1. हाशिया इब्ने आबिदीन 4/507 कशफ़ुल असरार 4/383

"ثلاث جدهن د وهزلهن جد: الطلاق والعتاق والنكاح" (۱)۔

''अगर किसी व्यक्ति ने मज़ाक़ से अपनी बीवी को तलाक़ दे दी या किसी से मज़ाक़ में निकाह कर लिया, या अपने ग़ुलाम को मज़ाक़ ही में आज़ाद कर दिया तो सब लागू होंगे।'' हनफ़ी उलमा के विचार मे कुछ शरअ़ी घोषणाओं में रज़ा सही होने की शर्त है और कुछ में नहीं। (आगे विस्तृत बहस आ रही है)।

अब मजबूरी की हालत में मजबूर की घोषणायें लागू होती हैं या नहीं तो इस सिलसिले में हनफ़ी उलमा व अन्य में मतभेद है।

घोषणाओं की दो क़िस्में हैं: संवेदनशील घोषणायें और शरअ़ी घोषणायें। फिर शरअ़ी घोषणायें की दो क़िस्में हैं: 1. इन्शा, 2. इक़रार। फिर इन्शा की दो क़िस्में हैं। एक क़िस्म वह है जो निरस्तीकरण का सन्देह रखती है और दूसरी किस्म वह है जो निरस्तीकरण का सन्देह नहीं रखती है। जो शरअ़ी घोषणायें निरस्तीकरण का सन्देह नहीं रखती हैं वे यह हैं: तलाक़, इताक़, निकाह, ज़िहार, यमीन, क़िसास का माफ़ करना आदि। और वे शरअ़ी घोषणायें जो निरस्तीकरण का सन्देह रखती हैं, वे विक्रय, पट्टा आदि हैं।

"التصرفات الشرعية في الأصل نوعان: إنشاء وإقرار والإنشاء نوعان: نوع لايحتمل الفسخ ونوع يحتمله، أما الذي لايحتمل الفسخ فالطلاق والرجعة والعتاق والنكاح واليمين والنذر والظهار والإيلاء والفيئ في الإيلاء والتدبير والعفو عن القصاص، وهذه التصرفات جائزة مع الإكراه عندنا وعند الشافعي لاتجوز" (۲)۔

अधिकांश उलमा के विचार में घोषणाओं में मजबूरी प्रभावी है जबकि

1. तिर्मिज़ी व अबू दाऊद

2. बदाइउस्सनाइअ 7/184

हनफ़ी उलमा की राय यह है कि वे शरअ़ी आदेश जो निरस्तीकरण का सन्देह नहीं रखते हैं और न उनमें रज़ा शर्त है तो उन आदेशों में मजबूरी प्रभावी नहीं और ऐसी घोषणायें मजबूरी की स्थिति में भी मजबूर करने से लागू व अनिवार्य होगी। तो अगर किसी व्यक्ति को अवैध रूप से मजबूर किया गया कि तुम अपनी पत्नी को तलाक़ दे दो और उस व्यक्ति ने भी मजबूरी में डर की वजह से अपनी पत्नी को तलाक़ दे दी तो उस व्यक्ति की पत्नी पर तलाक़ प्रभावी हो जाएगी। इसी तरह से अगर किसी व्यक्ति को किसी से निकाह करने पर अवैध रूप से मजबूर किया गया और ज़बरदस्ती उसे डरा धमका कर निकाह पर 'हाँ' कहलवा ली गयी तो निकाह लागू हो जाएगा।

"وضابط ذلک أن کل مالا یؤثر فیه الفسخ بعد وقوعه لایعمل فیه الإکراه من حیث منع الصحة، لأن الإکراه یفوت الرضا وفوات الرضا یؤثر في عدم اللزوم وعدم اللزوم یمکن المکره من الفسخ، فالإکراه یمکن المکره من الفسخ بعد التحقق، فما لایحتمل الفسخ لایعمل فیه الإکراه" (1)-

जम्हूर (अधिकांश) आदरणीय फ़क़ीहों के विचार में शरअ़ी घोषणाओं में दबाव प्रभावी है और मजबूरी में की गई शरअ़ी घोषणाएं लागू नहीं होती है। क्योंकि जम्हूर के नज़दीक तमाम शरअ़ी घोषणाओं में रज़ा शर्त है और मजबूरी में रज़ा मौजूद नहीं होती है। यही वजह है कि मजबूर की दी हुई तलाक़ लागू नहीं होती है और न ही मजबूर का किया हुआ निकाह स्थापित होता है। बल्कि तमाम शरअ़ी घोषणायें मजबूरी में अवैध होती हैं।

"ویری جمهور العلماء غیر الحنفیة أن الإکراه یؤثر في هذه التصرفات فیفسدها، فلا یقع طلاق المکره مثلا، ولایثبت عقد النکاح

1. फ़तहुल क़दीर 9/254, शरहुन्निक़ाया 21/529

بالإكراه ونحوها" (١).

शरीअत में समझदार बालिग़ लड़की की रज़ामंदी:

इस्लामी शरीअत ने समझदार बालिग़ औरत की रज़ामंदी को निकाह में बड़ी अहमियत दी है जैसा कि क़ुरआन मजीद की आयतों और हदीसों से स्पष्ट होता है। यही वजह है कि निसा वाले वाक्य से हनफ़ी उलमा के नज़्दीक निकाह लागू हो जाता है। जबकि कुछ आदरणीय फ़क़ीहों के नज़्दीक निसा वाले वाक्य से निकाह लागू नहीं होता है। क्योंकि उनके नज़्दीक उचित निकाह के लिए अभिभावकत्व शर्त है। इसलिए अगर कोई औरत स्वयं अपना निकाह कर ले तो निकाह सही नहीं होगा। हनफ़िया की दलील यह इर्शादे रब्बानी है:

"فان طلقها فلا تحل له من بعد حتى تنكح زوجاً غيره" (٢).

"وإذا طلقتم النساء فبلغن أجلهن فلا تعضلوهن أن ينكحن ازواجهن" (٣).

"फिर जब उसने तलाक़ दे दी तो वह उसके लिए जायज़ नहीं रही यहां तक कि वह उसके अतिरिक्त दूसरे पति से निकाह न कर ले"।

"और जब तुम औरतों को तलाक़ दे दो और वे इद्दत पूरी कर लें तो उनके पूर्व पतियों से निकाह करने से मत रोको"।

इन दोनों आयतों में निकाह का सम्बन्ध औरतों की तरफ़ जोड़ा गया

---

1. अल मौसूअतुल फ़िक़्हिया 6/118, अल फ़िक़्हुल इस्लामी व अदिल्लतुहू 5/404, और देखिए: अल महल्ली लेइब्ने हज़्म 9/258, अत्तफ़सीरुल कबीर 2/99, अल्लुबाब फ़ी शरहिल किताब 4/113, अल इन्साफ़ 8/441, बदाएउस्सनाए 6/193

2. सूर: बक़र: 230

3. सूर बक़र: 232

है और प्रमाणों में वह वास्तविक कर्त्ता है। अब निकाह का सम्बन्ध औरत की तरफ़ होने से स्पष्ट हुआ कि औरत को भी निकाह करने का हक़ है।(1) हदीस शरीफ़ में भी औरत को खुद अपना निकाह करने का अधिकार साबित है। अत: हदीस पाक है: "**الأيم أحق بنفسها من وليها**।" शौहर दीदा अपने आप की अभिभावक के मुकाबले अधिक हक़दार है।(2)

शौहर दीदा ऐसी औरत को कहा जाता है जिसका पति न हो चाहे वह कुवांरी हो या सय्यिबा शरीअत ने ऐसी औरत को दूसरे से ज़्यादा अपने नफ़्स का हक़दार बनाया है। मौखिक हक़ की घोषणा उस समय होगी जबकि वह अपना निकाह स्वयं अभिभावक की रज़ामंदी के बिना करने की अधिकृत होगी। (3)

कुवांरी बालिग़ को निकाह पर मजबूर करना:

अभिभावक के लिए बिल्कुल मुनासिब नहीं है कि वह अपनी समझदार बालिग़ लड़की को किसी ऐसे व्यक्ति से निकाह करने पर मजबूर करे जिसको वह नापसंद करती है। अगर कोई अभिभावक ऐसा करता है तो वह इस्लामी शरीअत के ख़िलाफ़ करता है। उसको ऐसे काम से रुक जाना चाहिए। इसलिए कि निकाह के बाब में शरीअत ने समझदार बालिग़ लड़की की रज़ामंदी और इजाज़त को ध्यान में रखा है।

"**ولا إجبار على البكر البالغة في النكاح**" (۴)۔

1. फ़िक़्हुस्सुन्न 2/128,129
2. मुस्लिम शरीफ़
3. अल बहरुर्राइक़ 3/117, अद्दर्रुल मुख़्तार अला हामिश रद्दुल मुहतार 4/155
4. अल इख़्तियार 2/92

''कुवांरी बालिग़ लड़की पर निकाह के लिए मजबूर करना ठीक नहीं है।''

उपर्युक्त विवरण की रौशनी में प्रश्नों के उत्तर प्रस्तुत है:

1. ऐसी स्थिति में रज़ा नही पाई जायेगी और लड़की की रज़ामंदी नहीं समझी जायेगी। क्योंकि मजबूरी की दोनो स्थितियों में अर्थात चाहे मुलजई हो या ग़ैर-मुलजई रज़ा समाप्त होती है।

"فالحاصل أن عدم الرضا معتبر في جميع صور الإكراه" (۱)۔

निचोड़ यह है कि मजबूर करने की सभी स्थितियों में रज़ामन्दी न होना मोतबर है।

दूसरी बात यह है कि निकाह के सिलसिले में इसे लागू होने के लिए रज़ा शर्त नहीं है जैसा कि फ़िक़्ह की किताबों में है। अत: अल्लामा शामी लिखते हैं:

"إذ حقيقة الرضا غير مشروطة في النكاح لصحته مع الإكراه والهزل" (۲)۔

दबाव और मज़ाक़ में निकाह सही होने के लिए वास्तविक रज़ामंदी शर्त नहीं है।

2. इससे निकाह लागू हो जाएगा और उसकी रज़ा और वास्तविक अनुमति तस्लीम की जायेगी। इसलिए कि दबाव की हालत में मुकरह से हनफ़ी उलमा के विचार में अधिकार निरस्त नहीं होता है। जब उसको अधिकार है और वह योग्यता भी रखता है तो उसकी अनुमति को वास्तविक अनुमति गिना

1. दुररूल हुक्काम फ़ी शरहि ग़ुररूल अहकाम भाग 2, 269

2. रद्दुल मुख़्तार- 3/31 अल बहरुर्राइक़

जाएगा, मज़ाक़ पर अनुमान करते हुए। (1) अतः इस सिलसिले में हुज़ूर (सल्ल0) का इर्शाद है:

"ثلاث جدهن جد وهزلهن جد: النكاح والطلاق والعتاق" (٢)-

''तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनकी संजीदगी भी संजीदगी है और मज़ाक़ भी संजीदगी है : निकाह, तलाक़ और रजअत।''

दस्तख़त द्वारा निकाह का आदेश:

अगर किसी लड़के या लड़की को असाधारण दबाव में लाकर निकाह के समय दस्तख़त करा लिए तो यह निकाह सही होगा या नहीं?

हनफ़ी उलमा के विचार में सही निकाह लागू होने के लिए निकाह करने वालों का ईजाब व क़ुबूल, ज़ुबान से कहना और सुनना ज़रूरी शर्तो में से है। इसी तरह गवाहों का भी दुल्हा, दुल्हन के ईजाब व क़ुबूल का सुनना ज़रूरी है। सिर्फ़ किसी से दस्तख़त करवा लेने से निकाह लागू नहीं होगा। (3)

3. इस स्थिति में लड़की को किसी तरह यह दावा करने का हक़ नहीं है कि मेरी शादी जिस लड़के से की जा रही है या की गई है वह, मेरा कुफ़ू नहीं है। और न ही उस लड़की को सामाजिक अन्तर को किफाअत की बुनियाद बना कर अलगाव का अधिकार हासिल है।

5. चूँकि यह एक क़िस्म का अन्याय है और अन्याय को मिटाना दारुल क़ज़ा या शरअ़ी कौंसिल का कर्त्तव्य है। इसलिए ऐसी स्थिति में मेरा

---

1. अल मब्सूत लिस्सरख़सी 12/64, फ़तावा हिन्दिया 5/53, अल बहरुर्राइक़ 3/246, दुर्रे मुख़्तार अला हामिश रद्दुल मुहतार 2/421, किताबुत्तलाक़

2. तिर्मिज़ी, अबू दाऊद

3. अद्दुर्रुल मुख़्तार 1/186 अल बहरुर्राइक़ 3/246 रद्दुल मुख़्तार 2/421

विचार यह है कि क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को अवैध रूप से मजबूर करने के कारण लड़की का निकाह निरस्त करने का अधिकार दिया जाए और लड़की को भी मजबूर किये जाने के कारण निकाह निरस्त करने का हक़ दिया जाए।

☆☆☆

जबरी शादी

मौलाना ऐजाज़ अहमद क़ासमी
मदरसा इस्लामिया महमूदुलउलूम, दमला

निकाह में समझदार बालिग़ लड़की का अधिकार:

समझदार बालिग़ लड़की अपने निकाह में स्वतंत्र है। उसको कोई व्यक्ति निकाह पर मजबूर नहीं कर सकता। सही हदीस में है:

"الأيم أحق بنفسها من وليها، والبكر تستأذن وإذنها صماتها"

''समझदार बालिग़ लड़की अपने आप की अपने अभिभावक से ज़्यादा हक़दार है। कुवांरी से उसकी इजाज़त और पसंद मालूम की जाए और उसकी इजाज़त ख़ामोश रहना है।'' इसके अतिरिक्त देखिए: दुर्रे मुख़्तार 410/2

इब्ने तैमिया रह0 फ़रमाते हैं:

"ويجب على ولي المرأة أن يتقي الله فيمن يزوجها به وينظر في الزوج هل هو كفوء أو غير كفوء، فإنه إنما يزوجها لمصلحتها لا لمصلحته، وليس له أن يزوجها بزوج ناقص لغرض له" (1)-

''औरत के अभिभावक पर ज़रूरी है कि उस व्यक्ति के बारे में जिससे उसकी शादी करना चाहता है, अल्लाह से डरे और पति के बारे में विचार करे कि क्या वह कुफ़ू है या नहीं? इसलिए कि वह औरत की शादी

1. फ़तावा इब्ने तैमिया 32/35

करा रहा है उसके हित के लिए, न कि अपने हित के लिए। अभिभावक के लिए जायज़ नहीं की अपने हित को हासिल करने के लिए किसी कमतर पति से उसकी शादी कर दे।'' दूसरी जगह फ़रमाते हैं:

''أما تزويجها مع كراهتها للنكاح فهذا مخالف للأصول والنقول، والله لم يسوغ لوليها أن يكرهها على بيع وإجارة إلا بإذنها ولا على طعام أو شراب أو لباس لاتريده فكيف يكرهها على مباضعة ومعاشرة من تكره مباضعته ومعاشرة من تكره معاشرته'' (1)-

''अभिभावक का औरत की नापसंदीदगी के बावजूद उसकी शादी कराना सिद्धान्त व रिवायत सबके ख़िलाफ़ है। अल्लाह ने किसी अभिभावक के लिए जायज़ क़रार नहीं दिया कि वह औरत की पसंद के बिना किसी चीज़ के विक्रय और पट्टा करने पर उसको मजबूर करे। और न ऐसी चीज़ के खाने-पीने और पहनने पर मजबूर कर सकता है जिसको वह नापसंद करती है। तो अभिभावक किस तरह औरत की पसंद के विरुद्ध किसी व्यक्ति से निकाह पर उसको मजबूर कर सकता है? और ऐसे व्यक्ति के साथ पारिवारिक जीवन गुज़ारने पर मजबूर कर सकता है जिसके साथ रहना वह पसंद नहीं करती।''

मजबूरी का निकाह:

किसी अभिभावक ने सभी शरअ़ी ज़िम्मेंदारियों को भुलाते हुए समझदार बालिग़ लड़की को किसी नापसंदीदा व्यक्ति से निकाह पर मजबूर कर दिया और मजबूरी की हालत में उसने क़ुबूल कर लिया तो हनफ़ी उलमा की राय के मुताबिक़ यह निकाह लागू हो जाएगा। (2)

---

1. फ़तावा इब्ने तैमिया 32/35

2. रद्दुल मुख़्तार 2/579

क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल के द्वारा निरस्तीकरण:

औरत किसी तरह पति के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने पर राज़ी न हो तो अपने दावा को साबित करके क़ाज़ी के द्वारा निकाह निरस्त करा ले। (1)

☆☆☆

1. शामी 2/436

जबरी शादी

मौलाना ख़ुर्शीद अहमद आज़मी
अलमकतबुल-इल्मी, रघुनाथपुरा, मऊ

1. यह स्थिति रज़ामंदी पर आधारित होगी, और निकाह सही होगा।

2. अभिभावकों के बारे में यह पहलू महत्वपूर्ण है कि वह लड़की के हक़ में भलाई, स्नेह और उसके हितों की रक्षा को ध्यान में रखेंगे। अगर उससे हटकर किसी भावना के तहत वह लड़की पर दबाव डालते हैं तो उनका यह काम पाप का कारण होगा, मगर लड़की की इजाज़त जो मजबूर करके हासिल हो रही है, निकाह के सिलसिले में उसकी रज़ामंदी पर ही आधारित होगी।

3. निकाह के सिलसिले में शरीअत के अनुसार केवल दीन में बराबरी का भरोसा करना चाहिए जैसा कि नबी (सल्ल0) की हदीसों और रसूल (सल्ल0) के ज़माने को देखते हुए लोगों की शादियों से मालूम होता है। (1) इमाम मालिक रह0, और इमाम कर्खी, अबू-बक्र अल-जस्सास और अन्य इराक़ी उलमा ने भी सिर्फ़ उसी का भरोसा किया है। यद्यपि कुछ बाहरी मामले (स्वाभिमान) को ध्यान में रखते हुए रिवाज के अनुसार अन्य मामलों में भी हनफ़ी उलमा के मत में किफ़ाअत का भरोसा किया गया है। वे मामले ये हैं:

1. विस्तार के लिए देखें: अनसाब व किफ़ाअत की शरअी हैसियत तालीफ़ मुहद्दिस हबीबुर्रहमान आज़मी।

नस्ल, इस्लाम, पेशा, आज़ादी, दयानत और माल। (1)

ब्रिटिश लड़की के निकाह की जो स्थिति सवाल-नामा में लिखी है, इससे अंदाज़ा होता है कि लड़की के अभिभावक उसका निकाह अपने ख़ानदान और घराने में ही करते हैं, यद्यपि मुल्क और वतन बदला हुआ है। अत: लड़की का यह दावा कि मेरा निकाह ग़ैर-कुफू में हो रहा है, जायज़ नहीं होगा।

पहले: तो इसलिए कि किफ़ाअत को अभिभावक का हक़ शुमार किया गया है।

दूसरे: इसलिए कि लड़की को इसका ज्ञान होता है कि उसका निकाह किससे किया जा रहा है और उसकी इजाज़त शामिल होती है यद्यपि दबाव के साथ हो।

तीसरे: इसलिए कि एक देहाती शहरी का कुफू हो सकता है। (2)

अत: जिनके विचार में दीन के अलावा अन्य मामलों में भी किफ़ाअत का भरोसा किया गया है उनके विचार में भी देश का अन्तर या शहरी और देहाती होने की बिना पर किफ़ाअत में कोई अन्तर नहीं होगा और एक देहाती, शहरी का कुफू हो सकता है, इसलिए इसका लिहाज़ करते हुए ब्रिटिश प्रवासी लड़की का कुफू हिन्दुस्तानी या पाकिस्तानी प्रवासी लड़का हो सकता है। लिहाज़ा लड़की की अलगाव की मांग सही नहीं होगी।

5. सिर्फ़ इस बुनियाद पर कि निकाह के समय लड़की ने मजबूरी में इजाज़त दी थी, वरना वह उस निकाह पर राज़ी नहीं थी, क़ाज़ी को इस निकाह को निरस्त करने का अधिकार नहीं होगा।

---

1. रद्दुल मुख़्तार 4/209

2. रद्दुल मुहतार 4/219

ज़बरदस्ती की शादी

मौलाना बहाउद्दीन नदवी
केरल

1. शाफ़ई मसलक के अनुसार लड़की की रज़ामंदी का महत्व है। लेकिन अगर लड़की कुंवारी (बकर) हो तो उस लड़की के बाप (बाप नहीं है तो दादा) उस लड़की को शादी करने पर मजबूर कर सकता है, जबकि वह शादी कुफ़ू से की जाये। इसका कारण यह बताया गया है कि एक लड़की के भविष्य के बारे में लड़की से भी अच्छी तरह बाप या दादा जानते हैं, और अपनी बेटी को किसी तरह की हानि पहुंचाने की इच्छा आम तौर से उनमें नहीं होगी, तो लड़की के कुँवारी होने की स्थिति में उसकी पूरी इजाज़त शाफ़ई मसलक में ज़रूरी नहीं है। और अगर सय्यिबा (जो कुँवारी नहीं है) है तो उसकी इजाज़त के बग़ैर शादी सही नहीं है।

"ولـلأب تـزوج البـكـر صـغيـرة وكبيـرة بـغيـر إذنهـا لكمال شفقتـه ويستـحـب استـئـذانهـا أي الـكبيـرة تطبيبا لخاطرها، وليس له تزويج ثيب إلا بـإذنهـا فـإن كانت صغيرة لم تتزوج حتى تبلغ، لأن الصغيرة لا إذن لها، والجد كالأب عند عدمه في جميع ماذكر"

लेकिन हमारे सवाल में रज़ामंदी की बात आई है। इसमें शाफ़ई मसलक का आदेश यह होगा कि अगर शादी कुफ़ू से नहीं है तो वह अवैध

है, चाहे अभिभावक को ज़बरदस्ती करने का हक़ हो या न हो। किफ़ाअत के मामलों की जो विशेषताएं आती हैं वे फिक़्ह: की किताबों में लिखी हैं।

"لو زوجها الولي غير كفء أو بعض الأولياء المستووين برضاها ورضا الباقين صح التزويج، ولو زوجها الأقرب برضاها فليس للأب اعتراض، ولو زوجها أحدهم بغير كفء برضاها دون رضاهم لم يصح: وفي قول: يصح ولهم الفسخ، ويجري القولان في تزويج الأب أو الجد، بكراً صغيرة أو بالغة غير كفء بغير رضاها، ففي الأظهر باطل، وفي الآخر: يصح، وللبالغة الخيار وللصغيرة إذا بلغت"۔

"और बाप कुंवारी बालिग़ या नाबालिग़ लड़की की अनुमति के बिना निकाह करता है तो वह अपार स्नेह के कारण करता है, उस लड़की के पक्ष में बेहतर यह है कि बाप उससे अनुमति लें, शौहर दीदा का निकाह उसकी अनुमति के बिना न करे और यदि वह नाबालिग़ है तो उसका निकाह न करे जब तक वह बालिग़ न हो जाये, क्योंकि नाबालिग़ से कोई अनुमति नहीं, और तमाम उपरोक्त मामलों में बाप के न होने पर दादा ज़िम्मेदार है।"

2. निकाह के लागू होने में या दूसरे किसी मामले के लागू होने में दबाव प्रभावी नहीं है। लेकिन दबाव उस स्थिति को बोला जाता है जिसमें निम्न लिखित शर्तें मौजूद हों:

1. मजबूर करने वाले को, जिस बात को बोल करके वह मजबूर करता है, उसके लागू करने की ताक़त हो।

2. दबाव उसी समय या स्थिति में हो, अर्थ यह कि, अगर कल या परसों या एक महीने के बाद क़त्ल करने की धमकी दी जाए तो यह मजबूरी में शामिल नहीं है।

3. उस धमकी से सुरक्षा पाना असम्भव हो:

"شرط الإكراه قدرة المكره على تحقيق ماهدد به عاجلاً بولاية أو تغلب، وعجز المكره عن دفعه بفرار أو استغاثة وظنه أنه ان امتنع فعل ماخوفه به ناجزاً فلا يتحقق العجز بدون اجتماع ذلک كله"۔

"इकराह(मजबूरी) में शर्त यह है कि मजबूर करने वाला जिस बात की धमकी दे रहा है उस पर तुरन्त अमल करने की ताक़त रखता हो, अभिभावक होने के कारण या ताक़त के कारण् और मजबूर उससे भागकर बचने या अपील करने में असमर्थ हो, और समझता हो कि अगर उसने उस काम से मना किया जिसका पूरी तरह डर है, इन तमाम बातों की मौजूदगी के बिना असमर्थ नहीं।

पासपोर्ट जला देने की धमकी इसमें शामिल नहीं है। क्योंकि साधारण: वह बात बाद की होगी। हां! अगर लड़की के सामने पासपोर्ट जला देने की धमकी हो तो वह इकराह है।

मेरा सन्देह यह है कि मजबूरी की बात इसमें कैसे आयेगी? लड़की पर ज़बरदस्ती करना हमारी बहस का विषय नहीं है। अगर अभिभावक को कोई शादी पर मजबूर करे तो उसको मजबूरी (निकाह या मामले में मजबूर करना) बोला जाता है। अभिभावक लड़की पर दबाव डालकर मजबूर करे तो यह शादी या मामले में मजबूर करना नहीं होगा।

3. किफ़ाअत में जो बातें मान्य हैं उनमें से 'नसब' (ख़ानदान) के तहत इस प्रश्न को रखा जा सकता है। अगर लड़का कुफ़ू नहीं है तो इस स्थिति में अलगाव का हक़ शाफ़ओ मत के अनुसार स्वयं लड़की को हासिल है।

4. शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने के बाद अलग करना और उसके पहले अलग़ करना दोनों का आदेश हर एक सवाल में एक है। अर्थात शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने के बाद अलगाव होता है तो मेह्र वापस नहीं ले सकता। और अगर इसके पहले है तो मेह्र का आधा हिस्सा वापस देना अनिवार्य है।

5. जवाब नंबर (3) के वाक्य से स्पष्ट है कि अगर ग़ैर-कुफ़ू से शादी होगी तो लड़की को स्वयं निरस्त करने का हक़ हासिल है। अगर बालिग़ नहीं है तो बालिग़ होने के बाद भी यह हक़ हासिल है। तो लड़की के कथन पर अमल करना क़ाज़ी और शरअ़ी कौंसिल के लिए वैध है, लेकिन निरस्त का शब्द लड़की के मुँह से आना चाहिए क्योंकि निरस्त करने का हक़ उसी का है।

☆☆☆

ज़बरदस्ती की शादी

शैख़ अब्दुलक़ादिर अब्दुल्लाह अलक़ादरी
(केरल)

अभिभावक को समझदार शौहर दीदा लड़की की शादी कराने का अधिकार नहीं है, सिवाय यह कि वह उसकी इजाज़त दे, क्योंकि मुस्लिम की रिवायत है:

"الثيب أحق بنفسها من وليها"

''सय्यिबा अपने अभिभावक के मुक़ाबले में अपने आप की ज़्यादा हक़दार है'' उसकी दलील यह है कि मर्दों से सामना हो जाने की वजह से उसकी अज्ञानता समाप्त हो चुकी होती है और वह मर्दों की तरफ़ से पहुँचने वाले लाभ व हानि को समझ लेती है। कुँवारी लड़की के विपरीत। (1)

निकाह में औरत की रज़ामंदी शर्त है क्योंकि यह उसका हक़ है। (2) औरतों की दो क़िस्में हैं: 1. सय्यिबा: शौहर दीदा, 2.कुँवारी (3)

औरतों की दो क़िस्में हैं, से तात्पर्य यह है कि निकाह के सिलसिले में मजबूर नहीं किया जा सकता, कुँवारी लड़कियों के मामले में बाप और

1. अत्तोहफ़ा 7/245

2. अत्तोहफ़तुत्तल्लाब बि शरहि तंक़ीहुल लुबाब भाग 2 पृ0 224

3. शरह इब्ने क़ासिम अल गज़ी अला मतन अबी शुजाअ

दादा को मजबूर करने का हक़ है। (1)

सय्यिबा बालिग़ को मजबूर करना जायज़ नहीं है और न उसकी शादी कराई जा सकती है, सिवाए यह कि वह इजाज़त दे। उसका यह कहना : ''अगर मेरे पिता रज़ामंद हैं तो मैं भी रज़ामंद हूँ'' -- काफ़ी न होगा। अगर उसका मक़सद अपनी रज़ामंदी को अपने पिता की रज़ामंदी पर आधारित करना हो। अगर उसका तात्पर्य यह हो कि मेरे बाप जो करें मैं उस पर राज़ी हूँ तो यह जायज़ है और इस समय यही रिवाज है। (2)

निकाह पूरा होने से पहले औरत का न पलटना भी शर्त है लेकिन अगर वह अक़्द के मुकम्मल होने के बाद पलट जाये तो उसका कथन मान्य नहीं होगा, सिवाए यह कि कोई प्रमाण पेश किया जाए। निकाह दो गवाहों की मौजूदगी ही में सही होगा उनका आज़ाद, मर्द, न्यायी (सच्चा) और सुनने वाला होना शर्त है, इसलिए कि जिस चीज़ पर गवाही दी जानी है वह कथन है, अत: वास्तव में उसका सुना जाना शर्त है और देखना भी शर्त है, जैसा कि आगे आ रहा है कि कथन देखने और सुनने के ज़रिये ही सिद्ध होते हैं। (3)

आवाज़ पर भरोसा करने का कोई भरोसा नहीं है। अत: अगर दोनों गवाह ईजाब करने वाले और क़ुबूल करने वाले को देखे बग़ैर ईजाब व क़ुबूल को सुन रहे हों लेकिन पूरे तौर पर उनके दिल में यह ख़्याल हो कि ईजाब करने वाला अमुक है और क़ुबूल करने वाला अमुक, तो यह काफ़ी न होगा। इसकी दलील का उल्लेख किया जा चुका है। अर्थात यह कि उन दोनों को ईजाब करने वाले और क़ुबूल करने वाले का ज्ञान नहीं है। इसलिए कि

1. हाशियतुल बाजोरी 2/112/2

2. अल अनवार फ़ी अमलिल अबरार 2/53,52

3. अत्तोहफ़ा मअ़ल मिन्हाज 7/228

निकाह के दो गवाहों से अभिप्राय यह है कि मतभेद की स्थिति में निकाह को साबित किया जा सके जो ज्ञान न होने की स्थिति में हासिल नहीं हो सकता। 'अन्निहाया:' 218/6 में है: "**وشرطهما حرية وسمع**" :(गवाहों में आज़ादी और सुनना शर्त है) इसलिए कि जिस चीज़ की गवाही दी जानी है वह कथन है। अत: वास्तव में उसका सुना जाना शर्त क़रार दिया गया और देखना भी क्योंकि कथनों का प्रमाण देखकर और सुन कर ही होता है।

अगर औरत की तरफ़ से रज़ामंदी नहीं पाई गई या उसके साथ ज़बरदस्ती की गई और निकाह मजबूर करके और शारीरिक सम्बन्ध नहीं क़ायम हुए तो औरत को निकाह निरस्त करने का हक़ हासिल है, अगर मर्द कुफ़ू न हो। किफ़ाअत का भरोसा पाँच मामलों में होता है जिनको विधाता ने बयान किया है और स्थान से उसपर में उसका कोई प्रभाव न होगा। निकाह और दूसरे समझौतों और मामलों में अन्तर है। अत: निकाह के बंधन में दोनों गवाहों का मौजूद रहना भी शर्त है। अन्य मामलों के विपरीत जो ग़ैर-मौजूदगी में भी सही हो जाते हैं जैसा कि ''असनियुल मतालिब (प्रज्वल्लित अर्थ)'' में इसकी तरफ़ इशारा किया गया है।

☆☆☆

ज़बरदस्ती की शादी

मौलाना नियाज़ अहमद अब्दुल हमीद तैयबपुरी
अलजामिअतुल इस्लामिया खैरुलउलूम, सिद्धार्थनगर

1. जी नहीं! यह रज़ामंदी नहीं मानी जायेगी। इसलिए कि लड़की मजबूर की गई है और कुबूले निकाह में मजबूर करने वाले के इरादे को लागू कर रही है न कि अपनी भावनाओं को व्यक्त कर रही है।

"رفع عن أمتي الخطأ والنسيان وما استكرهوا عليه"۔

''मेरी उम्मत से भूल-चूक और उस चीज़ को माफ़ कर दिया गया है जिस पर उसे मजबूर किया जाए।''

2. समझदार बालिग़ लड़की को अपनी रज़ामंदी का पूरा अधिकार है। लेकिन उस अधिकार से यह अनिवार्य नही होता कि यह अपने शादी के सम्बन्ध में पूर्णरूप से स्वतंत्र है, बल्कि हदीस के विवरण से अभिभावकत्व की शर्त बाक़ी रहेगी।

3. लड़की को इस बात का हक़ नहीं है कि वह बराबरी न होने का दावा करे और इसके द्वारा अलग होने का अधिकार हासिल करे। वास्तविक बराबरी इस्लाम है और सारे कलिमा पढ़ने वाले मुसलमान और भाई-भाई हैं, पेशे भले ही अलग-अलग हों, कोई मुसलमान लड़का, लड़की रज़ामन्दी और चाहत से किसी भी समाज में बसने वाली लड़की या लड़के से शादी कर

सकते हैं, यदि सामाजिक अन्तर और रहन-सहन के अन्तर से कोई नकारात्मक पहलू सामने आता है और पारिवारिक जीवन में ऐसी कड़वाहट पैदा होती है जो दोनों के दम्पति जीवन की गाड़ी के आगे बढ़ने में बड़ी रुकावट है तो शरीअत ने उसके लिए अपवाद की स्थितियां रखी हैं। लेकिन मात्र सामाजिक रख रखाव और रहन सहन के अन्तर को अ समान क़रार देना सरासर ज़्यादती और इस्लामी अक़ीदे के विरुद्ध है।

4. मजबूरी की कोई चीज़ लागू नहीं होती है, चाहे तलाक़ हो या इताक़, पूछी गई स्थिति में लड़की मजबूर की गई है इसलिए इसका निकाह ही नहीं हुआ। अब अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो चुके हैं तो लड़की समान मेह्र की हक़दार होगी। लड़के को व्यभिचारी नहीं कहा जाएगा और न ही उसपर शरअ़ी व्यभिचार की सज़ा जारी की जा सकती है यद्यपि निकाह सही नहीं हुआ था। शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न होने की स्थिति में लड़की को मेह्र का अधिकार नहीं। एक बात और ध्यान में रहे कि अवैध निकाह से शारीरिक सम्बन्ध की सूरत में इद्दत अनिवार्य होगी, सैयद साबिक़ 'फ़िक़्हुस्सुन्नः' में लिखते हैं:

"من وطي امرأة بشبهة وجبت عليها العدة، لأن وطأ الشبهة كالوطا في النكاح في النسب، فكان كالوطأ في إيجاب العدة، وكذلك تجب العدة في زواج فاسد إذا تحقق الدخول۔

أما الظاهرية فقالت: لاتجب العدة في النكاح الفاسد ولو بعد الدخول لعدم وجود دليل على إيجابه من الكتاب والسنة" (۱)۔

''जो किसी औरत से सन्देह के कारण शारीरिक सम्बन्ध कर ले तो

1. फ़िक़्हुस्सुन्नः 2/457

उस औरत पर इद्दत अनिवार्य होगी। इसलिए कि सन्देह का शारीरिक सम्बन्ध, नस्ल के सिलसिले में निकाह के शारीरिक सम्बन्ध की तरह है। अत: यह इद्दत को अनिवार्य करने में शारीरिक सम्बन्ध की तरह हो गया। इसी तरह अवैध निकाह में अगर शारीरिक सम्बन्ध हो जाए तो इद्दत अनिवार्य होगी। जहाँ तक ज़ाहिरी अर्थ लेने वालों का सम्बन्ध है तो उन्होंने कहा कि अवैध निकाह में इद्दत अनिवार्य नहीं है। चाहे दुखूल हो चुका हो। इसलिए कि किताब व सुन्नत से इसको वाजिब करने वाली कोई दलील नहीं है।''

☆☆☆

दबाव डालकर शादी के लिए राज़ी करना

मौलाना मुहम्मद आज़मी (मऊ)

1. पूछी गई स्थिति में समझदार बालिग़ लड़की से ज़बरदस्ती 'हाँ' कहलवा लेना निकाह के लिए उसकी रज़ामंदी पर दलील नहीं है। क्योंकि मजबूर करने की उपर्युक्त स्थितियां उसके राज़ी न होने की दलील हैं।

2. अगर मां-बाप या अभिभावक मात्र स्नेह और दीनी व दुनियावी हितों के लिए अनुमति लेने व निकाह के लिए बालिग़ा पर दबाव डालने का शालीन तरीक़ा अपनायें, उसमें उनका अपना या ख़ानदान आदि का स्वार्थ शामिल न हो, और कोई फ़रेब व धोखा की हरकत न हो, तो यह रज़ा व निकाह सही है, अन्यथा सवाल में उल्लेख किये गये मजबूर करने के तरीक़ों से जो निकाह होगा, वह अवैध होगा, क्योंकि जम्हूर फक़ीहों के विचार में रज़ा, और दबाव न डालना निकाह के लिए शर्त है। अत: डॉक्टर वहबा ज़ुहैली लिखते हैं:

"الرضا والاختيار من العاقدين أو عدم الإكراه. هو شرط عند الجمهور غير الحنفية، فلا يصح الزواج بغير رضا العاقدين، فإن أكره أحدهما على الزواج بالقتل أو بالضرب الشديد أو بالحبس المديد كان العقد فاسداً، لقوله عليه الصلاة والسلام: "إن الله تجاوز عن أمتي الخطأ والنسيان وما

استكرهوا عليه" وأخرج النسائي عن عائشة أن فتاة هي الخنساء ابنة خذام الأنصارية دخلت عليها فقالت: إن أبى زوجني من ابن أخيه يرفع بي خسيسته وأنا كارهة ..... فجاء رسول الله ﷺ ..... فجعل الأمر إليها" (الحديث.

''हनफ़ी उलमा को छोड़कर जम्हूर के विचार में रज़ामंदी, अधिकार और दबाव न होना दोनों की तरफ़ से शर्त है, अत: जिनका निकाह हो रहा है उनकी इच्छा के बिना निकाह जायज़ नहीं है। अगर उन दोनों में से किसी एक को भी क़त्ल, मार-पीट, या लम्बे समय तक क़ैद का ख़ौफ़ दिला कर निकाह के लिए राज़ी कर लिया गया तो यह निकाह अवैध होगा, हुज़ूर (सल्ल0) के इर्शाद की वजह से, जिसमें आपने फ़रमाया कि मेरी उम्मत को अल्लाह तआला छोटी ग़लती, भूल, और मजबूरी की हालत में माफ़ करता है और एक हदीस जिसको इमाम नसाई ने हज़रत आइशा (रज़ि0) से रिवायत किया है, यह है कि ख़न्सा बिन्ते ख़ुजाम अंसारिया उनकी ख़िदमत में हाज़िर हुई और कहा कि मेरे पिता ने अपने चचेरे भाई से मेरी शादी कर दी है ताकि मेरे ज़रिये उसकी कमी को दूर करे और उसे मैं नापसंद करती हूँ, इसी दौरान हुज़ूर (सल्ल0) तशरीफ़ लाये फिर यह बात आपको बताई गई तो आप (सल्ल0) ने फ़रमाया कि तुम्हें अधिकार है।'' (1)

इमाम इब्ने तैमिया (रह0) ने मजबूर करके शादी करने को हराम और जाहिली अमल क़रार दिया है। (2)

यह भी एक दर्दनाक हक़ीक़त है कि बदलते हुए हालात में पसंद की शादी का रुझान दिनों दिन बढ़ रहा है। किफ़ाअत का स्तर भी मॉडर्न हो गया है, जो अधितर हराम काम होने का कारण है, इसके पहले मुजरिम,

1. अल फ़िक़्हुल इस्लामी व अदिल्लातुहू 7/78

2. फ़तावा शैख़ुल इस्लाम 32/52

अभिभावक है जिनके प्रशिक्षण व सरपरस्ती में बराबरी का स्तर 'अलख़बीसातु लिलख़बीसीन' (बुरी औरतें बुरे मर्दों के लिए है) की मंज़िल तक पहुँच गया है। ज़ाहिर है, इस मरहले में अभिभावकों के दबाव डालने का अधिकार इस्तेमाल करने से बड़े बिगाड़ पैदा होने अनिवार्य हैं, इसलिए अभिभावकों को चाहिए कि उन हालात में दुल्हा व दुल्हन पर दबाव डालकर अपने अपराध के खाते को मोटा न बनाएँ।

3. इस्लाम की महान विशेषताओं में मानव समानता एक ऐसी हक़ीक़त है जिसने अरब व अजम को एक हार में पिरो दिया है, वर्गीय, क्षेत्रीय और नस्ली भेदभाव व जीवन स्तर को जिस तरह मिटाया है, वह एक खुली हुई किताब है। शादी के मामले में किफ़ाअत के जितने स्तर क़ायम किए गए हैं जिनका सुबूत किताब व सुन्नत में नहीं है वह सब रसूलुल्लाह (सल्ल0) के बाद की पैदावार हैं, इसलिए पश्चिमी व एशियाई रहन सहन के अन्तर को ग़ैर बराबरी की दलील नहीं बनाया जा सकता। पूरब व पश्चिम में आबाद मुसलमानों के बीच निकाह और निकटता के लिए दीन व ईमान, और चरित्र व नैतिकता, में किफ़ाअत सारी किफ़ाअतों पर सर्वोपरि है। अगर दो मुल्कों या एक ही मुल्क व बस्ती में रहने वाले पक्षों के बीच यह शरअ़ी किफ़ाअत न हो तो इसमें सन्देह नहीं कि सवाल में उल्लेख किया हुआ दावा करने का हक़ लड़की को हासिल है।

4. यह सवाल स्पष्ट नहीं है। जब तक यह स्पष्ट न हो कि निकाह का बन्धन रज़ा या मजबूरी की हालत में हुआ है और इस रज़ा या मजबूरी की कैफ़ियत क्या रही? फिर किन हालात में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हुए या क्यों नहीं हुए? शरअ़ी आदेश के बारे में क्या कहा जा सकता है? निकाह निरस्त होने में मेह्र की अनिवार्यता व अनिवार्य न होने का अन्तर होगा।

5. निरस्त कर सकते हैं जैसा कि जवाब नंबर-2 में हज़रत आइशा रजि0 की हदीस का उल्लेख जो खन्सा अंसारिया की घटना पर आधारित है, इस पर स्पष्ट दलील है।

☆☆☆

लड़की को मजबूर करके शादी कर देना

मौलाना सुल्तान अहमद इस्लाही
अलीगढ़

1. सवालनामा में लिखे हुए विवरण की रौशनी में पूछी गई स्थिति में रज़ामंदी मान्य नहीं होगी और इस तरह ज़बरदस्ती निकाह के लिए कहवाया गया ''हाँ'' भरोसे योग्य नहीं होगा। समझ रखने वाली बालिग़ लड़की को अधिकार होगा कि वह ऐसे मजबूर करके किये गये निकाह को निरस्त करते हुए कुफू से अपनी पसंद का दूसरा निकाह कर सके। इस्लामी समाज पर अनिवार्य है कि वह अपने यहाँ हितों की रक्षा को सुनिशिचित करे और फिक़्ह की बाल की खाल, के ग़लत इस्तेमाल पर क़ाबू पाये। इस तरह की सूरतेहाल में शरअ़ी अदालतों को भी ऐसी पीड़ित औरतों की भरपूर मदद करनी चाहिए। अपनी किताब ''इस्लाम का नज़रिया-ए-जिन्स'' में यह लेखक ''जोड़ का निकाह'' और ''शादी में अभिभावकों का हस्तक्षेप'' के अन्तर्गत, विषयों की समस्या के बारीक बिन्दुओं पर विस्तार से लिख चुका है। जिसके दोहराने की इस समय ज़रूरत नहीं है। (1)

2. पूछी गई स्थिति में यह लड़की की रज़ा और उसकी वास्तविक अनुमति नहीं होगी। उसकी बुनियाद पर होने वाला निकाह भी उसी तरह

1. प्रकाशन इदारा इल्म व अदब अलीगढ़ दूसरा संस्करण 2000 ई

अवास्तविक और अप्रभावी होगा।

3. हाँ! पूछी गई स्थिति में लड़की को यह दावा करने का हक़ होगा और बराबरी की बुनियाद पर उसको अलग होने का अधिकार हासिल होगा।

4. दोनों का आदेश अलग-अलग होगा। शारीरिक सम्बन्ध स्थापित होने की स्थिति में रिश्ता को जितना सम्भव हो, निभाने की कोशिश की जाये। दूसरी स्थिति का आदेश इससे भिन्न होगा।

5. हाँ! मजबूर करने का यक़ीन होने की स्थिति में शरअ़ी कौंसिल या क़ाज़ी ऐसे निकाह को निरस्त कर सकते हैं।

☆☆☆

औरत पर दबाव डालकर निकाह कर देना

क़ाज़ी मुहम्मद कामिल क़ासमी
ऑल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड

इस्लाम ने निकाह के लिए रिश्तों का चुनाव करने के लिए मर्द और औरत और उनके सन्बन्धियों को कई बुनियादी हिदायतें दी हैं। उन पर अमल करने से यह रिश्ता हमेशा खुशगवार और मज़बूत रहता है। मिसाल के तौर पर रिश्ता करते समय लड़के या लड़की के चुनाव में तरजीह (वरीयता) का आधार दीनदारी और अच्छा चरित्र होना चाहिए।

''हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से हदीस नक़ल की गई है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया:

"تنكح المرأة لأربع: لما لها ولحسبها ولجمالها ولدينها فاظفر بذات الدين تربت يداک" (1)-

''औरत से निकाह चार बुनियादों पर किया जाता है। उसके माल की वजह से, उसकी ख़ानदानी विशेषताओं की वजह से, उसकी सुन्दरता के कारण और उसके दीन के कारण। तुम दीनदार औरत से निकाह करके सफ़लता हासिल कर लो। तुम्हारे हाथ में मिट्टी लगे।''

दूसरी हदीस में फ़रमाया गया:

1. मिशकात 2/267

हज़रत अबू-हुरैरा से रिवायत नक़ल की गई है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया:

"إذا خطب إليكم من ترضون دينه وخلقه فزوجوه، إن لاتفعلوا فتنة في الأرض وفساد عريض" (१)-

अगर तुम्हें कोई ऐसा व्यक्ति निकाह का पैग़ाम दे जिसके दीन और चरित्र को तुम पसन्द करते हो तो तुम उससे निकाह करा दो। अगर तुमने ऐसा न किया तो ज़मीन पर बड़ा फ़ितना और बिगाड़ फैलेगा।

ويندب ..... والنظر إليها قبله (२)-

जिस औरत से निकाह तय किया जाये उसे देखने के बारे में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया:

(1) ''हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से हदीस नक़ल की गई है कि एक आदमी रसूलुल्लाह (सल्ल०) के पास आया और उसने कहा:

"إني تزوجت امرأة من الأنصار قال: فانظر إليها فإن في أعين الأنصار شيئاً" (३)-

मैंने एक अन्सारी औरत से निकाह करने का इरादा किया है तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया: ''उसे देख लो, इसलिए कि अन्सार की आँखों में कुछ होता है।''

(2) हज़रत जाबिर (रजि०) से रिवायत है कि वह फ़रमाते हैं कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया:

---

1. मिशकात 2/267
2. शामी 2/261,262
3. मिशकात 2/268

"إذا خطب أحدكم المرأة فإن استطاع أن ينظر إلى مايدعوه إلى نكاحها فليفعل" (۱)۔

''जब तुममें से कोई औरत को निकाह का सन्देश दे तो अगर वह उन अच्छाइयों को जो उस औरत से निकाह करने पर आमादा कर रही हैं देख सकता हो तो उसे ऐसा कर लेना चाहिए।

(3) हज़रत मुग़ीरा बिन शोअ़बा से हदीस नक़्ल की गई है। वह फ़रमाते हैं:

"خطبت امرأة فقال لي رسول الله ﷺ: هل نظرت إليها فإنه احري أن يؤدم بينكما" (۲)۔

''मैंने किसी औरत को निकाह का सन्देश दिया, तो मुझसे रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि क्या तुमने उसे देख लिया है। इसलिए कि देखना तुम दोनों के बीच प्यार और लगाव के लिए अधिक अच्छा है।''

अभिभावकों को हिदायत की गई है कि बालिग़ लड़के और लड़की का निकाह उनकी अनुमति और रज़ामन्दी से करें, इसके बिना न करें।

अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद मे फ़रमाया है:

"وإذا طلقتم النساء فبلغن أجلهن فلا تعضلوهن أن ينكحن أزواجهن إذا تراضوا بينهم بالمعروف" (۳)۔

''और जब तुमने औरतों को तलाक़ दे दी, फिर वे अपनी इद्दत को पूरा कर चुकीं तो उनको इससे न रोको कि अपने उन्हीं पतियों से निकाह कर

1. इस की रिवायत अबु दाऊद ने की है। देखिए: मिशकात 2/268

2. रवाह अहमद तिर्मिज़ी वन्नसाई व इब्ने माजा वद्दारमी, मिशकात 2/269

3. सूरा बक़र: 232

लें जबकि आपस में तरीक़े के मुताबिक़ राज़ी हो जाऐं।''

''हज़रत इब्ने अब्बास (रजि0) से रिवायत है कि नबी करीम (सल्ल०) ने फ़रमाया:

''**الأيم أحق بنفسها من وليها والبكر تستأمر وإذنها سكوتها**'' (۱)-

''तलाक़शुदा या बेवा अपने अभिभावक के मुक़ाबले अधिक हक़दार है, कुँवारी से अनुमति मांगी जाएगी और उसकी अनुमति उसका ख़ामोश रहना है।''

इमाम बुख़ारी (रह0) ने बाब क़ायम किया है:

''**باب: لاينكح الأب وغيره البكر والثيب إلا برضاها**''

(बाप आदि बाकरा और सैयबा का निकाह उस की रज़ामन्दी के बग़ैर न करें)।

इस के तहत उन्होंने हदीस पेश की है।

عن أبي سلمة أن أبا هريرة حدثهم أن النبي ﷺ قال: ''لاتنكح الأيم حتى تستأمر ولاتنكح البكر حتى تستأذن قالوا يا رسول الله: وكيف إذنها قال: أن تسكت'' (۲)-

(हज़रत अबू सलमा (रज़ि0) से रिवायत है कि हज़रत अबू हुरैरा रज़ि0 ने उन से बयान किया कि रसूले अकरम सल्ल0 ने फ़रमाया: शौहर दीदा औरत का निकाह उस की सरीह इजाज़त के बग़ैर न किया जाए और बाकरा (कुंवारी) लड़की का निकाह भी उस की इजाज़त के बग़ैर न किया जाए। सहाबा ने अर्ज़ किया: या रसूलुल्लाह सल्ल0 उस की इजाज़त कैसे मालूम

1 मुस्लिम, बहवाला मिशकात 2/270

2. बुख़ारी 2/771

होगी? आप सल्ल0 ने फ़रमाया कि उस का ख़ामोश हो जाना उस की इजाज़त है)।

''हज़रत आयशा रजि0 से रिवायत है कि उन्होंने अर्ज़ किया:

''یا رسول اللہ ﷺ البکر تستحیي قال: رضاھا صمتھا''

(या रसूलुल्लाह (सल्ल०) कुवांरी लड़की हया करती है आप (सल्ल०) ने फ़रमाया उसकी रज़ामन्दी उसका खामोश रहना है) (हवाला साबिक़)

''हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि0) से रिवायत है कि आप (सल्ल०) ने फ़रमाया:

لیتیمة تستأمر في نفسھا فإن صمتت فھو إذنھا وإن أبت فلا جواز علیھا۔

यतीम लड़की से उसके बारे में अनुमति मांगी जाएगी, तो अगर वह चुप रहे तो यही उसकी अनुमति है। और अगर वह इन्कार कर दे तो उस पर दबाव डालने के लिए कोई वैधता नहीं है।''(1)

यतीम उस बालिग़ लड़की को कहा जाता है जिसके पिता की मृत्यु हो गयी हो इस हदीस में यतीम का अर्थ उस लड़की से लिया गया है जिसके पिता की मृत्यु उसके बालिग़ होने से पहले हो गयी हो इस हदीस में ऐसी लड़की का निकाह करने के लिए उस से अनुमति लेने का आदेश दिया गया है अगर कोई बाप या और कोई, बालिग़ लड़की का निकाह उसकी अनुमति के बिना कर दे, तो वह निकाह लागू व अनिवार्य न होगा, बल्कि उसकी रज़ामन्दी पर आधारित है।

हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह से रिवायत है:

1. इस हदीस की रिवायत तिर्मिज़ी, अबु दाऊद, नसाई ने की है और दारमी ने इसे हज़रत अबू मूसा से नक़ल किया है (मिशकात 2/271)

"أن رجلا زوج ابنته وهي بكر من غير أمرها فأتت النبي ﷺ ففرق بينهما" (۱)۔

एक आदमी ने अपनी कुवांरी लड़की का निकाह उसकी अनुमति के बिना कर दिया वह लड़की नबी करीम (सल्ल0) के पास आई आप (सल्ल0) ने उन दोनों के बीच अलगाव करा दिया।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से रिवायत है कि जब उसमान बिन मज़ऊन रज़ि0 का इन्तिक़ाल हुआ तो उन्होंने एक लड़की छोड़ी, इब्ने उमर रज़ि0 ने फ़रमाया कि मेरे मामू क़ुदामा ने मेरा निकाह इस से कर दिया और वह उस लड़की के चचा थे। और उन्होंने उस से मशवरा नहीं किया। यह वाक़िआ उस के बाप के इन्तिक़ाल के बाद का है, उस ने उस निकाह को नापसन्द किया और लड़की ने मुग़ीरा बिन शोअ़बा के साथ निकाह कराने को पसन्द किया, लिहाज़ा उस का निकाह मुग़ीरा बिन शुअ़बा के साथ कर दिया गया। (2)

और शामी में है:

"وإن زوجها بغير استئمار فقد أخطأ السنة وتوقف على رضاها۔ بحر عن المحيط (۳)۔

''और अगर उसका निकाह अनुमति लिए बिना किया तो उसने सुन्नत के विरुद्ध किया और निकाह उसकी रज़ामन्दी पर आधारित रहेगा।''

निम्न में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि0 की रिवायत अबू दाऊद

1. अल महल्ली लेइब्ने हज़म 9/461, बहवाला अल मुफ़स्सल फ़ी अहकामिल मिरआ: वल बैतिल मुस्लिम, दफ़ा 6051/446

2. इब्ने माजा बहवाला तहरीरुल मिरआ: फ़ी अस्त्र अर्रिसाला 5/71

3. शामी 2/298,299

शरीफ़ के हवाला से आ रही है जिस में यह उल्लेख है कि एक बाकरा लड़की ने हुज़ूर अकरम सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि उस के बाप ने उस का निकाह कर दिया है और वह उस निकाह को ना पसन्द करती है, तो नबी करीम सल्ल0 ने उसे इख़्तियार दे दिया। इस हदीस में इसका स्पष्टीकरण नहीं है कि उस का निकाह उस के बाप ने उस से इजाज़त लेकर किया था या उस की इजाज़त के बग़ैर। अबू दाऊद में इस हदीस पर निम्न बाब क़ायम किया गया है: **باب فی البکر یزوجها أبوها ولایستأمرها** और "**بذل المجهود في حل أبي داؤد**" में इस की व्याख्या "**بغير إذنها**" से की गई है (1) इस व्याख्या से मालूम हुआ कि उस बाकरा लड़की का निकाह उस के बाप ने उस की इजाज़त के बग़ैर किया था, लिहाज़ा हज़रत ख़न्सा बिन्ते ख़िज़ाम रज़ि0 की रिवायत को भी इस पर महमूल किया जाएगा कि उन के बाप ने उन का निकाह उन से इजाज़त लिए बग़ैर किया था।

हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 ने फ़रमाया:

إن جاریة بکراً أتت رسول الله ﷺ فذکرت أن أباها زوجها وهي کارهة، فخیرها النبی ﷺ (۲)۔

(एक बाकरा लड़की ने रसूले अकरम सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िर होकर बताया कि उस के बाप ने उस का निकाह कर दिया है और वह उस निकाह को पसन्द नहीं करती है, तो नबी करीम सल्ल0 ने उस लड़की को इख़्तियार दे दिया)।

हज़रत ख़न्सा बिन्ते ख़िज़ाम अन्सारिया से रिवायत है:

---

1. बज़्लुल मजहूद फ़ी हल्ले अबी दाऊद भाग 5 10/102 मकतबा दारुल बाज़, अब्बास अहमद अलबाज़, मक्कतुल मुर्करमा।

2. इस हदीस की रिवायत अबू दाऊद ने की है, मिशकात 2/271

أن أباها زوجها وهي ثيب فكرهت ذلک فأتت رسول الله ﷺ فرد نكاحها (1)۔

(उन के बाप ने उन का निकाह कर दिया और वे सैयबा थीं। उन्होंने उस निकाह को पसन्द नहीं किया, वह रसूले अकरम सल्ल0 के पास आई, आप सल्ल0 ने उन का निकाह रद्द कर दिया)।

इन हदीसों को इस पर महमूल नहीं किया जा सकता कि लड़की पर दबाव व इकराह करके उस से ईजाब या कुबूल करा लिया गया, उसके बाद उस ने हुज़ूर सल्ल0 की ख़िदमत में हाज़िर होकर उसकी शिकायत की, और उस के इस निकाह को नापसन्द करने का इज़्हार करने पर आप सल्ल0 ने उस के निकाह को रद्द कर दिया हो, या उसे इख़्तियार दे दिया हो।

निम्न में मुकरेह के निकाह का हुक्म बयान करने से पहले इकराह के शाब्दिक मायना, परिभाषिक परिभाषा और उस की क़िस्में बयान की जाती हैं:

इकराह का शाब्दिक मायना:

औरत पर दबाव डालने को 'इकराह' कहते है। इकराह का लुग़वी (शाब्दिक) अर्थ बताते हुए अल-मौसूअतुल फ़िक़्हीया में लिखा है:

"قال في لسان العرب: أكرهته، حملته على أمر هو له كاره، وفي مفردات الراغب نحوه. لسان العرب، والمصباح المنير، مادة (كره) ..... ولخص ذلک كله فقهاؤنا إذ قالوا: الإكراه لغة: حمل الإنسان على شئ يكرهه يقال: أكرهت فلاناً إكراها: حملته على أمريكرهه"۔

'लिसानुल-अरब' में है **أكرهته** अकरहतुहू का अर्थ- ''मैंने उसे

1. बुख़ारी 2/771,772

नापसन्दीदा काम करने पर उकसाया'' है। 'इकराह' शब्द का अर्थ यह बताया गया है कि इन्सान को ऐसी चीज़ के करने पर मजबूर करना जिसे वह नापसन्द करता है। (1)

इकराह की परिभाषिक परिभाषा:

''هو فعل يفعله الإنسان بغيره فيزول به الرضا'' زاد في ''المبسوط'': أو يفسد به اختياره من غير أن تنعدم به الأهلية في حق المكره، أو يسقط عنه الخطاب'' (٢)۔

फ़िक़्ह की इस्तिलाह (शब्दावली) में बताया गया है : ''इक्राह ऐसा काम है जिसे इन्सान दूसरे की वजह से करता है। इस तरह इकराह की वजह से, जिस पर ऐसा किया जाता है, उसकी रज़ामन्दी जाती रहती है। अल-मब्सूत में इसमें यह जोड़ा गया है कि इकराह की वजह से जिसके ऊपर यह किया जाता है उसकी योग्यता समाप्त हुए बिना उसका अधिकार बेअसर हो जाता है।

इकराह की क़िस्में:

फ़ुक़हा-ए-किराम ने इकराह (दबाव) की दो क़िस्में बताई हैं:

1. इकराहे ताम (पूरी तरह ज़ोर-ज़बरदस्ती):

وأما بيان أنواع الإكراه فنقول: إنه نوعان: نوع يوجب الإلجاء والاضطرار طبعاً كالقتل والقطع والضرب الذي يخاف فيه تلف النفس أو العضو قل الضرب أو كثير ..... وهذا النوع يسمى إكراهاً تاماً (٣)۔

1. मजमउल अनहर 6/412, शामी 5/80 बहवाला अल मौसूआतुल फ़िक़्हिया 6/98

2. अल बहरुर्राइक़ 8/70

3. बदाइउस्सनाइअ़ 7/175

यह वह क़िस्म है जिसमें जिसके ऊपर दबाव बनाया जाता है। भौतिक रूप से (Physically) मजबूर होना ज़रूरी होता है। जैसे उसे क़त्ल करने, अंग-भंग करने, ऐसी पिटाई की धमकी जिससे जान जाने और अंग-भंग का ख़तरा हो। पिटाई कम हो या ज़्यादा इस तरह का इकराह ताम है।

2–इकराह नाक़िस:

ونوع لايوجب الإلجاء والاضطرار والحبس والقيد والضرب الذى لايخاف منه التلف، وليس فيه تقدير لازم ..... وهذا النوع من الإكراه يسمى إكراها ناقصاً (۱)۔

इसमें जिसके ऊपर ज़ोर-ज़बरदस्ती की गई हो उसका मजबूर होना ज़रूरी नहीं। इस क़िस्म में क़ैद करने, बेड़ी डालने और ऐसी पिटाई करने की धमकी देना है, जिससे जान जाने या अंग-भंग होने का सन्देह न हो और इसमें कोई मात्रा आवश्यक नहीं इसका नाम इकराह नाकिस है।

ज़ोर-ज़बरदस्ती के साथ वैध होने वाली घोषणाएं:

فالطلاق والعتاق والرجعة والنكاح واليمين والنذر والظهار ..... هذه التصرفات جائزة مع الإكراه عندنا (۲)۔

तलाक़, इताक़ (आज़ाद करना), रजअत (तलाक़े रजई के बाद पत्नी की तरफ़ लौटना), निकाह, क़सम (वायदा), नज़्र (मिन्नत), ज़िहार (बीवी को मां की पीठ कहना)-ये सब घोषणाएँ ज़ोर-ज़बरदस्ती से भी हो जाएं तो वैध हैं।

1. बदाइउस्सनाइअ़ 7/175

2. बदाइउस्सनाइअ़ 7/182

मजबूर करके निकाह का शरअ़ी आदेश:

ज़ोर-ज़बरदस्ती, किये गये निकाह, तलाक़ आदि वैध हैं। इसलिए कि दबाव डालने की स्थिति में सिर्फ़ उसकी मन से रज़ामन्दी जाती रहती है। तलाक़ होने के लिए मन से रज़ामन्दी शर्त नहीं है। इसलिए मज़ाक़ में तलाक़ देने वाले की तलाक़ हो जाती है।हालाँकि वह भौतिक रूप से तलाक़ पर राज़ी नहीं है।

لأن الفائت بالإكراه ليس إلا الرضا طبعاً، وإنه ليس بشرط لوقوع الطلاق۔ فإن طلاق الهازل واقع وليس براضٍ به طبعاً (۱)۔

''निकाह वैध होने के लिए निकाह करने वालों में रज़ामन्दी शर्त नहीं है एक का दूसरे को सुनना शर्त है इसलिए कि निकाह ज़ोर ज़बरदस्ती और हँसी मज़ाक़ में करने से सही हो जाता है।''

(وشرط سماع كل من العاقدين لفظ الآخر) ليتحقق رضاهما (قوله: ليتحقق رضاهما) أي ليصدر منها ما من شأنه أن يدل على الرضا إذ حقيقة الرضا غير مشروطة في النكاح لصحته مع الإكراه والهزل (۲)۔

''निकाह और तलाक़ के मज़ाक़ में सही होने की दलील नबी (सल्ल०) का फ़रमान है:

''ثلاث جدهن جدو هزلهن جد: النكاح والطلاق والرجعة''۔

''तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनमें गम्भीरता भी गम्भीरता है और हँसी मज़ाक़ भी गम्भीरता है। यह हैं: निकाह, तलाक़ और रजअत।''

इसलिए भी कि निकाह एक मौखिक घोषणा है। अत: उस पर ज़ोर-ज़बरदस्ती का प्रभाव नहीं पड़ता है।

1. बदाइउस्सनाइअ़ 7/182 2. शामी 2/271

ولأن النكاح تصرف قولي فلا يؤثر فيه الإكراه كالطلاق والعتاق (1).

जब निकाह में इकराह प्रभावी ही नहीं होगा तो इकराह के ज़रिए होने वाला निकाह और वह निकाह जो बग़ैर इकराह के हो, दोनों का हुक्म एक ही रहेगा, अर्थात दोनों क़िस्म के निकाह सहीह हो जाएंगे।

1. यह स्थिति वास्तविक रज़ामन्दी में तो शामिल नहीं होगी, लेकिन उस स्थिति में उसके निकाह के लिए हां कह देने से निकाह हो जायेगा, इसलिए कि निकाह सही होने के लिए वास्तविक रज़ामन्दी शर्त नहीं है क्योंकि निकाह मज़ाक़ में करने से और ज़ोर-ज़बरदस्ती से भी हो जाता है।

2. समझदार और बालिग़ा औरत को अपने आप पर पूरा अधिकार प्राप्त है। इस नियम का सम्बन्ध निकाह के सिलसिले में निकाह होने से पहले की परिस्थिति से है। अर्थ यह है कि उसके अधिकार और रज़ामन्दी के बिना उसके बारे में किसी को कोई घोषणा करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। निकाह के स्थापित होने पर ज़ोर-ज़बरदस्ती का कोई प्रभाव नहीं। इस नियम का सम्बन्ध उस स्थिति से है कि समझदार और बालिग़ा लड़की पर दबाव डालकर 'हाँ' कहलवा लिया जाये तो बालिग़ा के लिए हाँ कहलवाने पर उस दबाव का कोई प्रभाव नहीं होगा और यह समझा जायेगा कि उस समझदार और बालिग़ा लड़की ने बिना किसी दबाव के निकाह के लिए 'हाँ' कहा है। अत: उससे निकाह सही हो जाएगा। दबाव या ज़ोर ज़बरदस्ती का निकाह स्थापित हो जाता है।

अगर औरत से मौखिक रूप से निकाह क़ुबूल नहीं कराया गया और ज़बरदस्ती निकाहनामा पर हस्ताक्षर करा लिए गये तो उस स्थिति में निकाह

1. बदाइउस्सनाइअ 7/184

नहीं होगा।

3. सवाल 1 और 2 में जिस क़िस्म के निकाह का उल्लेख है, अगर उसमें पति औरत के बराबरी का हो, और मेहर, उतना ही मेहर या उससे अधिक तय हो तो, दम्पति के बीच सम्बन्ध स्थापित हुआ हो- या न हुआ हो दोनों परिस्थितियों में यह निकाह सही हो जाएगा।

अगर इस निकाह में पति उस औरत के बराबर का हो लेकिन मेहर, घर के और रिश्तों से कम तय किया गया हो और औरत कम पर राज़ी न हो और दोनों के बीच सम्बन्ध स्थापित न हुए हों तो यह औरत क़ाज़ी के पास केस करके अलग होने की माँग कर सकती है। यदि दोनों के बीच शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो गये हों, चाहे पत्नी के पति को सम्बन्ध स्थापित करने देने की वजह से हो, या पति ने ज़बरदस्ती सम्बन्ध स्थापित किया हो- दोनों परिस्थितियों में पत्नी के अलग होने का अधिकार समाप्त हो जायेगा। मेह्र के बारे में विस्तार यह है कि अगर अलगाव पत्नी की माँग पर, आपसी सम्बन्ध स्थापित होने से पहले हुआ हो तो पत्नी को कुछ नहीं मिलेगा।

अगर आपसी सम्बन्ध स्थापित हो गये और ये सम्बन्ध पत्नी की रज़ामन्दी से हुए तो पत्नी को मात्र तय-शुदा मेह्र मिलेगा, चाहे वह मिस्ल मेह्र से कितना ही कम हो, अगर पति ने बिना रज़ामन्दी के सम्बन्ध स्थापित किया तो पत्नी पूरे मिस्ल मेह्र की हक़दार होगी।

4. अगर इस निकाह में पति उसके बराबरी का न हो और पत्नी-पति के कमतर होने की स्थिति में उसके साथ रहने पर न तो स्पष्ट रूप से राज़ी हो, न दलील से। तो वह क़ाज़ी के पास मुक़द्दमा करके अलगाव करा सकती है। शर्त यह है कि आपस में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित न हुए हों या पति

ज़बरदस्ती सम्बन्ध स्थापित कर ले और पत्नी अपनी इच्छा से ऐसा न करने दे। अगर पत्नी ग़ैर बराबरी के बावजूद स्पष्ट रूप से पति के साथ रहने की रज़ामन्दी ज़ाहिर कर दे या दलील से अर्थात पति को शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने दे तो उसके अलगाव का अधिकार समाप्त हो जायेगा।

5. इस स्थिति में जवाब 4 के विवरण के मुताबिक़ उसके स्तर के मेहर में कमी या ग़ैर-बराबरी के आधार पर शरीअत कौंसिल या क़ाज़ी उनके बीच अलगाव कर सकते हैं या पति से तलाक़ दिलवा सकते हैं।

☆☆☆

ज़बरदस्ती शादी

डॉ. सैयद कुदरतुल्लाह बाक़वी
मैसूर, कर्नाटक

1. इस्लामी समाज के दम्पति में सुकून, व विश्वास स्वभाव में एकरूपता पर हासिल होते हैं। शरअी तौर पर मजबूर करके निकाह की इजाज़त नहीं। अत: अल्लाह तआला का इर्शाद है:

ومن آياته "أن خلق لكم من أزواجا لتسكنوا إليها وجعل بينكم مودة ورحمة إن في ذلک لايٰت لقوم يتفكرون" (۱)-

और यह उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हारे लिए तुमसे से ही जोड़ा बनाया ताकि उसके पास सुकून प्राप्त करो, और तुम्हारे बीच प्यार और रहमत पैदा की, इसमें सन्देह नहीं कि इसमें सोचने वालों के लिए निशानियां हैं।

इसीलिए समझदार बालिग़ लड़की के निकाह में शरीअत ने रज़ामंदी को बहुत महत्व दिया है:

"ولايجبر الولي بالغة ولو بكرا" (۲)-

(बालिग़ लड़की पर चाहे वह कुवांरी ही हो, वली ज़बरदस्ती नहीं करेगा)

1. सूरा रूम:21

2. हिदाया, बाबुल वली

और कुदूरी में है:

"ولايجوز للولى إجبار البالغة العاقلة"۔

''समझदार बालिग़ पर अभिभावक के लिए दबाव डालना जायज़ नहीं है।''

शरई तौर पर वली (अभिभावक) को मजबूर करने की इजाज़त नहीं है:

''अगर लड़की इंकार कर दे तो अभिभावक उसकी शादी नहीं कराएगा।''

2. शरीअत में समझदार बालिग़ लड़की को अपने आप का पूरा अधिकार हासिल है। बिना रज़ामंदी के निकाह करना जायज़ नहीं है। डराना धमकाना और धोखा देकर निकाह पर मजबूर करना हरगिज़ जायज़ नहीं। फलस्वरूप इस क़िस्म के निकाह का नतीजा बुरा होता है। और अगर गुनाह गारी पर उतर जाए तो समाज गंदा और बदनाम होगा।

3. बेजोड़ शादियों में सामाजिक सुकून समाप्त हो जाता है। लड़की को बराबरी के अधिकार के आधार पर अलगाव का हक़ हासिल होता है।

"الكفاء ة تعتبر في النسب والدين والمال" (۱)۔

(किफ़ाअत का भरोसा नसब, दीन और माल में है।)

4. बालिग़ के लिए मजबूर करने में फ़साद का सन्देह है, चाहे निकाह के बाद शारीरिक सम्बन्ध रहें या न रहें।

5. दम्पति के स्वभाव में अन्तर व नफ़रत से शरअी कौंसिल या क़ाज़ी को निकाह निरस्त करने का हक़ हासिल है।

1. बाबुन्निकाह, कुदूरी

ज़बरदस्ती की शादी

मुफ़्ती शेर अली गुजराती

1. निकाह लागू होने के सिलसिले में तो इसको रज़ामंदी ही माना जायेगा, इसलिए कि मजबूर किये जाने के बावजूद ज़ुबान से क़ुबूल करने और रज़ामंदी ज़ाहिर करने से निकाह लागू हो जाता है। (1)

वास्तविक रज़ामंदी निकाह के सही होने के लिए शर्त या ज़रूरी नहीं मालूम होती। जैसे बाप या दादा नाबालिग़ लड़के या लड़की का निकाह कर दें तो निकाह लागू हो जाता है। हालाँकि उनकी रज़ामंदी इस समय तो मालूम ही नहीं और बाद में अगर वह अपनी नापसंदीदगी प्रकट करें तब भी उनको अधिकार नहीं है।

2. अनुमति ही मानी जायेगी और निकाह लागू हो जाएगा। इसलिए कि निकाह उन मामलों में से है जिनमें गम्भीरता और मज़ाक़ दोनों बराबर हैं। ऐसे मामलों मे मजबूरी का कोई आदेश नहीं ज़ाहिर होगा।(2)

"والأصل عندنا أن كل ما يصح مع الهزل يصح مع الإكراه، لأن ما يصح مع الهزل لايحتمل الفسخ، وكل مالا يحتمل الفسخ لا يؤثر فيه الإكراه" (٣)

1. आलमगीरी 5/53 किताबुल इकराह

2. हवाला साबिक़

3. दुर्रे मुख़्तार बर शामी 9/191 किताबुल इकराह

(हमारे विचार में मौलिक बात यह है कि हर वह घोषणा जो मज़ाक़ के साथ सही हो, वह मजबूरी के साथ भी सही होती है। इसलिए कि जो मज़ाक़ के साथ सही नहीं होता है उसमें निरस्तिकरण का सन्देह नहीं होता है और जिसमें निरस्त होने की संभावना नहीं होती उसमें दबाव प्रभावी नहीं होता है।)

3. आदरणीय फ़क़ीहों ने जिन मामलों में बराबरी का भरोसा किया है उनमें से सामाजिक रूप से दोनों का कुफ़ू होना नहीं है, इसलिए किफ़ाअत की बुनियाद पर अलग करने का दावा करने का हक़ नहीं होगा।

4. क़ाज़ी या शरअ़ी कौंसिल को ज़ाहिरी तौर पर उसके निकाह के निरस्त करने का मात्र इस बुनियाद पर हक़ नहीं होगा सिवाय यह कि निकाह के निरस्त करने के शरई कारणों में से कोई कारण पाया जाये।

☆☆☆

पसन्द के विरुद्ध शादी

मौलाना मु0 याक़ूब क़ासमी
जामिया अरबिया इमदादुल-उलूम ज़ैदपुर, बाराबंकी

1. अगर बालिग़ औरत मजबूरी की हालत में ज़ुबान से अपने निकाह की इजाज़त दे दे, यद्यपि दिल से राज़ी न हो, तो शरीअत के अनुसार निकाह हो जाता है।

"لأنه يصح النكاح مع الإكراه أي الإيجاب أو القبول مكرها" (۱)۔

(इसलिए कि निकाह मजबूरी के साथ सही हो जाता है ईजाब हो या क़ुबूल हो, ज़बरदस्ती के साथ दोनों हालतों में निकाह सही हो जाता है।)

शामी एक दूसरी जगह लिखते हैं:

"إذ حقيقة الرضا غير مشروطة في النكاح لصحته مع الإكراه والهزل الخ" (۲)۔

''क्योंकि निकाह में वास्तविक रूप से रज़ामंदी शर्त नहीं है इसलिए कि निकाह ज़बरदस्ती और मज़ाक़ में भी सही हो जाता है।''

2. अगर लड़की को निकाह के लिए मारा-पीटा गया और उसने डर की वजह से निकाह के काग़ज़ात पर दस्तख़त कर दिए और दिल से उस निकाह से नाराज़ है और निकाह के बारे ज़ुबान से कोई शब्द अदा नहीं किया

1. अद्दुर्रुल मुख़्तार अला हामिश रद्दुल मुहतार 2/413

2. शामी 2/373

तो ऐसी सूरत में निकाह लागू न होगा जैसा कि तलाक़नामा पर ज़बरदस्ती दस्तख़त करा लेने से तलाक़ लागू नहीं होती। (1)

बालिग़ औरत का ज़बरदस्ती निकाह कर देने से निकाह लागू नहीं होता है। जैसा कि फ़िक़्ह की किताबों में और नबी (सल्ल0) की हदीसों में लिखा है:

"ولا تجبر البالغة البكر على النكاح لانقطاع الولاية بالبلوغ الخ" (٢)-

''बालिग़ लड़की पर निकाह के सिलसिले में ज़बरदस्ती न की जाये, क्योंकि लड़की के बालिग़ हो जाने की वजह से अभिभावकत्व समाप्त हो जाती है।''

फ़तावा हिन्दिया में लिखा है:

"لايجوز نكاح أحد على بالغة صحيحة العقل من أب أو سلطان بغير إذنها بكراً كانت أو ثيبا، فإن فعل ذلک فالنكاح موقوف على إجازتها فإن أجازته جاز وإن ردته بطل" (٣)-

''बाप-दादा और बादशाह में से किसी के लिए बालिग़ समझदार का निकाह करना उसकी इजाज़त के बिना सही नहीं। बालिग़ लड़की कुवांरी हो, चाहे शौहर दीदा हो। अगर किसी ने निकाह कर दिया तो निकाह बालिग़ की इजाज़त पर आधारित होगा, अगर उसने इजाज़त दे दी तो निकाह होगा अन्यथा अवैध होगा।''(1) नबी (सल्ल0) की हदीसों में ज़बरदस्ती निकाह के लागू न होने के बारे में विभिन्न हदीसें मौजूद हैं:

"جاء ت امرأة ولى رسول الله ﷺ فقالت: إن أبى أنكحني رجلا وأنا

1. फ़तावा आलमगीरिया 1/63

2. दुर्रे मुख़्तार 2/210

3. आलमगीरी 2/13

كارهة فقال لأبيها: لانكاح اذهبي فانكحي من شئت" (۱)۔

''एक औरत ने हुज़ूर सल्ल0 के पास हाज़िर होकर निवेदन किया कि मेरे माँ-बाप ने मेरी शादी एक मर्द के साथ कर दी है हालाँकि मै उसको पसंद नहीं करती, तो उसके बाप से आप (सल्ल0) ने इर्शाद फ़रमाया: कि तेरे निकाह का भरोसा नहीं, तू जा और जिससे चाहे निकाह करे।''

बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अबू हुरैरा रज़ि0 की रिवायत है:

"**لاتنكح الأيم حتى تستأمر ولاتنكح البكر حتى تستأذن**" (۲)۔

''बे शौहर औरत का निकाह मशविरा के बिना और कुवांरी का निकाह इजाज़त के बिना न किया जाए।''

हदीस इस मामले में बिल्कुल स्पष्ट है कि सय्यिबा (शौहर दीदा) और कुवांरी, किसी को मजबूर करना शरीअत में सही नहीं है, अबू-दाऊद की एक रिवायत में हज़रत इब्ने अब्बास रजि0 से रिवायत है:

"**أن جارية أتت النبي ﷺ فذكرت أن أباها زوجها وهي كارهة فخيرها النبى ﷺ**" (۳)۔

''एक कुवांरी लड़की हुज़ूर (सल्ल0) के पास आई और उसने कहा कि उसके बाप ने उसकी शादी उसकी पसन्द के विरुद्ध कर दी है तो हुज़ूर अकरम (सल्ल0) ने उसको निकाह के मामले में अधिकार दिया।''

मिश्कात शरीफ़ में हज़रत इब्ने अब्बास से रिवायत है:

"**أن النبي ﷺ "رد نكاح ثيب وبكر أنكحهما أبوهما كارهتان**" (۴)۔

1. व रवाहु 2/294
2. बुख़ारी 2/771
3. अबू दाऊद शरीफ़ पृ0 285,286
4. मिरकात़ शरह मिशकात 6/208,209

नबी (सल्ल0) ने एक सय्यिबा (शौहरदीदा) और एक कुवांरी का निकाह रद्द फ़रमा दिया जिनके मां-बाप ने उनकी पसन्द के विरुद्ध ज़बरदस्ती उनका निकाह कर दिया था।''

3. पूछी गई स्थिति में चूंकि बालिग़ लड़की की शादी ग़ैर-कुफ़ू में हुई है, इसलिए उसको कुफ़ू में शादी न होने की वजह से अलग होने का अधिकार हासिल होगा। क्योंकि जम्हूर के विचार में किफ़ाअत अभिभावकों और बालिग़ लड़की दोनों का हक़ है।

''ولكن الكفاء ة عند الجمهور حق للمرأة والأولياء'' (۱)-

''लेकिन किफ़ाअत जम्हूर के नज़दीक लड़की और अभिभावकों दोनों का हक़ है।''

4. उपरोक्त निकाह में अगर शारीरिक सम्बन्ध स्थापित हो गए तो फिर बराबरी का अधिकार व अलगाव के अधिकार लड़की को हासिल न होंगे। हां अगर इस निकाह में शारीरिक सम्बन्ध स्थापित नहीं हुए हैं, और लड़की अब तक इस निकाह से बेपरवाही प्रकट करती है तो ऐसी सूरत में लड़की को बराबरी का अधिकार व अलग होने का अधिकार दोनों हासिल होंगे।

5. ऐसी हालत में क़ाज़ी उस निकाह को आवश्यकता पड़ने पर निरस्त कर सकता है।

☆☆☆

1. ज़ादुल मआ़द 5/161

अभिभावकत्व व्याख्या व विश्लेषण

मौलाना शम्स पीरज़ादा

यहां निकाह के अभिभावकत्व पर बहस चल रही है इस लिए अभिभावकत्व की अन्य क़िस्मों के उल्लेख की आवश्यकता नहीं है।

1. क़ुरआन करीम में निकाह के सिलसिले में कहीं वली (अभिभावक) का नाम नहीं आया है। लेकिन कई आयतों में सम्बोधन (खिताब) औरतों के अभिभावकों से है जो उनके क़रीबी होते थे और उस समय के समाज में आम रिवाज के मुताबिक़ औरतों का निकाह कर दिया करते थे। अपना वली (अभिभावक) ख़ुद होने के लिए समझदार और बालिग़ होना काफ़ी है।

2. शरीअत ने हर एक समझ रखने वाले बालिग़ को चाहे वह मर्द हो या औरत, निकाह करने का अधिकार दिया है। फ़िक़्ह (इस्लामी क़ानून) के माहिरों का मानना है कि नाबालिग़ लड़की या लड़के का निकाह करने का हक़ उनके अभिभावकों को है लेकिन क़ुरआन व सुन्नत से इस पर कोई स्पष्ट दलील (तर्क) नहीं है, क़ुरआन की आयत (यहाँ तक कि.....उम्र तक पहुंच जायें। (1).....इस मामले में घोषणा करती है कि निकाह की उम्र बालिग़ होने की उम्र और निकाह की ज़रूरत बालिग़ मर्द और औरत को ही होती है। इसलिए नाबालिग़ मर्द या औरत के निकाह का सवाल ही नहीं पैदा होता। जहां तक हज़रत मां आइशा (रज़ि०) की कम उम्र में निकाह का तर्क है तो

1. अल बक़रः 235, सूरः नूरः 32

एक तो हज़रत आइशा की निकाह के समय की उम्र के बारे में मतभेद है। दूसरे, यह मामला आप (सल्ल०) से सम्बन्धित है जो आप (सल्ल०) के लिए ख़ास तौर पर वैध रहा होगा। तीसरे, यह सूर: निसा के उतरने से पहले की घटना है जिसमें बालिग़ होने को निकाह की उम्र बताया गया है।

जहाँ सूर: तलाक़ की आयत ''والّٰئی لم یحضن'' (1) (जिनको माहवारी न आती हो) से नाबालिग़ के निकाह की दलील का सम्बन्ध है, वह सही नहीं है। क्योंकि इसमें ऐसी तलाक़-शुदा औरतों की इद्दत (तलाक़ के बाद औरतों के लिए तीन माह का अन्तराल) बयान की गई है जिनको हैज़ (माहवारी) न आई हो। हैज़ का न आना किसी बीमारी के कारण हो सकता है। अत: इससे तलाक़-शुदा का नाबालिग़ होना साबित नहीं होता। मान लें कि किसी ने नाबालिग़ लड़की से निकाह कर लिया तो उससे वह यौन सम्बन्ध क़ायम नहीं कर सकेगा क्योंकि इसकी आज्ञा न तो शरीअत देती है और न विवेक व प्रकृति। फिर अगर वह नाबालिग़ को तलाक़ देता है तो यौन सम्बन्ध स्थापित न होने के कारण उसकी कोई इद्दत न होगी जैसा कि सूर: अहज़ाब में बयान किया गया है:

जब तुम मोमिन औरतों से निकाह करो और फिर उन्हें हाथ लगाने से पहले तलाक़ दे दो तो तुम्हारे लिए उन पर कोई इद्दत वाजिब नहीं है, जिसको तुम गिनो। (2)

जब कि सूर: तलाक़ की इस आयत (जिनको हैज़ न आया हो) में उन औरतों की इद्दत जिनको हैज़ न आया हो, तीन माह बयान की गई है। इससे पता चला कि यह आयत नाबालिग़ लड़की के लिए नहीं है। इसलिए

1. मुस्लिम किताबुन्निकाह

2. मोअत्ता किताबुन्निकाह

यह आयत नाबालिग़ लड़कियों के निकाह के लिए दलील नहीं बन सकती।

(क) अभिभावकत्व (वलायत) के बारे में लड़की और लड़के में यह अन्तर है कि बालिग़ लड़का अपना निकाह अभिभावक के वास्ते के बिना कर सकता है। लड़की भी अभिभावक के सहारे के बिना अपना निकाह स्वयं कर सकती है लेकिन लड़की को ग़ैरत की वजह से ऐसा करना ठीक नहीं है। आम तरीक़ा भी यही है कि लड़की का अभिभावक उसकी अनुमति से उसका निकाह कर दे।

(ख) निकाह के बारे में समझदार बालिग़ लड़की को स्वयं अपने आपका अधिकार है। वह अपनी इच्छा से निकाह कर सकती है, अभिभावक की अनुमति आवश्यक नहीं है। अगर अभिभावक की रज़ामन्दी के बिना लड़की ने स्वयं निकाह कर लिया तो शरअ़ी तौर पर वह स्थापित होगा और लड़की गुनहगार नहीं होगी। हाँ! अभिभावक की बिल्कुल परवाह न करना कोई अच्छी बात नहीं है। क़ुरआन व सुन्नत से उसका सबूत इस तरह मिलता है। क़ुरआन करीम में फ़रमाया गया है: फिर जब वह अपनी इद्दत पूरी कर लें तो अच्छे ढंग से वह जो कुछ अपने लिए करें उसका तुम पर कोई गुनाह नहीं''(1)

इस आयत से औरत का स्वयं अपना निकाह करने का अधिकार साबित होता है।

दूसरी जगह फ़रमाया गया है:

फिर अगर उसने (दो बार के बाद) तलाक़ दे दी तो अब यह औरत उसके लिए हलाल (वैध) नहीं जब तक कि वह दूसरे पति से निकाह न कर

1. अल बुख़ारी, किताबुन्निकाह

ले।(1)

इस आयत में निकाह का सम्बोधन औरत की तरफ़ है जो इस बात की स्पष्ट दलील है कि औरत को अपना निकाह करने का स्वयं अधिकार है।

तीसरी जगह कहा गया है:

फिर अगर वह भी उसको तलाक़ दे दे तो उन दोनों पर एक दूसरे की तरफ़ पलटने में कोई पाप नहीं। शर्त यह है कि वे समझते हों कि वे अल्लाह की सीमाओं को नहीं तोड़ेंगे।''(2)

यह आयत भी इस बात की दलील है कि मर्द औरत अभिभावक के बिना भी ईजाब व क़ुबूल कर सकते हैं। अत: चौथी जगह फ़रमाया गया:

''और जब तुम औरत को तलाक़ दो और वह अपनी इद्दत पूरी कर ले तो फिर उन्हें अपने पति से निकाह करने से न रोको जबकि वह ठीक ढंग से आपसी रज़ामन्दी से मामला तय कर लें''(3)

इस आयत में भी निकाह का सम्बोधन औरतों की तरफ़ है। अभिभावक को, जो कि रस्म व रिवाज के अनुसार औरतों का निकाह कर दिया करते थे, मना किया गया है, कि औरतों को अपने निकाह से न रोको जबकि वे अच्छे तरीक़े से अपने पूर्व पतियों से आपसी रज़ामन्दी से निकाह करना चाहें।

इस पर यह एतेराज़ किया जाता है कि इन आयतों में तलाक़शुदा और बेवा औरतों का हुक्म बयान किया गया है। परन्तु एक तो आयत उतरने की परिस्थितियों से आदेश के सामान्य होने पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसके अतिरिक्त कुँवारी लड़कियों के निकाह का आदेश अलग से बयान नहीं हुआ

1. नसाई किताबुन्निकाह
2. अल तिर्मिज़ी बाब-निकाह
3. अल तिर्मिज़ी बाबुन्निकाह

है। इसलिए औरत चाहे कुँवारी हो या तलाक़शुदा या बेवा---उसको अपनी इच्छा के मुताबिक़ निकाह करने का अधिकार है। अभिभावक को न तो ज़ोर-ज़बरदस्ती का अधिकार है और न उसे अपनी इच्छा से निकाह करने से रोकने का।

अभिभावक के पक्ष में सूरः नूर की आयत और तुममें जो मुजर्रद (अकेले) हों उनके निकाह कर दो।''(1) भी प्रस्तुत की जाती है लेकिन मुजर्रद (अकेले) में मर्द और औरत दोनों शामिल हैं तो क्या मर्द अभिभावक के बिना अपना निकाह नहीं कर सकता? अगर कर सकता है तो औरत क्यों नही कर सकती? फिर यह आयत समाज को सम्बोधित करती है, न कि अभिभावक को। इसके अतिरिक्त यह आयत न तो अभिभावक को दबाव डालने का अधिकार देती है और औरत के निकाह के अधिकार को औरत की तरफ़ स्थानान्तरित करती है।

और जहाँ तक हदीस का सम्बन्ध है। उसमें विस्तार से और साफ़तौर से समझाया गया है कि कुँआरी का निकाह उसकी अनुमति के बिना नहीं किया जायः

''सय्यिबा (तलाक़शुदा या बेवा) का निकाह उसकी रज़ामन्दी के बिना न किया जाए और कुँवारी का निकाह उसकी अनुमति के बिना न किया जाए।(2)

जब कुँवारी की अनुमति आवश्यक क़रार दी गई तो अभिभावक की रज़ामन्दी कहाँ आवश्यक हुई? अगर अभिभावक की रज़ामन्दी को भी ज़रूरी क़रार दिया जाये तो सवाल यह पैदा होता है कि अगर कुँवारी को एक रिश्ता

1. इब्ने माजा किताबुन्निकाह

2. बुख़ारी किताबुन्निकाह

पसन्द हो और अभिभावक उस पर राज़ी न हों तो क्या उसको निकाह से रोक दिया जायेगा? अगर रोक दिया जाएगा तो इसका अर्थ यह हुआ कि अभिभावक की रज़ामन्दी के बिना कुँवारी का निकाह हो ही नहीं सकता। ऐसी स्थिति में उसकी अनुमति या रज़ामन्दी ही निरर्थक हो जाती है। क्योंकि अभिभावक राज़ी होगा तो कुँवारी राज़ी नहीं होगी और अगर कुँवारी राज़ी हो तो अभिभावक राज़ी नहीं होगा। ज्ञातव्य रहे कि इस्लाम औरतों के लिए ऐसी कठिनाइयाँ पैदा नहीं करना चाहता जिसके परिणाम स्वरूप वे निकाह से वंचित रहें और इस महरूमी (वंचित होने) के उदाहरण आज समाज में देखे जा रहे हैं। इसलिए अभिभावक की रज़ामन्दी की शर्त विवेक और मक़सद के विरुद्ध है।

हदीस के संकलन इमाम मालिक की मोवत्ता में हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत नक़ल की गई है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया:

''तलाक़शुदा और बेवा (सय्यिबा) अपने मामले में अभिभावक के मुक़ाबले अधिक अधिकार रखती है। कुँवारी से उसके मामले में अनुमति ली जाये, और उसकी अनुमति उसकी ख़ामोशी है।''(1)

यह हदीस घोषणा करती है कि तलाक़शुदा और बेवा को निकाह के मामले में अधिकार है। वह अभिभावक की रज़ामन्दी की पाबन्द नहीं है। रही कुँवारी तो वह अधिक शर्मीली होती है इसलिए उसकी ख़ामोशी को उसकी अनुमति माना गया। इससे स्पष्ट है कि अभिभावक को अपनी इच्छा और पसन्द उस पर थोपने का अधिकार नहीं है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के समाज की घटनाओं से भी बात साबित होती है। बुख़ारी की हदीस है कि:

1. नसाई किताबुन्निकाह अल तिर्मिज़ी, बाबुन्निकाह

''ख़न्सा बिन्त ख़िज़ाम से नक़ल किया गया है कि वह सय्यिबा (तलाक़शुदा या बेवा) थीं और उनके पिता ने उनका निकाह कर दिया जो उन्हें पसन्द नहीं था। वह रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सेवा में उपस्थित हुई तो आपने उनका निकाह रद्द कर दिया।''(1)

दूसरी घटना वह है जिसे नसाई ने सही सनदों (प्रमाण) के साथ हज़रत आइशा से नक़ल की है:

हज़रत आइशा से रिवायत नक़ल की गई है कि एक औरत उनके पास आई और कहने लगी कि मेरे बाप ने मेरा निकाह अपने भतीजे के साथ कर दिया ताकि मेरे द्वारा उसकी दरिद्रता को दूर करे जबकि मैं उसे पसन्द नहीं करती। हज़रत आइशा (रज़ि०) ने कहा नबी (सल्ल०) के आने तक बैठी रहो। फिर जब नबी (सल्ल०) का शुभागमन हुआ तो उसने आपको (सल्ल०) यह घटना सुनायी। आपने उसके पिता को बुला भेजा और औरत को अधिकार दिया कि निकाह जारी रखे या तोड़ दे। औरत ने कहा: ऐ अल्लाह के रसूल! मेरे पिता ने मेरा जो निकाह कर दिया है उसे मैं जारी रखती हूँ। वास्तव में मैं जानना चाहती थी कि क्या औरतों को अपने निकाह का अधिकार है? (2)

यह घटना कुँवारी से सम्बन्धित है क्योंकि इमाम नसाई ने इसे 'कुँवारी का निकाह उसका बाप उसकी रज़ामन्दी के बिना कर दे' के शीर्षक के तहत रखा है। इस हदीस से पता चला कि अगर बाप (अभिभावक) ने कुँवारी औरत का निकाह उसकी अनुमति के बग़ैर कर दिया तो कुँवारी को अधिकार है कि चाहे तो उसे तोड़ दे।

इन हदीसों के मुक़ाबले में कुछ ऐसी हदीसें प्रस्तुत की जाती हैं जो

1. अल तिर्मिज़ी बाबुन्निकाह

2. तिर्मिज़ी बाबुन्निकाह

ऊपर पेश की गई हदीसों के विपरीत हैं। इन आगे आने वाली हदीसों में दो तिर्मिज़ी की हैं और एक इब्ने माजा की:

1. ''रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया: अभिभावक के बिना निकाह नहीं।'' (1)

2. ''जिस औरत ने अपना निकाह अपने अभिभावक की अनुमति के बिना कर लिया तो उसका निकाह बातिल है। उसका निकाह बतिल है, उसका निकाह बतिल है, फिर यदि मर्द ने उसके साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित किया तो उसे हलाल कर लेने के कारण औरत के लिए मेह्र है। अगर अभिभावकों के बीच मतभेद हो जाए तो शासक (सुलतान) उसका अभिभावक है, जिसका कोई अभिभावक नहीं।'' (2)

3. रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया : औरत, औरत का निकाह न करे और औरत स्वयं अपना निकाह भी न करे क्योंकि (ज़ानिया) व्याभिचारिणी अपना निकाह स्वयं करती है।'' (3)

इन हदीसों को रिवायत और दिरायत दोनों हिसाब से जायज़ा (विश्लेषण) के बाद कमज़ोर (ज़ईफ) क़रार दिया गया है। बताया गया है कि ये हदीसें अभिभावक के सिलसिले में क़ुरआन की आयत से टकराती है। इस लिए इनको स्वीकार नहीं किया जा सकता।

जहाँ तक फिक्ह के इमामों का सम्बन्ध है; इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) अभिभावक की अनुमति को बालिग़ औरत के निकाह के लिए शर्त नहीं मानते। लेकिन इमाम शाफ़ई के अनुसार अभिभावक की अनुमति के बग़ैर

1. इब्ने माजा किताबुन्निकाह

2. मुस्लिम ला, तैयबजी पृ0 47

3. इस्लामी क़ानूनों का संकलन पाकिस्तान 1/100

निकाह स्थापित नहीं होता। इमाम मालिक अभिभावक की अनुमति सभी निकाहों के लिए आवश्यक घोषित करते हैं न कि निकाह के वैध होने के लिए। इमाम अहमद बिन हन्बल की घोषणा के अनुसार अभिभावक की अनुमति निकाह के लिए शर्त है। जहाँ तक मुस्लिम पर्सनल लॉ का सम्बन्ध है औरत के निकाह करने में स्वतन्त्रता को इस तरह बयान किया गया है:

23 (3) (अ) हनफ़ी और इस्माईली शिया मसलक के अन्तर्गत जब औरत मानसिक रूप से परिपक्व और बालिग़ हो जाती है तो उसके अपने आपके सिलसिले में उसे अधिकार है।

(ब) शाफ़ई और मालिक के मसलक के फिक़्ह में तलाक़शुदा या बेवा अपने बारे में फ़ैसला करने का हक़ रखती है। लेकिन जो कुँवारी है, उसको अधिकार नहीं है। एक बालिग़ कुँवारी का उसके पिता द्वारा उसकी अनुमति के बग़ैर किया गया निकाह शाफ़ई कानून के अन्तर्गत वैध नहीं है।(1)

निकाह के अभिभावकत्व के मसअले पर डा० तन्ज़ीलुर्रहमान ने संकलित इस्लामी क़ानून में विस्तारपूर्वक और दलील के साथ बहस की है और अन्त में अपना विश्लेषण प्रस्तुत किया है:

ऊपर की बहस की रौशनी में हम इन नतीजों पर पहुंचे हैं:

''निकाह के समय समझौते के असली पक्षधर मर्द और औरत हैं न कि उनके अभिभावक। इसलिए एक बालिग़ और परिपक्व औरत को यह अधिकार होना चाहिए कि वह बिना अभिभावक के अपना निकाह करने का अधिकार रखती है।(2)

बालिग़ लड़की के निकाह के लिए अभिभावक की रज़ामन्दी की शर्त

1. मिश्कात 2/267, बुख़ारी

2. मिश्कात 2/267, बुख़ारी

बताने वाले कहते हैं कि अगर यह अधिकार कुँवारी को हासिल हो तो वह उल्टे-सीधे फ़ैसले करेगी, लेकिन मौजूदा ज़माने में तो लड़की के बाप के बारे में भी यह बात देखने में आती है कि वह अपनी बिरादरी के बाहर निकाह कर देने के लिए तैयार नहीं होते जिसकी वजह से औरतों की शादियाँ नहीं हो पातीं। अत: अभिभावक को अधिकार देकर लड़कियों को बेबस करना होगा। शरीअत का मक़सद हरगिज़ यह नहीं हो सकता।

शरीअत ने जिस तरह मर्द को अपनी इच्छानुसार निकाह करने की अनुमति दी है उसी तरह औरत को भी अपनी इच्छानुसार निकाह करने की इजाज़त दी है। अभिभावक को यह अधिकार नहीं दिया है कि वह अपनी पसन्द उस पर थोपे। यह अवश्य है कि वह अभिभावक के माध्यम से या किसी मर्द को अपना वकील बनाकर निकाह करे। औरत के सम्मान और शर्म का तक़ाज़ा अवश्य है कि वह सीधे तौर पर अभिभावक के बिना अपना निकाह न करे।

(ग) बालिग़ और परिपक्व लड़की ने अगर अपना निकाह अभिभावक की अनुमति और रज़ामन्दी के बिना कर लिया और जब अभिभावक को इस निकाह के बारे में पता चला तो उसने इस निकाह से सहमति जताई या उस पर आपत्ति की तो शरीअत के अनुसार उन दोनों परिस्थितियों में उसका निकाह स्थापित हो गया।

(3) समझदार परिपक्व और बालिग़ लड़की के स्वयं निकाह कर लेने की स्थिति में अभिभावकों को उस निकाह पर एतेराज़ करने का अधिकार नहीं है। अभिभावक उस निकाह को क़ाज़ी के माध्यम से निरस्त नहीं कर सकते। फ़िक़्ह के जिन माहिरों ने किफ़ाअत 'बराबरी' मेह्र में कमी के कारण

अभिभावकों के एतेराज़ का हक़ माना है उन्होंने क़ुरआन व सुन्नत से कोई दलील प्रस्तुत नहीं की है। किफ़ाअत (लड़की के बराबरी का होना) फिक़्ह के माहिरों की खोज है और मेहर औरत का अधिकार है, अगर वह कम पर राज़ी है तो किसी को उस पर एतेराज़ का क्या अधिकार है?

(4) अभिभावक की निगरानी में रहने वाली लड़की का निकाह, उसने उसकी नाबालिग़ उम्र में कर दिया लेकिन लड़की उस निकाह से सहमत और खुश नहीं है तो वह इस निकाह को निश्चित रूप से निरस्त करा सकती है। एक तो नाबालिग़ का निकाह करने के लिए कोई जायज़ वजह नहीं है जैसा कि ऊपर बयान किया जा चुका। जब बालिग़ लड़की की अनुमति को शरीअत ने आवश्यक क़रार दिया है तो नाबालिग़ लड़की को उसके बालिग़ होने के बाद अधिकार से वंचित करने का क्या अर्थ? अगर बाप-दादा ने भी नाबालिग़ लड़की का निकाह कर दिया हो तो उसके बालिग़ हो जाने के बाद उस निकाह को निरस्त करने का अधिकार लड़की को है और बाप-दादा को यह अधिकार नहीं है कि वह अपनी पसन्द उस पर थोपें। निकाह के बाद निर्वाह लड़की को करना है न कि बाप-दादा को, फिर उसकी पसन्द के विपरीत उसे किस तरह किसी के निकाह में दिया जा सकता है?

(5) बालिग़ होने के बाद निकाह को तोड़ने या जारी रखने का लड़की को अधिकार उस समय तक प्राप्त रहता है जब तक कि वह मामले को अच्छी तरह समझ न ले या जब तक पति से शारीरिक सन्बन्ध न स्थापित कर ले।

(6) अगर अभिभावक ने लड़की का निकाह उसकी रज़ामन्दी के बिना कर दिया तो औरत उस निकाह को स्वयं निरस्त कर सकती है, क़ाज़ी (जज)

के फ़ैसले की ज़रूरत नहीं हैं।

(7) अभिभावक औरत के सबसे क़रीबी लोग हैं, जिनको अरबी में ''उस्बात'' कहते हैं। बाप फिर बेटा, फिर भाई आदि।

(8) जब शरीअत के अनुसार अभिभावक की अनुमति बालिग़ औरत के लिए शर्त नहीं है तो यह सवाल पैदा ही नहीं होता कि किसी एक अभिभावक की अनुमति काफ़ी या तमाम अभिभावकों की सहमति आवश्यक होगी।

☆☆☆